

ब्रह्मसूत्राणि ।

भाषाटीकयासमेतानि ।

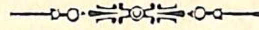


खेमराज श्रीकृष्णदास,

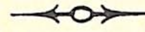
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.

ॐ

ब्रह्मसूत्राणि ।



श्रीमन्महर्षिवर्यव्यासप्रणीतानि.



श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितया
ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकाभाषाटीकया
समेतानि ।



तानि च

खेमराज श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितानि ।

चैत्र संवत् १९६०, शके १८२५.

भूमिका।



सर्व महाशयोंको विदित होवे कि, इस महादुःख सागररूप-संसारके विषै धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इस चतुर्विध पुरुषार्थकी इच्छा सर्वजन करते हैं तिनके विषैभी जो अतिउत्तम संस्कारवाले भव्यपुरुष हैं वे अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैव इस त्रिविधतापरूप दुःखकी अत्यन्त निवृत्तिके अर्थ परमपुरुषार्थरूप मोक्षकी इच्छा करते हैं और अत्यन्त दुःखनिवृत्तिरूप मोक्ष वेदान्तशास्त्रके श्रवण, मनन, निदिध्यासनादि साधनोंसे होता है और संस्कृत वेदान्तशास्त्रके श्रवण, मनन, निदिध्यासनादि साधनोंमें व्याकरणादि शास्त्रके संस्काररहित पुरुषोंकी प्रवृत्ति होवै नहीं ऐसा विचार करके श्रीमन्महाराजाधिराज छत्रपति जोधपुर महाराजके पुराने दिवान श्रीयुत मुहुतोपाह्वय पूर्णचन्द्रात्मजभगवद्भक्तिविवेकादि सत्साधनसंपन्न सारासारविचार कठिन कुठारमारविदारिताशेष महामोहान्धकार वैश्यजनसमूहाग्रगणनीय श्रीयुत मुहुता गणेशचंदजीकी प्रार्थनासे संवत् १९५० में श्रीमच्छंकराचार्य भगवत्पूज्यपादकृत भाष्यके अनुसार यह ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकानाम श्रीमद्वेदव्यासभगवत्प्रणीत ब्रह्मसूत्रोंकी भाषाटीका बनायके बम्बईमें प्रसिद्ध खेमराज श्रीकृष्णदासका अतिश्रेष्ठ 'श्रीवेङ्कटेश्वर' छापाखाना तिसमें छपायके सर्वसज्जनोंके अगाडी मैंने निवेदित करी थी. परंतु तिस प्रथम आवृत्तिमें हमारे दृष्टिदोषसे वा छापनेवालेके दृष्टिदोषसे कहीं २ अक्षर मात्राकी अशुद्धि रही थी तिस अशुद्धिको निकालके यह द्वितीय आवृत्ति बहुत शुद्ध करी है और प्रथम आवृत्तिमें द्वादशसूत्रोंके पदच्छेद मैंने किये थे पीछे ग्रंथवृद्धिके भयसे अगाडी सूत्रोंके पदच्छेद नहीं करे अब बहुतसे सज्जनपुरुष कहने लगे कि सर्वसूत्रोंके पदच्छेद होवै तो बहुत उपयोगी होवे इससे इस द्वितीय आवृत्तिमें सर्वसूत्रोंके पदच्छेद कर दिये हैं सो भव्यपुरुष देखेंगे और भूलचूक माफ करेंगे. यहभी ध्यान रहे कि, इसग्रंथका पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम) यन्त्रालयाध्यक्ष सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास महोदयको दे दिया है। अन्यमहाशय छापनेका इरादा न करें इत्यलम्॥

श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगीन्द्र.

श्रीः।

व्यासाधिकरणार्थानुक्रमप्रदर्शनम्।

प्रथमोऽध्यायः १.

इति प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः २.

प्रथमः पादः १.

द्वितीयः पादः २.

तृतीयोऽध्यायः ३.

प्रथमः पादः १.

चतुर्थः पादः ४.

इति चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥



"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालय,

बंबई.

ॐ

अथ ब्रह्मसूत्राणि.

भाषाटीकासहितानि ।

प्रथमोऽध्यायः १.

प्रथमः पादः ।

प्रणम्य सच्चिदानंदं गुरुं चाज्ञाननाशकम् ॥
सारार्थं ब्रह्मसूत्राणां कथयामि यथामति ॥ १ ॥

ॐ अथातो ब्रह्मजिज्ञासा ॥ १ ॥

इस सूत्रके अथ १ अतः २ ब्रह्मजिज्ञासा ३ यह तीन पद हैं अथ शब्दका आनंतर्य अर्थ है। अतः शब्दका हेतु अर्थ है ॥ ब्रह्मजिज्ञासा शब्दका अर्थ ब्रह्मको विषय करनेवाली इच्छा है ॥ कर्तव्य पदका अध्याहार करना ॥ तथाच ॥ यस्मात् अग्निहोत्रादिकोंका फल जो स्वर्गादिक सो अनित्य है तस्मात् धर्मजिज्ञासाके अनंतर अथवा साधनसंपत्तिके अनंतर ब्रह्मकी जिज्ञासा इच्छा करनी अथवा ब्रह्मका विचार करना यह सूत्रका सारार्थ है ॥ १ ॥

प्रथम सूत्रमें कहा है कि ब्रह्मकी जिज्ञासा मुमुक्षु पुरुषको करने योग्य है तिस ब्रह्मका लक्षण क्या है अतः भगवान् सूत्रकार ब्रह्मका तटस्थ लक्षण कहते हैं ॥

जन्माद्यस्य यतः ॥ २ ॥

इस सूत्रके जन्मादि १ अस्य २ यतः ३ यह तीन पद हैं ॥ जन्म शब्दका अर्थ उत्पत्ति है । आदि शब्दसे स्थिति और प्रलय गृहीत होते हैं ॥ अस्य इस पदका अर्थ नामरूपात्मक संपूर्ण जगत् है ॥ यतः यह कारणका निर्देश है ॥ तथाच ॥ नामरूपात्मक संपूर्ण जगत्का जन्म स्थिति प्रलय । यतः । जिस सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् कारणरूप परमेश्वरसे होते हैं । सो ब्रह्म है । यह सूत्रका सारार्थ है और इसी अर्थको "यतो वा इमानि भूतानि जायंते येन जातानि जीवंति यत्प्रयंत्यभिसं-विशंति" ॥ यह श्रुति भी कहती है । इसका अर्थ यह है कि जिस कारण रूप परमेश्वरसे यह भूतप्राणी उत्पन्न होते हैं ॥ और जिस करके जीवते हैं और जिसको प्राप्त होके लीन होते हैं सो ब्रह्म हैं ॥ २ ॥

पूर्व जो कहा कि नामरूपात्मक सर्व जगत्का कारण सर्वशक्तिमान् ब्रह्म है इसी अर्थको दृढ करते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

शास्त्रयोनित्वात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रका शास्त्रयोनित्वात् १ यह एकही समस्त[1] पद है ॥ अनेक विद्याका स्थानभूत और सर्व अर्थका प्रकाशक जो महान् ऋग्वेदादि शास्त्र तिसका योनि कारण ब्रह्म है ॥ ऐसे ऋग्वेदादि शास्त्रका सर्वज्ञ ब्रह्मके विना अन्य कोईभी कारण नहीं होसकता ॥ अथवा ऋग्वेदादि शास्त्रही ब्रह्मसद्भावमें (योनि) कारण अर्थात् प्रमाण है ॥ ३ ॥

ब्रह्ममें वेद प्रमाण नहीं होसकता काहेतें वेद यज्ञादि क्रियाकों तथा उपासनाकों कहता है और ब्रह्म सिद्धवस्तु है तिसकों वेद प्रतिपादन करे नाँहि इस पूर्वपक्षकों दूर करते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

तत्तु समन्वयात् ॥ ४ ॥

इस सूत्रके तत् १ तु २ समन्वयात् ३ यह तीन पद हैं ॥ तु शब्दका

---

१ व्याकरण रीतिसे समास किये पदको समस्त कहते है ।

अर्थ पूर्वपक्षकी निवृत्ति है ॥ तत्शब्दका अर्थ जगत्की उत्पत्ति स्थिति लयका कारण सर्व शक्तिमान् ब्रह्म है ॥ समन्वयात् इस पदका अर्थ सर्व वेदांत वाक्योंका तात्पर्यसे ब्रह्ममें संबंध है ॥ तथाच ॥ तत् जगत्की उत्पत्ति स्थिति लयका कारण सर्व शक्तिमान् ब्रह्म वेदांत शास्त्रसे प्राप्त होता है ॥ कथं ॥ कैसे समन्वयात् सर्व वेदांत वाक्योंका तात्पर्य करके ब्रह्ममें संबंध होनेतें ॥ ४ ॥

सांख्यशास्त्रवादी त्रिगुणात्मक अचेतन प्रधान प्रकृतिकों जगत्का कारण मानते हैं तिनका मत दूर करते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

ईक्षतेर्नाशब्दम् ॥ ५ ॥

इस सूत्रके ईक्षतेः १ न २ अशब्दम् ३ यह तीन पद हैं ॥ ईक्षतेः इस पदका अर्थ (ईक्षण) संकल्प है ॥ न शब्दका अर्थ निषेध है ॥ अशब्दम् इस पदका अर्थ इहां प्रधान है ॥ तथाच अशब्द प्रधान प्रकृति जगत्का कारण । न नहीं है कथम्—ईक्षतेः । तदैक्षत बहुस्यां प्रजायेय इत्यादि श्रुतिमें ईक्षणका श्रवण होनेतें ईक्षण चेतनमें होता है अचेतन प्रधानमें नहीं हो सकता श्रुतिका अर्थ यह है । तत् । सत् शब्द वाच्य कारण ब्रह्म ईक्षण करता भया ॥ मैं बहु प्रपंच रूप करके उत्पन्न होओं इति ॥ ५ ॥

पूर्व जो कहा की अचेतन प्रधान जगत्का कारण नहीं हो सकता है॥ईक्षणका श्रवण होनेतें। सो ईक्षण जैसे। तत्तेजऐक्षत। सो तेज ईक्षण करता भया इति श्रुत्यर्थः ॥ इस श्रुतिवाक्यमें उपचारमात्रसे अर्थात् अमुख्यतासे अचेतन तेजमें ईक्षण प्रतीत होता है तैसे अचेतन प्रधान मेंभी हो सकता है इस शंकाको दूर करते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

गौणश्चेन्नात्मशब्दात् ॥ ६ ॥

इस सूत्रके गौणः १ चेत् २ न ३ आत्मशब्दात् ४ यह चार पद हैं ॥ गौण शब्दका अर्थ अमुख्यता है। चेत् शब्दका अर्थ यदि है॥न शब्दका

अर्थ निषेध है। आत्मशब्दात् इस पदका अर्थ हेतु है। तथाच। चेत्। यदि अचेतन तेजकी न्याई सांख्यवादी अचेतन प्रधानमेंभी गौण अमुख्य ईक्षण कहे सो। न। कहिये नहीं हो सकता है। कस्मात्। काहे तें। आत्मशब्दात्। ईक्षणका मुख्य कर्ता ब्रह्म है तिस ब्रह्ममेंही चेतन जीव रूप करके आत्मशब्दका प्रयोग होनेतें ॥ ६ ॥

पूर्व जो कहा कि आत्मशब्दका प्रयोग अचेतनमें नहीं हो सकता है किंतु जीव चेतनमें होता है सो समीचीन नहीं काहेते आत्मशब्दका प्रयोग चेतन और अचेतन दोनोंमें साधारण होनेतें जैसे इंद्रियात्मा इस वाक्यमें आत्मशब्दका प्रयोग अचेतन इंद्रियमें है तैसे अचेतन प्रधानमेंभी हो सकता है इत्याशंक्याह ॥

तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात् ॥ ७ ॥

इस सूत्रके तन्निष्ठस्य १ मोक्षोपदेशात् २ यह दो पद हैं। तन्निष्ठस्य इस पदका अर्थ सत्पदार्थ ब्रह्मविषे अभेद ज्ञानवान् पुरुष है। मोक्षोपदेशात् इस पदका अर्थ मोक्षका उपदेश है॥ तथाच ॥ सत्पदार्थ ब्रह्मविषे अभेद ज्ञानवाले पुरुषको मोक्षका। उपदेश। कथन है। और प्रधान सत् शब्दका वाच्य नहीं है ॥ ७ ॥

प्रधान सत् शब्दका वाच्य क्यों नहीं है अत आह ॥

हेयत्वावचनाच्च ॥ ८ ॥

इस सूत्रके हेयत्वावचनात् १ च २ यह दो पद हैं। हेयत्व जो त्याग तिसका अवचन नहीं कहना यह हेयत्वावचनात् इस पदका अर्थ है। च शब्दका अर्थ प्रतिज्ञाविरोध है॥ तथाच॥ यदि अनात्मा प्रधान सत् शब्दका वाच्य होवे तो जैसे कोई पुरुष किसीको अरुंधती दिखावे सो प्रथम तिसके समीप स्थूल तारेको दिखायके पीछे तिसका त्याग करायके अरुंधती दिखाता है। तैसे स आत्मा तत्त्वमसि

इत्यादि वाक्योंमें आत्माको बतायके पीछे तिसका त्याग करायके प्रधानकों बताया चाहिये और नहीं बताता है। और जो आत्माका त्याग करावे तो प्रतिज्ञाविरोध होवे ॥ कारण कि ज्ञानसे सर्व कार्यका ज्ञान होता है यह प्रतिज्ञा है जैसें सुवर्णके ज्ञानसें सुवर्णके कार्य कुण्डलादिकोंका ज्ञान होता है तैसे प्रधानके ज्ञानसे सर्व जगत्का ज्ञान होना चाहिये और होता नहीं है ॥ ८ ॥

प्रधान शब्दका वाच्य कैसे नहीं है अतआह भगवान् सूत्रकारः ॥

स्वाप्ययात् ॥ ९ ॥

इस सूत्रका स्वाप्ययात् १ यह एकही समस्त पद है ॥ तथाच ॥ सुषुप्ति अवस्था विषे स्व कहिये जीवात्माका सत् शब्द वाच्य परमात्मामें। अप्यय। लय होताहै ॥ और जिसमें जीवात्मा लीन होता है सो सत् शब्दका वाच्य है और जगत्का कारण है प्रधान कारण नहीं है ॥ ९ ॥

प्रधान जगत्का कारण क्यों नहीं है अतआह।

गतिसामान्यात् ॥ १० ॥

इस सूत्रका गतिसामान्यात् १ यह एकही समस्त पद है। जैसे सर्व नेत्रोंसे एकरूपकाही समान अवगति ज्ञान होता है तैसे सर्व वेदांत शास्त्रसे समान एक चेतन कारणकाही अवगति ज्ञान होता है। इसीसे सर्वज्ञ ब्रह्म जगत्का कारण है ॥ १० ॥

सर्वज्ञ ब्रह्म जगत्का कारण कैसे हैं अतः आह ॥

श्रुतत्वाच्च ॥ ११ ॥

इस सूत्रके श्रुतत्वात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ श्रुतत्वात् इस पदका अर्थ श्रवण है। च शब्द पुनःअर्थको कहताहै ॥ तथाच ॥ च पुनःसर्वज्ञ ईश्वर जगत्का कारण है ॥ कथं श्वेताश्वतरमंत्रोपनिषदके विषै श्रवण होनेतें ॥ ११ ॥

तैत्तिरीयउपनिषद्के विषे अन्नमय १ प्राणमय २ मनोमय ३ विज्ञानमय ४ आनंदमय ५ यह पंचकोश कथन करेहैं ॥ तहां संशय होताहै कि आनंदमय शब्दसे मुख्य आत्माका ग्रहणहै अथवा अन्नमयादिकोंकी न्याई अमुख्य आत्माका ग्रहणहै अत आह सूत्रकार ॥

आनंदमयोऽभ्यासात् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके आनंदमय १ अभ्यासात् २ यह दो पद हैं ॥ आनंदमय शब्दका अर्थ इहां मुख्य परमात्मा है ॥ अभ्यास शब्दका अर्थ वारंवार कथनहै। तथा च। आनंदमय नाम मुख्य परमात्माका है ॥ कस्मात् अभ्यासात् "आनंदं ब्रह्मणो विद्वान्न बिभेति कुतश्चन ॥ आनंदो ब्रह्मेति व्यजानात् २" इत्यादि बहुत श्रुतियोंके विषे आनंद शब्दका वारंवार कथन होने तैं। यह इस सूत्रका सारार्थ है ॥ और प्रथम श्रुतिका अर्थ यह है कि ब्रह्मके आनंदको जाननेवाला विद्वान् किसीसे भी भय नहीं करताहै। १ द्वितीय श्रुतिका जो आनंद है सो ब्रह्म जानना यह अर्थ है ॥ १२ ॥

शंका और समाधानका विधायक सूत्र कहतेहैं ॥

विकारशब्दान्नेतिचेन्न प्राचुर्यात् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके विकारशब्दात् १न२ इति ३ चेत् ४ न ५ प्राचुर्यात् ६ यह छह पद हैं आनंदमय शब्दसे परमात्माका ग्रहण नहीं हो सकता कस्मात् विकारशब्दात्। आनंद शब्दके अगाडी व्याकरण सूत्रसे विकार अर्थके विषे मयट् प्रत्यय होनतैं ॥ आनंदमय नाम विकारवान् काहै। और परमात्मा विकारवान् नहीं है॥ इति चेन्न ॥ ऐसे न कहो। कस्मात् प्राचुर्यात्। प्रचुर अर्थके विषे मयट् प्रत्यय होणे तैं ॥ आनंदमय नाम प्रचुर बहुत आनंदवाले परमात्माका है ॥ १३ ॥

इसी अर्थको दृढ़ करतेहैं ॥

तद्धेतुव्यपदेशाच्च ॥ १४ ॥

इस सूत्रके तद्धेतुव्यपदेशात् १ च २ यह दो पद हैं॥ जैसे इहां प्राचुर्य अर्थके विषे मयट् प्रत्यय है तैसे ही। एष ह्येवानंदयाति । इत्यादि श्रुति ब्रह्मको आनंद हेतुका व्यपदेश कथन करती है यह इस सूत्रका सारार्थ है । श्रुतिका अर्थ यह है कि । एष परमात्मा सर्वको आनंद देताहै ॥ अर्थात् सर्वके आनंदका हेतु परमात्मा है इति ॥ १४ ॥

मांत्रवर्णिकमेव च गीयते ॥ १५ ॥

इस सूत्रके मांत्रवर्णिकं १ एव २ च ३ गीयते ४ यह चार पद हैं सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म । इस मंत्रके विषे । सत्य १ ज्ञान २ अनंत ३ इन विशेषणोंकरिके जो ब्रह्म निश्चित भयाहै सो मांत्रवर्णिक ब्रह्महै ॥ सो ब्रह्म आनंदमय शब्द करके । गीयते । कथन करिये है ॥ १५ ॥

नेतरोनुपपत्तेः ॥ १६ ॥

इस सूत्रके न १ इतरः २ अनुपपत्तेः ३ यह तीन पद हैं. ईश्वरसे इतर अन्य संसारी जीवात्माका आनंदमय शब्द करके कथन नहीं हो-सकता[1] । कस्मात् । अनुपपत्तेः सोऽकामयत बहुस्यां प्रजायेय ॥ इत्यादि श्रुति आनंदमयकोही जगत्का कर्ता कहती हैं ॥ सो जगत्का कर्तृत्वपना जीवात्माके विषे अनुपपन्न है यह इस सूत्रका सारार्थ है और श्रुतिका अर्थ यह है कि सो आनंदमय परमात्मा इच्छा करता भया मैं बहु प्रपंचरूप करके उत्पन्न होओं इति ॥ १६ ॥

भेदव्यपदेशाच्च ॥ १७ ॥

इस सूत्रके भेदव्यपदेशात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ च पुनः आनंदमय संसारी जीव नहीं है । कस्मात् । भेदव्यपदेशात् । आनंदमय

---

१ बनता नहीं ।

प्रकरणके विषे । रसो वै सः । रसं ह्येवायं लब्ध्वानंदी भवति । इत्यादि श्रुतिकरके जीव और आनंदमयके भेदका कथन होनेतें । यह इस सूत्रका सारार्थ है॥ और श्रुतिका अर्थ यह है कि। सो आनंदमय रस। सुखरूपहै और तिस रसकोंही प्राप्त होके यह जीव आनंदितहोता है इति ॥ १७ ॥

ननु आनंदरूप सत्वगुणवाला प्रधान आनंदमय शब्दका अर्थ है । अत आह ॥

कामाच्च नानुमानापेक्षा ॥ १८ ॥

इस सूत्रके कामात् १ च २ न ३ अनुमानापेक्षा ४ यह चार पद हैं आनंदमय प्रकरणके विषे ॥ (सोऽकामयतबहुस्यांप्रजायेय) ॥ इस श्रुतिकरके । काम । इच्छाका निर्देश होनेतें अनुमानसे जानने योग्य सांख्यपरिकल्पित अचेतन प्रधान । आनंदमय शब्दकरके अथवा कारण शब्द करके। अपेक्षित।वांछित नहीं है । यह इस सूत्रका सारार्थ है ॥ और श्रुतिका अर्थ नेतरोनुपपत्तेः इस सूत्रकी व्याख्यामें कर आयेहैं ॥ १८॥

अस्मिन्नस्यचतद्योगंशास्ति ॥ १९ ॥

इस सूत्रके अस्मिन् १ अस्य २ च ३ तद्योगं ४ शास्ति ५ यह पांच पद हैं सांख्यपरिकल्पित प्रधान और जीव आनंदमय शब्दके अर्थ नहीं हैं । कथं। अस्मिन्। इस आनंदमय परमात्माके विषे। अस्य इस प्रतिबुद्ध जीवका । तद्योग । तद्रूप करके आनंदस्वरूपकी प्राप्तिको अर्थात् मुक्तिकों शास्त्रहै सो । शास्ति । कहता है ॥ १९ ॥

यएषोंऽतरादित्ये यएषोंऽतराऽक्षिणि ॥ इत्यादि श्रुति उपासनाके वास्ते कहती हैं कि आदित्यमण्डलके विषे पुरुषहै ॥ और नेत्रके विषे पुरुष है ॥ तहां संशय है कि सो पुरुष संसारी है अथवा नित्यसिद्ध परमेश्वर है अत आह ॥

अंतस्तद्धर्मोपदेशात् ॥ २० ॥

इस सूत्रके अंतः १ तद्धर्मोपदेशात् २ यह दोपद हैं आदित्यमण्डलके विषे और नेत्रके विषे संसारी पुरुष नहीं है । किंतु नित्यसिद्ध परमेश्वर है ॥ कस्मात् तद्धर्मोपदेशात् ॥ य आत्मा अपहतपाप्मा ॥ इत्यादि श्रुतिकरके सर्वपापरहितत्व धर्मका उपदेश होनेतें ॥ यह इस सूत्रका सारार्थ है ॥ और श्रुतिका अर्थ यह है कि जो आत्माहै सो अपहतपाप्मा । सर्व पापसे रहितहै । इति ॥ २० ॥

भेदव्यपदेशाच्चान्यः ॥ २१ ॥

इस सूत्रक भेदव्यपदेशात् १ च २ अन्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ आदित्यादि शरीराभिमानी जीवसे अंतर्यामी ईश्वर । अन्यः । न्याराहै । कस्मात् । भेदव्यपदेशात् ॥ य आदित्ये तिष्ठन्नादित्यादंतरो यमादित्यो न वेद इत्यादि श्रुतिकरके भेदका । व्यपदेश । कथन होनेतें । यह इस सूत्रका सारार्थ है ॥ और श्रुतिका अर्थ यह है कि जो ईश्वर आदित्यके विषे स्थित है और आदित्यसे न्यारा है जिसकों आदित्य भी नहीं जानता है इति ॥ २१ ॥

छांदोग्योपनिषद्के विषे श्रवण होताहै कि शालावत्यब्राह्मण जैबलिराजाके प्रति पूछताभया कि इस भूलोकका तथा अन्य लोकका आधार कौन है ॥ तब राजा कहता भया कि आकाशहै ॥ तहां संशय होता है कि इहां आकाश शब्द करिकै परब्रह्मका ग्रहण है अथवा भूताकाशका ग्रहणहै अत आह ॥

आकाशस्तल्लिङ्गात् ॥ २२॥

इस सूत्रके आकाशः १ तल्लिङ्गात् २ यह दो पद हैं ॥ इहां आकाश शब्द करिकै परब्रह्मका ग्रहण युक्तहै । कस्मात् । तल्लिङ्गात् । सर्वाणि हवा इमानि भूतानि आकाशादेव समुत्पद्यंते आकाशं प्रत्यस्तं यंति ॥

इत्यादि श्रुतिकों ब्रह्मका लिङ्ग ज्ञापक होनेतें यह इस सूत्रका सारार्थ है॥ और श्रुतिका अर्थ यह है कि यह सर्वभूत आकाशसेहीं उत्पन्न होते हैं और आकाशके विषैही लीनहोते हैं और सर्वकी उत्पत्ति और लयका भूताकाशमें संभव नहीं किंतु परब्रह्ममें संभव है इति॥ २२॥

सामवेदीयोद्गीथप्रकरणके विषे श्रवण होताहै कि। चाक्रायणऋषि। प्रस्तोता। स्तुतिकरनेवालेकों कहता भया कि हे प्रस्तोतः जिस देवताकी तूं स्तुति करता है तिस देवताकों नहीं जानके मेरे समीप स्तुति करेगा तो तेरा शिर टूट पडेगा जब प्रस्तोता भयकरके पूछता भया कि सो देवता कौन है। तब ऋषि उत्तर देता भया कि सो देवता प्राण है तहां संशय है कि प्राण शब्दसे परब्रह्मका ग्रहण है अथवा प्राणवायुका ग्रहण है॥ अत आह॥

अत एव प्राणः॥ २३॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ प्राणः ३ यह तीन पद हैं॥ इहां प्राण। शब्दसे परब्रह्मकाही ग्रहण है और प्राणवायुका नहीं। कस्मात्। अतः सर्वाणि हवा इमानि भूतानि प्राणमेवाभिसंविशंति प्राणमभ्युज्जिहते। इस श्रुतिके विषे प्राणकों ब्रह्मका लिंग होनेतें यह इस सूत्रका सारार्थ है॥ और श्रुतिका अर्थ यह है कि सर्वभूत प्राणके विषे लीन होते हैं॥ और प्राणसे ही उत्पन्न होते हैं॥ २३॥

छांदोग्यउपनिषदमें श्रवण होता है कि इस द्युलोकसे परे ज्योतिका प्रकाश है तहां संशय है कि ज्योतिःशब्दसे आदित्यादि ज्योतिका ग्रहण है, अथवा परमात्माका ग्रहण है अत आह॥

ज्योतिश्चरणाभिधानात्॥ २४॥

इस सूत्रके ज्योतिः १ चरणाभिधानात् २ यह दो पद हैं॥ यहां ज्योतिःशब्द करके आदित्यादि ज्योतिका ग्रहण नहीं है किंतु परमात्माका ग्रहण है। कस्मात्। चरणाभिधानात्। पादोऽस्य सर्वा भूतानि

त्रिपादस्यामृतं दिवि । इस मंत्र करके चरणपादका अभिधान कथन-होणे तैं ॥ यह इस सूत्रका सारार्थ है । और मंत्रका अर्थ यह है कि । यह सर्व जगत् इस पुरुषका एकपाद अंश है और । दिवि । स्वप्रकाशस्व-रूपके विषे त्रिपाद अमृतरूप है ॥ २४ ॥

छन्दोभिधानान्नेति चेन्न तथाचेतो-
ऽर्पणनिगदात्तथाहि दर्शनम् ॥ २५ ॥

इस सूत्रके छंदोभिधानात् १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ तथा ६ चेतोऽर्पणनिगदात् ७ तथा ८ हि ९ दर्शनम् १० यह दश पद हैं पूर्वपक्षः ॥ पादोस्य सर्वा भूतानि इस वाक्य करके चतुष्पद गायत्री-छंदका अभिधान होनेसे ब्रह्मका अभिधान नहीं है ॥ उत्तरपक्षः ॥ इतिचेन्न । ऐसे न कहो कस्मात् । तथा चेतोर्पणनिगदात् ॥ गायत्री-रूपछंदके द्वारा गायत्र्यऽनुगतब्रह्मके विषे चित्तके समाधानका कथन होनेसे ॥ जैसे गायत्रीद्वारा ब्रह्मकी उपासना है तैसे औरभी विकार द्वारा ब्रह्मकी उपासना दीखतीहै ॥ २५ ॥

भूतादिपादव्यपदेशोपपत्तेश्चैवम् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके भूतादिपादव्यपदेशोपपत्तेः १ च २ एवम् ३ यह तीन पद हैं भूत १ पृथिवी २ शरीर ३ हृदय ४ यह चार गायत्रीके पाद हैं तिनका व्यपदेश जो कथन तिसकी । उपपत्तेः । ज्ञान होनेसे । एवम् । पादोऽस्य सर्वाभूतानि इस वाक्यके विषे ब्रह्मका ग्रहण है ब्रह्मको नहीं ग्रहण करके केवल छंदके भूतादि पाद नहीं हो सकते ॥ २६ ॥

उपदेशभेदान्नेति चेन्नोभयस्मिन्नप्यविरोधात्॥२७॥

इस सूत्रके उपदेशभेदात १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ उभयस्मि-न् ६ अपि ७ अविरोधात् ८ यह आठ पद हैं ॥ पूर्वपक्षः ॥ त्रिपादस्या-मृतं दिवि । इस वाक्यके विषे । दिवि । यह सप्तमी विभक्ति आधारको

कहती है॥ और। यदतः परो दिवोज्योतिर्दीप्यते। इस वाक्यके विषे॥ दिवः। यह पंचमीविभक्ति मर्यादाको कहती है इन पूर्वोक्त वाक्योंसें उपदेशका भेद होनेसे ब्रह्मका ज्ञान नहीं होसकता॥ उत्तरपक्षः॥ इति चेन्न। ऐसे न कहो। कस्मात्। उभयस्मिन्नप्यविरोधात्। ब्रह्मज्ञानके विषे सप्तम्यंतपदका और पंचम्यंतपदका अविरोध होनेसे॥ यह इस सूत्रका सारार्थ है। और यदतःपरोदिवः इस श्रुतिका अर्थ यह है कि इस दिव स्वर्गसे परेयज्जोतिः १ ब्रह्मप्रकाश करता है इति॥ २७॥

कौषीतकिब्राह्मणोपनिषद्के विषे श्रवण होता है कि दिवोदासका पुत्र प्रतर्दन काशीका राजा स्वर्गमें जायके इंद्रके साथ युद्ध करता भया जब इंद्र प्रसन्न होके बोला कि हे प्रतर्दन तू मेरेसे वर मांग तब प्रतर्दन बोला कि हे इंद्र जो मनुष्यके वास्ते अतिहित वर तूं मानताहै सोई मेरा वर है जब इंद्र बोला कि॥ प्राणोस्मि प्रज्ञात्मा तं मामायुरमृतमित्युपास्व इति॥ अस्यार्थः॥ मैं प्रज्ञानस्वरूप प्राण हूं तिस मेरी आयु अमृत इस रूप करके उपासनाकर इति। तहां संशय है कि यहां प्राणशब्दसे वायुमात्रका ग्रहण है अथवा देवतात्माका ग्रहण है अथवा जीवका ग्रहण है अथवा परब्रह्मका ग्रहण है। अत आह॥

प्राणस्तथानुगमात्॥ २८॥

इस सूत्रके प्राणः १ तथा २ अनुगमात् ३ यह तीन पद हैं यहां प्राणशब्दसे परब्रह्मका ग्रहण है॥ कस्मात्। तथानुगमात्॥ तैसेही पूर्वापर पदोंका ब्रह्मके विषे संबंध होनेसे॥ २८॥

नवक्तुरात्मोपदेशादितिचेदध्यात्मसंबंधभूमा ह्यस्मिन्॥ २९॥

इस सूत्रके न १ वक्तुः २ आत्मोपदेशात् ३ इति ४ चेत् ५ अध्यात्मसंबंधभूमा ६ हि ७ अस्मिन् ८ यह आठ पद हैं प्राणशब्दका वाच्य

परब्रह्म नहीं है ॥ काहेतें वक्तुरात्मोपदेशात्। तिस मेरी आयु अमृत इस रूप करके उपासनाकर ॥ यहां देवताविशेष इन्द्रके आत्माका उपदेश होनेसे ॥ ऐसा आक्षेप करके समाधान करतेहैं सूत्रकार ॥ अध्यात्मसम्बन्ध। भूमा ह्यस्मिन्निति ॥ अस्मिन् ॥ इस अध्यायके विषे अध्यात्मसम्बन्ध। जो प्रत्यगात्माका सम्बन्ध तिसका। भूमा। बाहुल्य है इसीसे परब्रह्मका प्राणशब्दसे ग्रहण है देवताविशेष इंद्रका नहीं ॥ २९ ॥

जो प्राणशब्दसे इन्द्रदेवतात्माका ग्रहण नहीं है तो है प्रतर्दन ॥ मामेव विजानीहि ॥ मेरेहीको तू जान ऐसा अपने आत्माका उपदेश इंद्र क्यों करताभया अत आह ॥

शास्त्रदृष्ट्या तूपदेशो वामदेववत् ॥ ३० ॥

इस सूत्रके शास्त्रदृष्ट्या १ तु २ उपदेशः ३ वामदेववत् ४ यह चार पद हैं जैसे वामदेवऋषि गर्भके विषे कहता भया कि मैं मनु होता भया और सूर्य होता भया ॥ तैसेंहीं इंद्रदेवता अपने आत्माको शास्त्रदृष्टिसें परमात्मा जानके ॥ मामेव विजानीहि ॥ ऐसा उपदेश करता भया ॥ ३० ॥

जीवमुख्यप्राणलिङ्गान्नेति चेन्नोपासात्रै-विध्यादाश्रितत्वादिह तद्योगात् ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके जीवमुख्यप्राणलिङ्गात् १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ उपासात्रैविध्यात् ६ आश्रितत्वात् ७ इह ८ तद्योगात् ९ यह नव पद हैं मामेव विजानीहि इत्यादि वाक्य ब्रह्मके प्रतिपादक नहीं हैं। कस्मात्। जीवलिङ्गात्। मुख्यप्राणलिङ्गाच्च। न वाचं विजिज्ञासीत वक्तारं विद्यात्। इस वाक्यकों जीवका। लिङ्ग। ज्ञापक होणेतें ॥ अस्यार्थः। वाचं। वाणीके जाननेकी इच्छा नहीं करणी किंतु वाणीके वक्ताकों जानना

इति ॥ और । प्राण एव प्रज्ञात्मा । इस वाक्यकों मुख्य प्राणका लिङ्ग होणेतैं । इसका अर्थ पूर्व कर आये हैं। समाधान। इति चेन्न। ऐसे न कहो। कस्मात् उपासात्रैविध्यात् । जीवोपासना १ प्राणोपासना २ ब्रह्मोपासना ३ इस तीन प्रकारकी उपासनाका प्रसंग होणेतैं ॥ और ब्रह्मके योगसे प्राणको ब्रह्मके । आश्रित । अधीन होणेतैं मामेव विजानीहि यह वाक्य ब्रह्मपर है ॥ ३१ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थ-
प्रदीपिकायां प्रथमाध्यायस्य प्रथमःपादः ॥ १ ॥

प्रथमाध्याये द्वितीयः पादः ॥

प्रथमपादके विषे जन्माद्यस्य यतः । इस सूत्रकरके सर्वजगत्का कारण ब्रह्म कहाहै तहां और भी आनंदमयादि वाक्योंका ब्रह्मके विषे समन्वय कियाहै ॥ अब जिनके विषे ब्रह्मलिंग स्पष्ट नहीं है ऐसे मनोमयादि वाक्य ब्रह्मके प्रतिपादक हैं अथवा नहीं इस निर्णयके वास्ते द्वितीय तृतीय पादका आरम्भ है मनोमयत्वादिधर्म करके जीवकी उपासना है अथवा ब्रह्मकी उपासना है अत आह ॥

सर्वत्रप्रसिद्धोपदेशात् ॥ १ ॥

इस सूत्रके सर्वत्र १ प्रसिद्धोपदेशात् २ यह दो पद हैं ॥ सर्व वेदांत शास्त्रके विषे प्रसिद्ध ब्रह्मका उपदेश होणेतैं मनोमयत्वादि धर्म करके परब्रह्महीं उपासनाके योग्य है ॥ १ ॥

विवक्षितगुणोपपत्तेश्च ॥ २ ॥

इस सूत्रके विवक्षितगुणोपपत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ विवक्षित । वांछित जो सत्यकाम सत्यसंकल्पत्वादिगुण । तिनका ब्रह्मके विषे । उपपत्ति । ज्ञान होणेतैं ब्रह्महीं उपासनाके योग्य है ॥ २ ॥

अनुपपत्तेस्तु न शारीरः ॥ ३ ॥

इस सूत्रके अनुपपत्तेः १ तु २ न ३ शारीरः ४ यह च्यार पद हैं ॥ सत्यकाम सत्यसंकल्पत्वादि गुणोंको जीवके विषे न होणेतैं शारीर । शरीरके विषे होनेवाला जीवात्मा मनोमयत्वादि धर्म करके उपासनाके योग्य नहीं है । किंतु परब्रह्मही उपासनाके योग्यहै ॥ ३ ॥

कर्मकर्तृव्यपदेशाच्च ॥ ४ ॥

इस सूत्रके कर्मकर्तृव्यपदेशात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ एतमितः प्रेत्याभिसंभवितास्मि ॥ इस श्रुतिवाक्यके विषे । कर्म और कर्त्ताका कथन होनेसे मनोमयत्वादि धर्मकरके जीवात्मा उपासनाके योग्य नहीं । किंतु परब्रह्म ही उपासनाके योग्य है ॥ यह इस सूत्रका सारार्थ है ॥ और श्रुतिवाक्यका अर्थ यह है । उपासक जीव कहताहै कि । मैं इतः इस लोकसे । प्रेत्य । मरके । एतम् । इस मेरे उपास्य परमात्माकों । अभिसंभवितास्मि । प्राप्त होऊंगा इति । उपास्य परमात्मा कर्म है औ उपासक जीव कर्त्ता है । औ जो जीव उपास्य होवै तो एकही जीव कर्म औ कर्त्ता नहीं हो सकता ॥ ४ ॥

शब्दविशेषात् ॥ ५ ॥

इस सूत्रका शब्दविशेषात् १ यह एकही पद है ॥ यथा व्रीहिर्वा यवो वा श्यामाको वा श्यामाकतण्डुलो वैवमयमन्तरात्मन् पुरुषो हिरण्मयः । इस श्रुतिवाक्यके विषे । अन्तरात्मन् यह सप्तमीविभक्त्यंत शब्द जीवात्माकों कथन करताहै । औ पुरुषः । यह प्रथमाविभक्त्यंत शब्द मनोमयत्वादिगुणविशिष्ट परमात्माकों कथन करताहै इस रीतिसें शब्दका भेद होनेतें जीवात्मासें परमात्मा भिन्न है । इति सूत्रसारार्थः ॥ और श्रुतिवाक्यका अर्थ यह है कि । जैसें व्रीहि । चावल । यव । जव । श्यामाक । ऋषिअन्न । श्यामाकतंदुल । शामक चावल । यह तुषके अर्थात् पडदेके भीतर होते हैं तैसे यह । हिरण्मयः । प्रकाशस्वरूप ।

पुरुषः । परमात्मा । अन्तरात्मन् । जीवात्माके भीतर हृदय देशमें है इति ॥ ५ ॥

स्मृतेश्च ॥ ६ ॥

इस सूत्रके स्मृतेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति । भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया ॥ इत्यादि स्मृतिसेंभी जीवात्माका और परमात्माका भेद सिद्ध होताहै इति सूत्र सारार्थः ॥ और स्मृतिका अर्थ यह है । भगवान् कहते भये कि हे अर्जुन ! ईश्वर अन्तर्यामि । यंत्र । शरीरके विषे । आरूढ । सर्व जीवोंको मायाकरके भ्रमाता है और सर्व प्राणियोंके हृदय देशके विषे स्थित है इति ॥ ६ ॥

अर्भकौकस्त्वात्तद्व्यपदेशाच्च नेतिचे न्न निचाय्यत्वादेवं व्योमवच्च ॥ ७ ॥

इस सूत्रके अर्भकौकस्त्वात् १ तद्व्यपदेशात् २ च ३ न ४ इति ५ चेत् ६ न ७ निचाय्यत्वात् ८ एवं ९ व्योमवत् १० च ११ यह एकादश पद हैं ॥ पूर्वपक्षः ॥ अर्भकौकस्त्वात् । हृदयरूप अल्प स्थानके विषे होनेतें ॥ औ । अणीयान् व्रीहेर्वा यवाद्वा । इस वाक्यके विषै । व्रीहि । चावल तें । यव । जवतेंवी । अणीयान् । सूक्ष्मका कथन होनेतें । व्यापक ईश्वर हृदयकमलके विषे नहीं है किंतु सूक्ष्म जीव है ॥ उत्तरपक्षः । इति चेन्न । ऐसें न कहो । कस्मात् । निचाय्यत्वादेवं व्योमवच्च । यद्यपि व्योम । आकाश व्यापक है तथापि सुईके पाशेमें अल्प स्थानवाला और सूक्ष्म कहाता है तैसेंही व्यापक ईश्वर हृदयके विषे । निचाय्य देखनेके योग्य होनेतें अल्प स्थानवाला और सूक्ष्म कहाता है ॥ ७ ॥

संभोगप्राप्तिरितिचेन्न वैशेष्यात् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके संभोगप्राप्तिः १ इति २ चेत् ३ न ४ वैशेष्यात् ५ यह

पांच पद हैं ॥ सर्वगत ब्रह्मको चेतन होनेतें औ सर्व प्राणियोंके हृदेके साथ सम्बंध होनेतैं औ शरीर जीवात्मासें अभिन्न होनेतें सुखदुःखादिकोंके संभोगकी प्राप्ति होवैगी । इति चेन्न । ऐसें न कहो । कस्मात् । वैशेष्यात् । जीवात्मा धर्माधर्मका कर्त्ता है औ सुखदुःखका भोक्ता है ॥ औ परमात्मा न धर्माधर्मका कर्त्ता है औ न सुखदुःखका भोक्ता है इस रीतिसैं जीव और ब्रह्मके विषै विशेषता होनेतैं ॥ ८ ॥

कठवल्ली उपनिषदके विषै श्रवण होता है कि ॥ "यस्य ब्रह्म च क्षत्रं चोभे भवत ओदनः मृत्युर्यस्योपसेचनं । कइत्था वेद यत्र सः" इति ॥ अस्यार्थः ॥ जिसके ब्राह्मण औ क्षत्रिय । यह दोनु । जो ओदन । भक्ष्यहैं औ मृत्यु जिसका । उपसेचन । घृत है । ऐसा सर्वका भक्षक सो इहां है ऐसें कौन जान सकता है इति अब इहां संशय है कि ब्राह्मण क्षत्रिय औ मृत्यु जिसके भक्ष्य हैं सो अग्नि है अथवा जीव है वा परमात्मा है अत आह ॥

अत्ता चराचरग्रहणात् ॥ ९ ॥

इस सूत्रके अत्ता १ चराचरग्रहणात् २ यह दो पद हैं ॥ चराचर स्थावर जंगमका ग्रहण होनेतैं ब्राह्मण क्षत्रिय मृत्युसे आदिलेके सर्वको भक्षण करनेवाला परमात्माहै औ कोई नहीं हो सकता ॥ ९ ॥

प्रकरणाच्च ॥ १० ॥

इस सूत्रके प्रकरणात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ न जायते म्रियते वा विपश्चित् ॥ विपश्चित् । सर्वको जाननेवाला परमात्मा न जन्मता है औ न मरताहै इस प्रकरणसैंबी परमात्माही सर्वका भक्षक होने योग्यहै ॥ १० ॥

ऋतं पिबंतौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्धे ॥ छायातपौ ब्रह्मविदो वदन्ति पंचाग्नयो ये च त्रिणाचिकेताः ॥ यह श्रुति

कठवल्लीके विषै है । तहां संशय है कि इस श्रुतिके विषै बुद्धि औ जीवका निर्देशहै वा जीव और परमात्माका निर्देश है अत आह ।

गुहांप्रविष्टावात्मानौहितद्दर्शनात् ॥ ११ ॥

इस सूत्रके गुहां १ प्रविष्टौ २ आत्मानौ ३ हि ४ तद्दर्शनात् ५ यह पांच पद हैं ॥ हृदयाकाशरूप गुहाके विषै जीव औ परमात्मा स्थित हैं बुद्धि जीव नहीं । कस्मात् । तद्दर्शनात् । जैसें लोकके विषै गौके समान स्वभाववाली गौ है अश्व नहीं तैसेही चेतन जीवके समान स्वभाववाले चेतन परमात्माका दर्शन होनेतें बुद्धि जीवका समान स्वभाव नहीं इति सूत्रसारार्थः ॥ औ श्रुतिका अर्थ है कि पुण्यकर्मका कार्य जो देह तिसके विषै परब्रह्मका श्रेष्ठस्थान हृदय तिसके विषै जो आकाशरूपा वा बुद्धिरूपा गुहा तिस गुहामैं स्थितहैं औ अवश्यभावि कर्मफलको भोगते हैं औ छाया धूपकी न्यांई परस्पर विरुद्ध है ऐसें ब्रह्मके वेत्ता पुरुष और पंचाग्निके उपासक कर्मिपुरुष औ त्रिणाचिकेत अग्निके उपासक पुरुष कहते हैं इति ॥ ११ ॥

विशेषणाच्च ॥ १२ ॥

इस सूत्रके विशेषणात् १ च २ यह दो पद हैं । आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेवतु । इस वाक्यके विषै रथिनं इस पदको जीवात्माका विशेषण होनेतें औ । सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम् । इस वाक्यके विषै परमं पदम् । इसको परमात्माका विशेषण होनेतें उदाहृत श्रुतिके विषै जीवात्माका ग्रहणहै इति सूत्रसारार्थः । औ प्रथमवाक्यका अर्थ यह है कि जीवात्माको । रथी । रथमें बैठने वाला जानना औ शरीरको रथ जानना इति ॥ औ द्वितीयका अर्थ यह है कि सो जीव संसारमार्गके पारको प्राप्त होता है सो पार व्यापक परमात्माका परम स्वरूप है इति ॥ १२ ॥

य एषोऽक्षिणिपुरुषो दृश्यते एष आत्मा॥ अस्यार्थः।जो यह नेत्रके विषै पुरुष दीखताहै सो यह आत्मा है इति ॥ तहां संशय है कि नेत्रके विषै प्रतिबिम्बात्मा है अथवा जीवात्मा है वा नेत्रका अधिष्ठाता देवतात्मा है वा परमात्मा है अत आह ।

अन्तर उपपत्तेः ॥ १३ ॥

इस सूत्रके अंतर१उपपत्तेः २ यह दो पद हैं॥ नेत्रके अन्तर।भीतर परमेश्वर है । कस्मात् । उपपत्तेः । परमेश्वरके विषै अमृतत्व अभयत्वादिगुणोंका ज्ञान होनेतें ॥ १३ ॥

आकाशवत् सर्वगत ब्रह्मका अल्प नेत्रस्थान नहीं हो सकता अत आह ॥

स्थानादिव्यपदेशाच्च ॥ १४ ॥

इस सूत्रके स्थानादिव्यपदेशात् १ च २ यह दो पद हैं॥ एक नेत्रही ब्रह्मका स्थान नहीं है किंतु । यः पृथिव्यां तिष्ठन् । इत्यादि श्रुतिवाक्यसैं बहुतसे पृथ्वीने आदिलेके परमेश्वरके स्थान दिखायेहैं । तिनके विषै एकनेत्रभी परमेश्वरका स्थान है इति सूत्रसारार्थः । औ श्रुतिवाक्यका अर्थ यह है कि यह परमेश्वर पृथिवीके विषै स्थित है इति ॥ १४ ॥

सुखविशिष्टाभिधानादेव च ॥ १५ ॥

इस सूत्रके सुखविशिष्टाभिधानात् १ एव २ च ३ यह तीन पद हैं ॥ ध्यानके वास्ते भेदकी कल्पना करके सुखगुणविशिष्ट ब्रह्मका । य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते । इस श्रुतिवाक्य करके अभिधान होनेतें नेत्रके विषै परमेश्वर है ॥ १५ ॥

श्रुतोपनिषत्कगत्यभिधानाच्च ॥ १६ ॥

इस सूत्रके श्रुतोपनिषत्कगत्यभिधानात् १ च २ यह दो पद हैं ॥

जिस पुरुषनैं उपनिषदोंका रहस्य श्रवण किया है तिस ब्रह्मवेत्ता पुरुषकों श्रुतोपनिषत्क कहते हैं । तिस पुरुषकी गति जो प्रसिद्ध देवयानमार्ग तिसका श्रुतिस्मृतिके विषै अभिधान होनेतैं नेत्रस्थानके विषै परमेश्वर है ॥ १६ ॥

छायात्मा वा जीवात्मा वा देवतात्मा नेत्रस्थानवाले क्यों नहीं है अत आह ॥

अनवस्थितेरसंभवाच्च नेतरः ॥ १७ ॥

इस सूत्रके अनवस्थितेः १ असंभवात् २ च ३ न ४ इतरः ५ यह पांच पद हैं ॥ इतर छायात्मादि नेत्रस्थानवाले नहीं हो सकते । कस्मात् । अनवस्थितेः । सदा स्थिति नहीं होनेतैं । जब कोई पुरुष नेत्रके सामनें होवै तब छायात्मा दीखता है सदा नहीं । और जीवात्माका सर्व शरीरेंद्रियके साथ सम्बंध होनेतैं केवल नेत्रके विषै स्थिति नहीं यद्यपि व्यापकब्रह्मका सम्बन्धभी सर्वके साथ है तथापि हृदयादिदेश ब्रह्मके श्रुति कहती है । औ देवतात्माकों बहिर्देशमें होनेतैं आत्मत्व नहीं है । असंभवाच्च । छायात्मा १ जीवात्मा २ देवतात्मा ३ इन तीनोंके विषै अमृतत्व अभयत्वादि गुणोंका असंभव होनेतैं नेत्र स्थानवाला परमेश्वर है ॥ १७ ॥

अन्तर्यामि ब्राह्मणके विषै श्रवण होता है कि । अधिदैवतमधिलोकमधिवेदमधियज्ञमधिभूतमध्यात्मं च कश्चिदन्तरवस्थितो यमयितान्तर्यामी इति ॥ तहां संशय है कि अन्तर्यामिशब्दसैं अधिदैवाद्यभिमानी देवताका ग्रहण है अथवा अणिमादि ऐश्वर्यवाले योगीका ग्रहण है वा परमात्माका ग्रहण है अत आह ॥

---

१ सिद्धांत ।

अन्तर्याम्यधिदैवादिषु तद्धर्मव्यपदेशात् ॥ १८ ॥

इस सूत्रके अंतर्यामी १ अधिदैवादिषु २ तद्धर्मव्यपदेशात् ३ यह तीन पद हैं ॥ अधिदेवादि सर्वका प्रेरक जो अन्तर्यामी तिसके विषे प्रेरकत्वधर्मका कथन होनेतें अधिदैवादिकोंके विषे अन्तर्यामि शब्दसें परमात्माका ग्रहण है इति सूत्रसारार्थः ॥ औ श्रुतिका अर्थ यह है कि ॥ जो पृथिव्यादि देवताके विषै है सो अधिदैवत है औ जो सर्वलोकके विषै है सो अधिलोकहै । औ जो सर्व वेदके विषै है सो अधिवेदहै । औ जो सर्व यज्ञके विषै है सो अधियज्ञ है । औ जो सर्वभूतके विषै है सो अधिभूत है औ जो सर्व आत्माके विषै है सो अध्यात्म है इन सर्वको जो कोई अन्तःस्थित होके प्रेरता है सो अन्तर्यामी है इति ॥ १८ ॥

सांख्यस्मृति कल्पित प्रधान जगत्का कारण औ प्रेरक है सो अन्तर्यामिशब्दका वाच्य है । अत आह ॥

नचस्मार्तमतद्धर्माभिलापात् ॥ १९ ॥

इस सूत्रके न १ च २ स्मार्त्तम् ३ अतद्धर्माभिलापात् ४ यह च्यार पद हैं सांख्य स्मृति कल्पित अचेतन प्रधानके विषे दृष्टत्वादि धर्मका असंभव होनेतें प्रधान अन्तर्यामि शब्दका वाच्य नहीं किंतु परमेश्वर है ॥ १९ ॥

शारीर जीवात्माको चेतनत्वद्रष्टृत्वादि धर्मवाला होनेतें शारीरात्मा अन्तर्यामी है अत आह ।

शारीरश्चोभयेपिहिभेदेनैनमधीयते ॥ २० ॥

इस सूत्रके शारीरः १ च २ उभये ३ अपि ४ हि ५ भेदेन ६ एनम् ७ अधीयते ८ यह आठ पद हैं॥पूर्वसूत्रसैं नकारकी अनुवृत्ति करणी यद्यपि द्रष्टृत्वादि धर्म शारीरात्माके हैं तथापि घटाकाशकी न्याईं उपाधि करके परिच्छिन्न होनेतें शारीरात्मा सर्व पृथिव्यादिकोंका नियामक

अन्तर्यामी नहीं होसकता ॥ उभयेऽपिहि । काण्व शाखावाले औ माध्यं दिन शाखावाले इस शारीरात्माका अन्तर्यामीसें भेद करके अध्ययन करतेहैं ॥ २० ॥

मुण्डकोपनिषदके विषै श्रवण होताहै कि । यत्तदद्दश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुःश्रोत्रंतदपाणिपादं नित्यं विभुं सर्वगतंसुसूक्ष्मंतदव्ययं यद्भूतयोनिं परिपश्यंति धीराः इति ॥ तहां संशय है कि अद्दश्यत्वादि गुणवाला औ भूतयोनि प्रधान है अथवा शारीरात्मा है वा परमात्मा है अत आह ॥

अदृश्यत्वादिगुणकोधर्मोक्तेः ॥ २१ ॥

इस सूत्रके अदृश्यत्वादिगुणकः १धर्मोक्तेः२यह दो पद हैं ॥ धर्मोक्तेः । यः सर्वज्ञः सर्ववित् । जो सामान्यरूपसैं सर्वको जानताहै सो विशेष रूपसैं सर्वको जानता है इति सर्वज्ञत्वादि धर्मका परमेश्वरके विषै कथन होनेतैं जो यह अदृश्यत्वादि गुणवाला औ भूतयोनि है सो परमात्मा है अन्य कोई नहीं इति सूत्रसारार्थः॥औ श्रुतिका अर्थ यह है कि जो परमात्मा । अदृश्यं । अदृश्यहै । अग्राह्यं । ज्ञानेन्द्रिय कर्मेन्द्रिय करके अग्राह्यहै । अगोत्रं । वंशरहितहै । अवर्णं ब्राह्मणत्वादि जातिरहित है । अचक्षुःश्रोत्रं । चक्षु औ श्रोत्रसैं रहित है । तदपाणिपादं । सो हस्त पैरसें रहितहै । औ नित्य है । विभुं । प्रभु है । सर्वगतं । व्यापक है । सुसूक्ष्मं । अतिसूक्ष्म है । तदव्ययं । सो नाशरहित है । यद्भूतयोनिं । जो सर्वभूतोंका कारण है तिसको । धीराः । पंडित हैं सो देखते हैं इति ॥ २१ ॥

विशेषणभेदव्यपदेशाभ्यांचनेतरौ ॥ २२ ॥

इस सूत्रके विशेषणभेदव्यपदेशाभ्यां १ च २ न ३ इतरौ ४ यह चार पद हैं ॥ दिव्यो ह्यमूर्त्तः पुरुषः । इत्यादि वाक्यके विषै दिव्यत्वादि विशेषणवाले परमात्माका कथन होनेतैं । औ अक्षरात् परतः परः । इस वाक्यके विषै प्रधानसैं परमात्माके भेदका कथन होनेतैं । नेतरौ ।

शारीरात्मा औ प्रधान सर्व भूतोंका कारण नहीं किंतु परमेश्वर कारण है इति सूत्रसारार्थः । औ प्रथम वाक्यका अर्थ यह है कि दिव्य । स्वयंज्योतिः अमूर्त्त । पूर्ण । पुरुष । पुरीमें सोनेवाला परमात्मा है इति । द्वितीयका अर्थ । अक्षर प्रधानसें पर परमात्मा है इति ॥ २२ ॥

रूपोपन्यासाच्च ॥ २३ ॥

इस सूत्रके रूपोपन्यासात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ अग्निर्मूर्द्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ दिशःश्रोत्रेवाग्विवृताश्चवेदाः । वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा ॥ इस श्रुति करके परमेश्वरके रूपका कथन होनेंतें सर्वभूतयोनि परमेश्वर है इति सूत्रसारार्थः ॥ औ श्रुतिका अथ यह है कि अग्नि । द्युलोक है । चंद्रसूर्य । नेत्र हैं दिशा श्रोत्र हैं प्रसिद्ध वेद वाणी है वायु प्राण है विश्व इसका हृदय है पृथिवी पाद हैं जिसका यह रूप है सो सर्वभूतोंका अन्तरात्मा है इति॥२३॥

छान्दोग्यके विषे श्रवण होताहै कि । प्राचीनशाल १ सत्ययज्ञ २ इंद्रद्युम्न ३ जनक ४ बुडिल ५ उद्दालक ६ यह छेह पुरुष मिलके जो कैकयदेशका राजा अश्वपति नाम था तिसके समीप जायके पूछते भये कि हे राजन् जो तूं वैश्वानर आत्माको जानताहै तो हमारेकों कहो तहां संशय है कि वैश्वानर शब्दसे जाठराग्निका ग्रहणहै अथवा भूताग्निका ग्रहण है वा अग्न्यभिमानि देवताका ग्रहणहै वा शारीरात्माका ग्रहण है वा परमात्माका ग्रहण है अत आह।

वैश्वानरः साधारणशब्दविशेषात् ॥ २४ ॥

इस सूत्रके वैश्वानरः १ साधारणशब्दविशेषात् २ यह दो पद हैं ॥ यद्यपि आत्मशब्द शारीरात्माके औ परमात्माके विषे साधारण है । औ वैश्वानरशब्द जाठराग्नि भूताग्नि औ अग्न्यभिमानी देवता इन तीनके विषे साधारण है तथापि आत्मशब्दका औ वैश्वानरशब्दका

परमात्माके विषै विशेष होनेतें वैश्वानरशब्दसें परमात्माका ग्रहण है ॥ २४ ॥

स्मर्यमाणमनुमानंस्यादिति ॥ २५ ॥

इस सूत्रके स्मर्यमाणम् १ अनुमानं २ स्यात् ३ इति ४ यह चार पद हैं॥यस्याग्निरास्यं द्यौर्मूर्द्धाखंनाभिश्चरणौक्षितिः।सूर्यश्चक्षुर्दिशः श्रोत्रे तस्मै लोकात्मनेनमः । इस स्मृतिकरके स्मर्यमाण जो परमात्माका रूप सो वैश्वानर शब्दकों परमात्म।परत्वका। अनुमान। लिङ्ग है। इति शब्दका अर्थ हेतु है । यस्मात् यह स्मर्यमाणरूप लिंग है तस्मात् वैश्वानर परमात्मा है इति सूत्रसारार्थः ॥ औ स्मृतिका अर्थ यह है कि। जिस परमात्माका अग्नि मुख है द्युलोक मस्तक है आकाश नाभि है पृथिवी चरण है सूर्य चक्षु है दिशा श्रोत्रहैं तिस सर्व लोकरूप परमात्माकों नमस्कार है इति ॥ २५ ॥

शब्दादिभ्योऽन्तःप्रतिष्ठानाच्चनेतिचेन्न तथादृष्ट्युपदेशादसंभवात्पुरुषमपिचैनमधीयते ॥ २६ ॥

इस सूत्रके शब्दादिभ्यः १ अन्तः प्रतिष्ठानात् २ च ३ न ४ इति५ चेत् ६ न ७ तथा ८ दृष्ट्युपदेशात् ९ असंभवात् १० पुरुषम् ११ अपि१२च१३ एनम् १४ अधीयते १५ यह पंचदश पद हैं॥सएषोऽग्नि वैश्वानरः । अस्यार्थः। सो यह अग्नि वैश्वानर है इति। इस वाक्यके विषै वैश्वानरशब्दसें अग्निका ग्रहण होनेतें। औ।पुरुषेऽन्तः प्रतिष्ठितं वेद। अस्यार्थः पुरुषके भीतर स्थित अग्निकों जानै इति । इस वाक्यके विषै जाठराग्निका ग्रहण होनेतें परमेश्वर वैश्वानर नहीं है किंतु वैश्वानर अग्नि है। इति चेन्न। ऐसें न कहो । कस्मात्। तथा दृष्ट्युपदेशात्। परमेश्वर दृष्टिकरके वैश्वानरशब्दसें जाठराग्निकी उपासनाका उपदेश होनेतें। और जो केवल जाठराग्नि विवक्षित होवे तो। मूर्धैव सुतेजा।

अस्यार्थः। परमेश्वरका मस्तक सुंदर तेजवाला है इति। इस वाक्यका असंभव होवै। और वाजसनेयि शाखावाले इस वैश्वानरकों पुरुषरूप करके अध्ययन करते हैं इसीसैं परमेश्वरही वैश्वानर है अन्य नहीं॥२६॥

अत एव न देवता भूतंच॥२७॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ न ३ देवता ४ भूतं ५ च ६ यह छेह पद हैं॥ अतएव। जिसपरमेश्वरका द्युलोक मस्तक है इत्यादि पूर्वोक्त हेतुसैं न कोई देवता वैश्वानर है और न भूतादि वैश्वानर है किंतु परमेश्वरही वैश्वानर है॥२७॥

साक्षादप्यविरोधंजैमिनिः॥२८॥

इस सूत्रके साक्षात् १ अपि २ अविरोधं ३ जैमिनिः ४ यह चार पद हैं॥ पूर्व कहाहै कि जाठराग्नि रूप उपाधिवाला परमेश्वर उपासनाके योग्य है अब कहते हैं कि उपाधिके विना साक्षात् परमेश्वरही उपासनाके योग्य है इसमैं कोई विरोध नहीं है ऐसैं जैमिनिआचार्य मानता है॥२८॥

अभिव्यक्तेरित्याश्मरथ्यः॥२९॥

इस सूत्रके अभिव्यक्तेः १ इति २ आश्मरथ्यः ३ यह तीन पद हैं॥ व्यापक परमेश्वरकों प्रादेशमात्रत्वका कथनहै सो तिसकी। अभिव्यक्ति। प्रगटताके निमित्तहै। प्रदेशविशेष हृदयादि स्थानोंके विषै प्रगट होवै सो परमेश्वर प्रादेशमात्र कहिये ऐसैं आश्मरथ्य आचार्य मानता है॥२९॥

अनुस्मृतेर्बादरिः॥३०॥

इस सूत्रके अनुस्मृतेः १ बादरिः २ यह दो पद हैं अथवा प्रादेशमात्र जो हृदय। तिसके विषै प्रविष्ट जो मन तिस मन करके परमेश्वरका अनुस्मरण होनेतैं परमेश्वरकों प्रादेश मात्र कहते हैं ऐसैं बादरि आचार्य मानताहै॥३०॥

संपत्तेरितिजैमिनिस्तथाहिदर्शयति ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके संपत्तेः १ इति २ जैमिनिः ३ तथा ४ हि ५ दर्शयति ६ यह छेह पद हैं अथवा संपत्ति जो परमेश्वरकों मूर्धादि तत्तत्स्थानकी प्राप्ति तिस संपत्तिरूप निमित्तसें परमेश्वरको प्रादेशमात्र कहते हैं। तथाहि दर्शयति। तैसेंही प्रादेशमात्रताकों श्रुतिबी दिखाती है ऐसें जैमिनि आचार्य मानता है इति सूत्रसारार्थः। औ श्रुति यह है कि। प्रादेशमात्रमिव हवै देवाः सुविदिता अभिसम्पन्नाः। अस्यार्थः। देव हैं सो अपरिच्छिन्न परिमाणवाले परमेश्वरकों प्रादेशमात्रकी कल्पना करके जानते भये औ तिसीकों प्राप्त होतेभये इति ॥ ३१ ॥

आमनन्तिचैनमस्मिन् ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके आमनंति १ च २ एनम् ३ अस्मिन् ४ यह चार पद हैं॥ इस परमेश्वरकों मूर्धा औ चुबुकके मध्यमें जाबाल कथन करतेहैं मूर्धानाम मस्तकका है औ मुखके नीचे भागका नाम चुबुक है तिनके मध्य विषे परमेश्वरका कथन होनेतें परमेश्वर प्रादेशमात्र है औ वैश्वानर है इति ॥ ३२॥

इतिश्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायांब्रह्मसूत्रसारार्थ प्रदी-
पिकायांप्रथमाध्यायस्यद्वितीयपादः ॥ २ ॥



प्रथमाध्याये तृतीयः पादः ॥

मुण्डकोपनिषद्के विषै श्रवण होताहै कि। यस्मिन् द्यौः पृथ्वी चान्तरिक्षमोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैस्तमेवैकं जानथ आत्मानमन्यावाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतुः। इति॥ तहां संशय है कि द्युलोकादिकोंका आधार परब्रह्म है अथवा अन्य प्रधानादिक हैं अत आह ॥

द्युभ्वाद्यायतनंस्वशब्दात् ॥ १ ॥

इस सूत्रके द्युभ्वाद्यायतनं १ स्वशब्दात् २ यह दो पद हैं॥ द्युलोक भूलोकादिकोंका। आयतन। आधार परब्रह्म है कस्मात्। स्वशब्दात्। उक्त श्रुतिके विषै। तमेवैकं जानथ आत्मानं। इस आत्मशब्दका अर्थ यह है कि। सर्व प्राणोंकरके सहित द्युलोक भूलोक अंतरिक्षलोक इन तीनलोकस्वरूप विराट् मनः। सूत्रात्मा चकारात् अव्याकृत कारण। यह जिसके विषै। ओतं। कल्पित हैं तिस एक आत्माकों जानना चाहिये औ अनात्म वाणीका त्याग करना चाहिये। यह आत्मा मोक्षका। सेतुः। प्रापक है इति॥ १ ॥

मुक्तोपसृप्यव्यपदेशात् ॥ २ ॥

इस सूत्रका मुक्तोपसृप्यव्यपदेशात् १ यह एक ही पद है॥ यदा सर्वे प्रमुच्यंते कामा ये ऽस्य हृदिस्थिताः। अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते॥ इस श्रुतिके विषै मुक्त पुरुषोंके प्राप्त होनें योग्य परब्रह्मका कथन होनेतें परब्रह्म द्युलोक भूलोकादिकोंका आयतन है प्रधानादिक नहीं इति सूत्रसारार्थः॥ औ श्रुतिका अर्थ यह है कि जिस कालके विषै इस पुरुषके हृदेमें स्थित सर्व काम दूर होवैं तिसके अनन्तर यह पुरुष अमृत होताहै औ इहांही ब्रह्मकों प्राप्त होताहै इति॥ २॥

नानुमानमतच्छब्दात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके न १ अनुमानम् २ अतच्छब्दात् ३ यह तीन पद हैं

अचेतन प्रधानप्रतिपादक शब्दका अभाव होनेतें औ यःसर्वज्ञः सर्ववित् इत्यादि चेतन ब्रह्मप्रतिपादक शब्दका सद्भाव होनेतें सांख्य-स्मृति परिकल्पित अचेतन प्रधान द्युलोक भूलोकादिकोंका आयतन नहीं किंतु परब्रह्म है ॥ ३ ॥

प्राणभृच्च ॥ ४ ॥

इस सूत्रके प्राणभृत् १ च २ यह दो पद हैं यद्यपि प्राणकों धारण करनेंवाले जीवके विषै आत्मत्व चेतनत्वादि धर्म हैं तथापि उपाधिपरिच्छिन्न जीवके विषै सर्वज्ञत्वादि धर्मका अभाव होनेतें जीवात्मा द्युलोक भूलोकादिकोंका आयतन नहीं किं तु सर्वज्ञ ब्रह्म है ॥ ४ ॥

प्राणभृत् जीवात्मा द्युलोकादिकोंका आयतन क्यों नहीं अत आह ।

भेदव्यपदेशात् ॥ ५ ॥

इस सूत्रका भेदव्यपदेशात् १ यह एकही पद है ॥ तमेवैकं जानथ आत्मानं इत्यादि वाक्यके विषै ज्ञाता औ ज्ञेयके भेदका कथन होनेतें मुमुक्षु, प्राणभृत् जीवात्मा ज्ञाता है औ आत्मशब्दवाच्य ब्रह्म ज्ञेय है सो ब्रह्मही द्युलोकादिकोंका आयतन है ॥ ५ ॥

प्रकरणात् ॥ ६ ॥

इस सूत्रका प्रकरणात् १ यह एकही पद है ॥ कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति ॥ इस श्रुतिवाक्य करके एकके विज्ञानसे सर्वके विज्ञानकी अपेक्षा होनेतें एक परमात्माके विज्ञानसेंहीं सर्वका विज्ञान हो सकता है केवल प्राणभृत् जीवके विज्ञानसें सर्वके विज्ञानका संभव नहीं इत्यादि परमात्म संबन्धि प्रकरण होनेतें परमात्मा द्युलोकादि-कोंका आयतन है इति सूत्रसारार्थः ॥ औ श्रुतिवाक्यका अर्थ यह है कि हे भगवन् किसके जानेतें यह सर्व जगत् जान्या जाता है इति ॥ ६ ॥

स्थित्यदनाभ्यांच ॥ ७ ॥

इस सूत्रके स्थित्यदनाभ्यां १ च २ यह दो पद हैं ॥ द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया इत्यादि श्रुतिके विषै परमेश्वरकी उदासीन रूपतासे स्थितिका कथन होनेतें औ क्षेत्रज्ञजीवके कर्म फलभोगका कथन होनेतें परमेश्वरही द्युलोकादिकोंका आयतन है ॥ ७ ॥

छान्दोग्यके विषै श्रवण होता है कि। भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्यः इति ॥ अस्यार्थः ॥ भूमा निश्चय करके जिज्ञासा करनें योग्य है इति। तहां संशय है कि प्राण भूमा है वा परमेश्वर भूमा है अत आह ॥

भूमासम्प्रसादादध्युपदेशात् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके भूमा १ संप्रसादात् २ अध्युपदेशात् ३ यह तीन पद हैं संप्रसाद शब्दका वाच्यार्थ सुषुप्ति स्थान है औ तिस सुषुप्तिके विषै जागनेवाला प्राण लक्ष्यार्थ है तिस प्राणके अगाडी भूमाका उपदेश होनेतें भूमा व्यापक परमेश्वर है प्राण नहीं ॥ ८ ॥

धर्मोपपत्तेश्च ॥ ९ ॥

इस सूत्रके धर्मोपपत्तेः १ च २ यह दो पद हैं॥ यो वै भूमा तदमृतम् ॥ अस्यार्थः। जो भूमा। व्यापक है सो अमृत है इति। इन श्रुतिवाक्योंकरके श्रूयमाण जो अमृतत्व सत्यत्व स्वमाहिमप्रतिष्ठितत्व सर्वगतत्व सर्वात्मत्वादि धर्म। तिनकों परमात्माके विषै उपपन्न होनेतें भूमा परमात्मा है ॥ ९ ॥

बृहदारण्यकके विषै श्रवण होता है कि। कस्मिन्नु खल्वाकाश ओतश्च प्रोतश्चेति सहोवाचैतद्वैतदक्षरं गार्गि ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनणु इति ॥ तहां संशय है कि अक्षर शब्द करके वर्णात्मक ओंकारका ग्रहण है अथवा परमात्माका ग्रहण है अत आह ॥

अक्षरमम्बरान्तधृतेः ॥ १० ॥

इस सूत्रके अक्षरम् १ अंबरांतधृतेः २ यह दो पद हैं ॥ पृथिवीसें

आदि लेके । अम्बर । आकाशपर्यंत सर्वजगत्का । धृतेः । धारण होनेतें सर्वकों धारणेंवाला परमात्मा अक्षर है इति सूत्रार्थः ॥ औ श्रुतिका अर्थ यह है कि याज्ञवल्क्य मुनिके प्रति गार्गी पूछती भई कि हे मुने यह आकाश किसके विषै ओत प्रोत है तव मुनि बोला कि हे गार्गि जिसकों । ब्राह्मण । ब्रह्मज्ञानी पुरुष अस्थूल अनणु कहते हैं सो यह अक्षर है औ तिस अक्षरके विषै आकाश ओत प्रोत है इति ॥ १० ॥

शंकते । जो अम्बरान्तधृतिरूप कार्य कारणके अधीन है तो प्रधानकारणवादि सांख्य मतके विषैभी अंबरान्तधृतिरूप कार्य प्रधानरूप कारणके अधीन होसकताहै अत उत्तरमाह ।

साचप्रशासनात् ॥ ११ ॥

इस सूत्रके सा १ च २ प्रशासनात् ३ यह तीन पद हैं एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गार्गि सूर्याचंद्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः ॥ इस श्रुतिके विषै परमेश्वरका । प्रशासन । शिक्षा होनेतें । सा । अम्बरान्तधृति । चेतन परमेश्वरका कर्म है अचेतन प्रधानका नहीं इति सूत्रसारार्थः ॥ औ श्रुतिका अर्थ यह है कि हे गार्गि इस अक्षर परमेश्वरकी शिक्षाके विषै सूर्य चन्द्रमा धारण करेहुये स्थित हैं इति ॥ ११ ॥

अन्यभावव्यावृत्तेश्च ॥ १२ ॥

इस सूत्रके अन्यभावव्यावृत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ अम्बरान्त सर्व जगत्का आधार जो अक्षर ब्रह्म तिसका अन्यभाव । प्रधानादिकोंसैं व्यावृत्तेः । भेद होनेतें अक्षर शब्दका वाच्य परब्रह्म है और तिसीका अम्बरान्तधृति कर्म है अन्यका नहीं ॥ १२ ॥

प्रश्नोपनिषद्के विषै पिप्पलाद गुरु सत्यकाम शिष्यके प्रति ओंकारद्वारा ब्रह्मका ध्यान कहता भया । तहां संशय है कि ओं-

कारद्वारा। पर। निर्गुण ब्रह्म ध्यानके योग्य है अथवा अपर सगुण ब्रह्म ध्यानके योग्य है अत आह।

ईक्षतिकर्मव्यपदेशात्सः॥ १३॥

इस सूत्रके ईक्षतिकर्मव्यपदेशात् १सः२ यह दो पद हैं॥ स एतस्माज्जीवघनात् परात् परं पुरुषं पुरिशयम् ईक्षते। इस श्रुतिवाक्यके विषे ईक्षते इस पदका अर्थ जो दर्शन। तिसका कर्म जो पर पुरुष तिसका कथन होनेतैं परब्रह्म ओंकारद्वारा ध्यानके योग्य है इति सूत्रसारार्थः॥ औ श्रुति वाक्यका अर्थ यह है कि सो उपासक पुरुष। इस हिरण्यगर्भसें परे निर्गुण ब्रह्मकों देखताहै इति॥ १३॥

छान्दोग्यके विषे अल्प हृदय कमलका नाम दहर कहाहै तिस हृदयरूप दहरके विषे ध्यानके वास्ते दहराऽऽकाश कहाहै तह संशय है कि दहराऽऽकाश भूताकाश है अथवा जीव है वा परमात्मा है अत आह॥

दहरउत्तरेभ्यः॥ १४॥

इस सूत्रके दहरः १ उत्तरेभ्यः २ यह दो पद हैं॥ उत्तर वाक्य शेषके विषे हेतु होनेतैं भूताकाश औ जीव दहराऽऽकाश नहीं है किंतु दहराऽऽकाश परमात्मा है॥ १४॥

गतिशब्दाभ्यांतथाहिदृष्टंलिङ्गञ्च॥ १५॥

इस सूत्रके गतिशब्दाभ्यां १तथा २ हि ३ दृष्टं ४ लिंगं ५ च ६ यह छह पद हैं॥ पूर्व जो कहा कि उत्तर दहर वाक्य शेषके विषे हेतु होणेतैं दहराकाश परमात्मा है इति। सो हेतु अब दिखातेहैं। इमाः सर्वाः प्रजा अहरहर्गच्छन्त्य एतं ब्रह्मलोकं न विन्दन्तीति। अस्यार्थः। यह सर्व जीवहैं सो दिनदिनके प्रति सुषुप्तिकालके विषै अपनें हृदेमें स्थित। ब्रह्मलोकं। ब्रह्मस्वरूपको प्राप्त होतेहैं औ तिस ब्रह्मलोकको नहीं जानतेहैं इति। यह गति लिङ्गहै अर्थात् गतिरूप हेतु है। औ तैसेही

सता सोम्य तदा सम्पन्नो भवति । इस श्रुतिवाक्यके विषैवी देखाहै । अस्यार्थः । हे सोम्य श्वेतकेतो यह जीव सुषुप्तिके विषै सद् ब्रह्मके साथ प्राप्त होताहै इति । औ ब्रह्मवाचक ब्रह्मलोक शब्द पूर्वोक्त गति हेतुसैं औ शब्द हेतुसैं दहराऽऽकाश परमात्मा है ॥ १५ ॥

धृतेश्चमहिम्नोऽस्यास्मिन्नुपलब्धेः ॥ १६ ॥

इस सूत्रके धृतेः १ च २ महिम्नः ३ अस्य ४ अस्मिन् ५ उपलब्धेः ६ यह छेह पद हैं ॥ धृतेः । सर्व जगत्के धारण रूप हेतुतें औ इस धृति रूप नियमके महिमाको इस परमात्माके विषै । उपलब्धेः । प्राप्त होणें तें दहराऽऽकाश परमात्मा है ॥ १६ ॥

प्रसिद्धेश्च ॥ १७ ॥

इस सूत्रके प्रसिद्धेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ सर्वाणि ह वा इमानि भूतान्याकाशादेव समुत्पद्यन्ते ॥ इत्यादि श्रुतिकरके कारणरूपाऽऽकाश शब्दको परमेश्वरके विषै प्रसिद्ध होनेतें दहराऽऽकाश परमेश्वर है औ श्रुतिका अर्थ यह है कि । यह सर्वभूत आकाश शब्दवाच्य परमेश्वरसैं उत्पन्न होते हैं इति ॥ १७ ॥

इतरपरामर्शात् स इति चेन्नासंभवात् ॥ १८ ॥

इस सूत्रके इतरपरामर्शात् १ सः २ इति ३ चेत् ४ न ५ असंभवात् ६ यह छेह पद हैं शंकते । अथ य एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात् समुत्थाय परंज्योतिरुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यते ॥ इस श्रुतिके विषै सम्प्रसाद शब्दसैं इतर । जीवका । परामर्श । ग्रहण होणें तें सो जीव दहराऽऽकाश है । इति चेन्न । ऐसैं न कहो । कस्मात् । असंभवात् । बुद्ध्याद्युपाधि करके परिच्छिन्न जीवको आकाशके साथ उपमाका असंभव होणेंतें दहराऽऽकाश परमात्मा है । औ श्रुतिका अर्थ यह है कि अथ जाग्रत् स्वप्नके अनंतर जो यह । सम्प्रसाद । जीव है

सो इस शरीरसैं उठके समुत्थान करके । परंज्योति । परब्रह्म साक्षात्कार करके अपनें ब्रह्मरूपसैं तिसीकों प्राप्त होता है इति ॥ १८ ॥

उत्तराच्चेदाविर्भूतस्वरूपस्तु ॥ १९ ॥

इस सूत्रके उत्तरात् १ चेत् २ आविर्भूतस्वरूपः ३ तु ४ यह च्यार पद हैं ॥ पूर्वसूत्रके विषै असंभव हेतुतें जीवाऽऽशंकाकों दूर करी है । अब । उत्तरात् । उत्तर जो इंद्रके प्रति प्रजापतिके वाक्य । तिनवाक्यों करके पुनः जीवाऽऽशंकाकों उठाते हैं ॥ य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते एष आत्मा ॥ इस वाक्यकरके प्रजापति ब्रह्मा इंद्रके प्रति कहता भया कि हे इंद्र जो यह नेत्रके विषै पुरुष दीखताहै सो यह आत्मा है ऐसें नेत्रके विषै जीवका कथन करके पुनः । य एष स्वप्ने महीयमानश्चरत्येष आत्मा ॥ जो यह स्वप्नके विषै वासनामय विषयोंकरके पूजित हुआ विचारता है सो यह आत्मा है । इत्यादि वाक्यों करके जीवका निर्देश होणेतें दहराऽऽकाश जीव है । चेत् यदि ऐसें कोई कहे तिसके प्रति । आविर्भूतस्वरूपस्तु । ऐसा कहना चाहिये । तु शब्द पूर्व पक्षकी निवृत्तिके अर्थ है । तथाच उत्तर प्रजापतिवाक्योंके विषै उपाधिरहितशुद्ध जीवस्वरूपका कथन होणेतें दहराऽऽकाश जीव नहीं है किंतु परमात्मा है ॥ १९ ॥

अन्यार्थश्च परामर्शः ॥ २० ॥

इस सूत्रके अन्यार्थः १ च २ परामर्शः ३ यह तीन पद हैं ॥ जो यह अर्थ । य एष संप्रसाद । इस दहरवाक्यशेषके विषै संप्रसादशब्दसैं जीवका परामर्श ग्रहण है । सो जीवका जो स्वरूप है तिसके अर्थ नहीं किंतु जीव करके उपासनाके योग्य जो परमेश्वर तिसका जो स्वरूप है तिसके अर्थ है ॥ २० ॥

अल्पश्रुतेरिति चेत्तदुक्तम् ॥ २१ ॥

इस सूत्रके अल्पश्रुतेः १ इति २ चेत् ३ तत् ४ उक्तं ५ यह पांच पद हैं ॥ चेत् यदि ऐसें कहै कि अल्पहृदेके विषै अल्प आकाशका कथन होणेतें व्यापक परमेश्वर दहराऽऽकाश नहीं किंतु अल्प जीव दहराऽऽकाश है । सो कहना ठीक नहीं काहेतें । अर्भकौकस्त्वात्तव्यपदेशाच्च नेति चेन्न निचाय्यत्वादेवं व्योमवच्च । इस सूत्रके विषै अल्प हृदयकी अपेक्षासैं परमेश्वरके अल्पत्वका कथन है ॥ २१ ॥

मुण्डकके विषै श्रवण होता है । कि न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भांति कुतोऽयमग्निः । तमेव भांतमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभातीति ॥ तहां संशय है कि जिसके भानके । अनु । पश्चात् सर्वका भान होताहै सो । तेजो धातु । अर्थात् तेजकों धारण करनेवाला कोई पदार्थ है अथवा प्राज्ञ आत्मा है । अत आह ॥

अनुकृतेस्तस्यच ॥ २२ ॥

इस सूत्रके अनुकृतेः १ तस्य २ च ३ यह तीन पद हैं ॥ अनुकृति नाम अनुकरणका है अर्थात् जिसके भानके अनु पश्चात् भानका नाम अनुकृति है तिस अनुकृतिरूप हेतुतें सत्यसंकल्प प्राज्ञ आत्माका उक्त श्रुतिमें ग्रहण है औ सूत्रके विषै । तस्यच । यह है सो । तस्य भासा सर्वमिदं विभाति । इसके अर्थकों सूचन करता है तथाच जिसके प्रकाश करके सर्व सूर्यादिकोंका प्रकाश होताहै सो प्राज्ञ आत्मा है ॥ औ श्रुतिका अर्थ यह है कि तिस ब्रह्मके विषै न सूर्य प्रकाश करता है औ न चन्द्रमा औ तारा प्रकाश करते हैं औ न यह बिजली प्रकाश करती है जहां सूर्यादिक नहीं प्रकाशैं तहां अल्पतेजवाला अग्नि कैसें प्रकाश करै औ तिस ब्रह्मके प्रकाशके पश्चात् सर्व जगत् प्रकाशित होताहै औ तिसकी । भासा । दीप्ति करके यह सर्व जगत् भासता है इति ॥ २२ ॥

अपिचस्मर्यते ॥ २३ ॥

इस सूत्रके अपि १ च २ स्मर्यते ३ यह तीन पद हैं॥ अपि।निश्चय करके अन्य किसीसें प्रकाशित न होवै औ आप सर्वकों प्रकाशै ऐसैं प्राज्ञ आत्माके स्वरूपका भगवद्गीताके विषै स्मरण होता है। नतद्भासयतेसूर्यो न शशांको न पावकः। यद्गत्वा ननिवर्त्तंते तद्धाम परमं मम इति। अस्यार्थः। हे अर्जुन! तिस मेरे स्वरूपकों सूर्य चन्द्रमा औ अग्नि यह नहीं प्रकाशते हैं औ उपासक लोक जिसकों प्राप्तहोके पीछे इस संसारमें नहीं आते हैं सो मेरा परम धाम स्वरूप है इति ॥ २३ ॥

कठवल्लीके विषै श्रवण होताहै कि। अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषो ज्योतिरिवाधूमकईशानोभूतभव्यस्यसएवाद्यसउश्वएतद्वैतत् इति ॥ तहां संशय है कि अङ्गुष्ठमात्र पुरुष किंवा जीवात्मा है किंवा परमात्मा है अत आह ॥

शब्दादेवप्रमितः ॥ २४ ॥

इस सूत्रके शब्दात् १ एव २ प्रमितः ३ यह तीन पद हैं ॥ ईशानो भूतभव्यस्य इस शब्दसें निश्चय होता है कि अङ्गुष्ठमात्र परिमाणवाला पुरुष परमात्मा है। औ श्रुतिका अर्थ यह है यमराज कहता भया कि हे नाचिकेतः धूमरहित अग्निकी ज्योतिके सदृश अङ्गुष्ठमात्र परिमाणवाले हृदेके विषै अङ्गुष्ठमात्र परिमाणवाला पुरुष है औ भूत भविष्यत् वर्त्तमानका। ईशान। नियंता है औ सोई अब है सोई कल्ह है जो तूं पूंछता है सो यह पुरुष है इति ॥ २४ ॥

सर्वगत परमात्माका अङ्गुष्ठमात्र परिमाण कहना ठीक नहीं अत आह।

हृद्यपेक्षयातुमनुष्याधिकारत्वात् ॥ २५ ॥

इस सूत्रके हृदि १ अपेक्षया २ तु ३ मनुष्याधिकारत्वात ४ यह च्यार पद हैं ॥ समर्थ औ सकाम मनुष्यकों शास्त्रका अधिकार होणेतें

औ मनुष्यके हृदेमें परमात्माकी स्थिति होणेतैं तिस स्थितिकी अपेक्षासैं परमात्माकों अङ्गुष्ठमात्र परिमाणका कथन है ॥ २५ ॥

तदुपर्यपिबादरायणःसम्भवात् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके तदुपरि १ अपि २ बादरायणः३ संभवात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो पूर्वसूत्रके विषे कहा कि मनुष्यकों शास्त्रका अधिकार है औ मनुष्यके हृदयकी अपेक्षासैं परमात्माकों अङ्गुष्ठमात्र परिमाणका कथन है सो कहना ठीक है परंतु मनुष्योंके उपरि जो शरीरधारी देवादिक हैं तिनके सामर्थ्यका औ मोक्षकी इच्छाका संभव होणेतैं देवादिकोंकोभी शास्त्रका आधिकार है औ तिनके हृदय औ अङ्गुष्ठकी अपेक्षासैं परमात्मा अङ्गुष्ठमात्र है ऐसैं बादरायण आचार्य मानता है ॥ २६ ॥

विरोधः कर्मणीति चेन्नानेकप्रतिपत्तेर्दर्शनात् ॥ २७ ॥

इस सूत्रके विरोधः १ कर्मणि२ इति ३ चेत् ४न ५अनेकप्रतिपत्तेः ६ दर्शनात् ७यह सात पद हैं ॥ जो इंद्रादिकदेवोंके शरीरका स्वीकार करके शास्त्रका आधिकार कहोगे तो शरीरधारी इंद्रादिक देवोंको एककालके विषे बहुत यज्ञकर्मका अंग नहीं होनेतैं यज्ञकर्मके विषे विरोध होवैगा । इतिचेन्न ॥ ऐसैं न कहो । कस्मात् अनेकप्रतिपत्तेर्दर्शनात् । जैसैं एक योगी अपनें योगबलसैं अनेक शरीर धारता है तैसैं एक देवके भी अपने सामर्थ्यबलसैं अनेक शरीरकी प्राप्तिका श्रुतिस्मृतिके विषै दर्शन होनेतैं यज्ञादि कर्मके विषै विरोध नहीं॥२७॥

शब्दइतिचेन्नातःप्रभवात्प्रत्यक्षानुमानाभ्याम् ॥ २८ ॥

इस सूत्रके शब्दः१ इति २ चेत् ३ न४अतः५प्रभवात् ६प्रत्यक्षानुमानाभ्याम् ७ यह सात पद हैं ॥ यद्यपि कर्मके विषै विरोध नहीं तथापि औत्पत्तिक सूत्रके विषै शब्द औ अर्थकों अनादि मानके तिनके सम्बन्धकों अनादि मान्या है औ वेदकों अन्य किसी प्रमाणकी

अपेक्षा न होनेतैं वैदिक शब्दके विषै प्रामाण्य स्थापित किया है । प्रमाणके धर्मका नाम प्रामाण्य है औ जो अब अनित्य जन्म मरणवाले देवादि शरीरके साथ नित्यशब्दका सम्बन्ध कहोगे तो सम्बन्धकों अनित्य होनेतैं शब्दके विषै विरोध होवैगा इति चेन्न ऐसें न कहो । कस्मात् । अतः प्रभवात् । इसी वैदिकशब्दसैं देवादि जगत्की उत्पत्ति होनेतैं । शंकते । तुम शब्दसैं जगत्की उत्पत्ति कैसे जानते हो अत आह । प्रत्यक्षानुमानाभ्याम् । अन्य प्रमाणकी अपेक्षा न करनेतैं श्रुति प्रत्यक्ष है औ अन्य प्रमाणकी अपेक्षा करनेतैं स्मृति अनुमान है। सो श्रुति स्मृति नित्य वैदिकशब्दसैं जगत्की उत्पत्ति कही है ॥ २८ ॥

अतएवचनित्यत्वम् ॥ २९ ॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ च ३ नित्यत्वं ४ यह च्यार पद हैं॥ देवादि सर्व जगतकों वेदशब्दसैं उत्पन्न होनेतैं वेदशब्द नित्य है ॥ इसी अर्थकों वेदव्यासकी स्मृति कहती है ॥ युगान्तेऽन्तर्हितान् वेदान् सेतिहासान्महर्षयः । लेभिरे तपसा पूर्वमनुज्ञाताः स्वयंभुवा । इति ॥ अस्यार्थः । प्रलयकालके विषे इतिहासोंकरके सहित अन्तर्धान भये जो वेद तिनकों सृष्टिके आदि कालमें ब्रह्माकरके आज्ञाकों प्राप्तभये महर्षि तप करके प्राप्त होते भये इति ॥ २९ ॥

महाप्रलयके विषै सर्वजगत् अपनें नाम रूपकों त्यागके लीन होता है औ महासृष्टिके विषै नवीन उत्पन्न होताहै इसीसैं शब्द औ अर्थके सम्बन्धकों अनित्य होनेतैं शब्द प्रामाण्यके विषै विरोध है अत आह ॥

समाननामरूपत्वाच्चावृत्तावप्यविरोधो दर्शनात्स्मृतेश्च ॥ ३० ॥

इस सूत्रके समाननामरूपत्वात् १ च २ आवृत्तौ ३ अपि ४ अविरोधः ५ दर्शनात् ६ स्मृतेः ७ च ८ यह आठ पद हैं ॥ सूर्याचन्द्रमसौ

धाता यथापूर्वमकल्पयत् । इत्यादि श्रुतिसैं । औ ऋषीणां नामधेयानि याश्चवेदेषुदृष्टयः ॥ शर्वर्यन्तेप्रसूतानांतान्येवैभ्योददात्यजः । इत्यादिस्मृतिसैं । आवृत्तावपि । वारंवार महाप्रलय महासृष्टिके विषे भी जगत् समान नामरूपवाला होनेतैं शब्द प्रामाण्यके विषे विरोध नहीं । धाता परमेश्वर पैहिले कल्पमैं जैसे सूर्य चन्द्रमा थे तैसेही रचताभया इति श्रुत्यर्थः । औ । अजः । परमेश्वर । प्रलयके अन्तमें उत्पन्नभये ऋषियोंके नाम औ वेदोंके विषे दृष्टि जैसे पैहली पूर्वकल्पमैं थे तैसेही तिनकों देता है इति स्मृत्यर्थः ॥ ३० ॥

मध्वादिष्वसम्भवादनधिकारंजैमिनिः ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके मध्वादिषु १ असंभवात् २ अनधिकारं ३ जैमिनिः ४ यह च्यार पद हैं ॥ ब्रह्मविद्याके विषे देवादिकोंका अधिकार नहीं ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है । कस्मात् । मध्वादिष्वसंभवात् । असौआदित्योमधु । यह मधुविद्याका वाक्य है । इसका अर्थ यह है कि देवोंके मोदका हेतु होनेतैं यह आदित्य मधुकी न्याईं मधु है । ऐसैं मनुष्यलोक आदित्यका मधुरूपसैं ध्यान करतेहैं इहां मनुष्य ध्याता है औ आदित्य ध्येय है । जो देवोंकों विद्या अधिकार होवै तो इस विद्याके विषै आदित्यदेव किसका ध्यान करै अपना आपहि ध्याता औ ध्येय नहीं होसकता ॥ ३१ ॥

ज्योतिषिभावाच्च ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके ज्योतिषि १ भावात्२च ३ यह तीन पद हैं ॥ आदित्य सूर्य चंद्र इत्यादि शब्दोंका ज्योतिर्मंडलके विषे प्रयोग होनेतैं औ । आदित्यः पुरस्तादुदेतापश्चादस्तमेता । इस मधुविद्यावाक्य शेष करके ज्योतिर्मंडलके विषे आदित्य शब्दकों प्रसिद्ध होनेतैं आदित्यादि देव शरीरधारी नहीं हैं । औ वाक्यशेषका अर्थ । आदित्य सर्वके पैहली उदय होताहै औ सर्वके पीछे अस्त होताहै इति ॥ ३२ ॥

भावंतुबादरायणोऽस्तिहि ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके भावं १ तु २ बादरायणः ३ अस्ति ४ हि ५ यह पांच पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है यद्यपि देवता करके मिलित मध्वादि विद्याके विषै देवादिकोंका अधिकार नहिं है तथापि शुद्ध ब्रह्म विद्याके विषै देवादिकोंके अधिकार भावकों बादरायण आचार्य मानता है। औ इस अर्थकों श्रुतिभी कहती है। "तद्योयोदेवानांप्रत्यबुध्यतसस एवतदभवत्"। इति। अस्यार्थः। देवोंके विषै जो जो देव ब्रह्मकों जानता भया सो सो ब्रह्म होता भया इति। औ देवताके शरीर धारनेमैं स्मृति प्रमाण है। "आदित्यः पुरुषोभूत्वाकुंतीमुपजागमह इति ॥ अस्यार्थः ॥ आदित्य पुरुष होके कुंतीके समीप आताभया इति ॥ ३३ ॥

शुगस्यतदनादरश्रवणात्तदा द्रवणात्सूच्यतेहि ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके शुक् १अस्य २तदनादरश्रवणात् ३ तदा४द्रवणात्५ सूच्यते ६ हि७यह सात पद हैं ॥ जैसैं देवता औ द्विजातिमनुष्योंकों विद्याका अधिकार है तैसें शूद्रकोंभी विद्याका अधिकार है इसशंकाकों दूर करनें वास्ते इस अधिकरणका आरंभ है श्रवण होताहै कि जानश्रुति राजा निदाघकालमें रात्रिके विषै अपनें महलके उपर सोता भया तब तिस राजाके अन्नदानादिकोंसैं प्रसन्नभयऋषि हैं सो हंस होके राजाके ऊपर आते भये तिन हंसोंमें जो पीछे हंस था सो अगाडी चलनेंवाले हंसको बोला कि हे भद्राक्ष ! जानश्रुति राजाका तेज स्वर्ग पर्यंत स्थित होरहा है सो तेरेकों दग्ध करेगा तब अगाडी चलनेवाला हंस बोला कि इस विद्याहीन राजाका क्या तेज है ब्रह्मज्ञानी रैक्व ऋषिका तेज बहुत है हमारे वचनसैं राजा रैक्वके समीप जायके विद्यावान् होवैगा यह हंसोंका अभिप्राय था हंसोंके वाक्यसैं अपना अनादर सुना तब राजाको शोक उत्पन्न भया तब ६ सौ गौ औ एक रथ लेके रैक्वके समीप जाताभ-

या गौ औ रथ निवेदन करके राजा बोला कि हे गुरो मेरेकों ! विद्याका उपदेश करो तब कन्यार्थी रैक्व बोला कि हे शूद्र! यह रथ गौ तेरेहि रहो मेरे पत्नीहीनके किसकाम हैं इति ॥ यद्यपि राजा जातिशूद्र नहिंथा तथापि जो हंसवाक्यसैं राजाकों शोक उत्पन्न भयो सोहि हे! शूद्र! इस रैक्व वाक्यसैं सूचित भया ॥ ३४ ॥

क्षत्रियत्वगतेश्चोत्तरत्रचैत्ररथेनालिङ्गात् ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके क्षत्रियत्वगतेः १ च २ उत्तरत्र ३ चैत्ररथेन ४ लिंगात् ५यह पांच पद हैं॥संवर्ग विद्या वाक्यशेषके विषे श्रवण होता कि चित्ररथ राजाके वंशमें अभिप्रतारिनाम क्षत्रिय राजा होता भया तिसके साथ समान विद्याके विषे जानश्रुति राजाका कथन होनेतैं जानश्रुति राजा क्षत्रिय था जातिशूद्र नहिं था जाति शूद्रकों विद्याका अधिकार नहीं॥३५॥

संस्कारपरामर्शात्तदभावाभिलापाच्च ॥ ३६ ॥

इस सूत्रके संस्कारपरामर्शात् १तदभावाभिलापात्२ च३ यह तीन पद हैं॥ शास्त्रके विषे विद्या ग्रहणका अङ्ग उपनयनादिसंस्कार कहाहै औ शूद्रकों उपनयनादि संस्कारका अभाव कहाहै इसीसैं शूद्रकों विद्याका अधिकार नहिं ॥ ३६ ॥

तदभावनिर्धारणेचप्रवृत्तेः ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके तदभावनिर्धारणे १ च २ प्रवृत्तेः ३ यह तीन पद हैं ॥ श्रवण होता है कि सत्यकामका पिता मरगया जब अपनी माता जाबाला कों पूछा कि मेरा गोत्र क्या है तब जाबाला बोली कि मैं तेरे पिताकी सेवामें व्यग्रचित्त रही इसीसैं तेरे पिताका गोत्र नहिं जानती इतना जानतीहों कि जाबाला मेरा नाम है औ सत्यकाम तेरा नाम है तिसके अनन्तर सत्यकाम गौतमऋषिके समीप जाताभया जब गौतम बोला कि तेरा गोत्र क्या है तब सत्यकाम बोला कि मैं मेरा गोत्र नहीं जानता औ मेरी माताभी नहीं जानती है परंतु मेरी माता बोली कि तुम उपनयन

संस्कारके वास्ते आचार्यके समीप जाओ औ ऐसें कहो कि सत्यकाम मेरा नाम है औ जाबालाका पुत्रहों इति।तब गौतम बोला कि हे सौम्यतेरे सत्यवचन करके निर्धार होता है कि तूं शूद्र नहीं है तूं समिध लेआ तेरा उपनयन करेंगे इस गौतमकी प्रवृत्तिसें जाना जाताहै कि शूद्रकों विद्याका अधिकार नहीं है ॥ ३७ ॥

श्रवणाध्ययनार्थप्रतिषेधात्स्मृतेश्च ॥ ३८ ।

इस सूत्रके श्रवणाध्ययनार्थप्रतिषेधात् १ स्मृतेः २ च ३ यह तीन पद हैं ॥ अथास्यवेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यांश्रोत्रप्रतिपूरणमिति । न शूद्रायमतिंदद्यात्इतिच ॥ इन स्मृतियों करके शूद्रकों वेद श्रवणका औ वेदके अध्यायनका औ वेदार्थके अनुष्ठानका निषेध होनेतें शूद्रकों वेदविद्याका अधिकार नहिं । औ स्मृतिका अर्थ यह है कि जब ब्राह्मण वेदका पाठ करे तब शूद्र प्रमादसें वेदको सुने तो सीसेकों वा लाखकों तपायके तिसके श्रोत्रकों पूरण करे इति । औ शूद्रकों वेदका ज्ञान नहिं देना इति च ॥ ३८ ॥

जिस करके यह सर्व जगत् चेष्टा करता है ॥सो प्राण है वा चिदात्मा है अत आह ॥

कम्पनात् ॥ ३९ ॥

इस सूत्रका कंपनात्१ यह एकहि पद है ॥(भीषास्माद्वातःपवते-भीषोदेतिसूर्यः ॥ भीषास्मादग्निश्चेंद्रश्चमृत्युर्धावतिपंचमः ॥) इस श्रुतिसें जाना जाता है कि सर्वजगत्की चेष्टाका हेतु चिदात्मा है । औ श्रुतिका अर्थ यह है कि इस परमेश्वरसें भय करके वायु पवित्र करता है औ सूर्य उदय होता है औ अग्नि दाह करता है औ इंद्र वृष्टि करता है औ पांचमा मृत्यु दौडता है इति ॥ ३९ ॥

छान्दोग्यके विषे श्रवण होताहै कि यह जीव सुषुप्तिकालमें इस शरीरको त्यागके परज्योतिके साथ मिलता है तहां संशय है कि

ज्योतिशब्दसें तमोनाशक तेजका ग्रहण है वा परब्रह्मका ग्रहण है यद्यपि । ज्योतिश्चरणाभिधानात् । इस सूत्रके विषे ज्योतिका विचार किया है तथापि तहां ज्योतिःशब्द अपने अर्थकों त्यागके ब्रह्मके विषे वर्तता है औ इहां अर्थ त्यागमें कोई कारण नहीं दीखता यह पूर्व पक्षीका अभिप्राय है अत आह ॥

ज्योतिर्दर्शनात् ॥ ४० ॥

इस सूत्रके ज्योतिः १ दर्शनात्२ यह दो पद हैं ॥ (यआत्माऽपहतपाप्मा ॥ अस्यार्थः जो आत्मा है सो सर्वपापरहित है इति ॥) इस श्रुतिवाक्यके विषे सर्वपापरहितत्वका दर्शन होनेतें ज्योतिशब्दसें परब्रह्मका ग्रहण है ॥ ४० ॥

छान्दोग्यके विषे श्रवण होताहै कि आकाशोहवैनामरूपयोर्निर्वहिता । अस्यार्थः । नामरूपका निर्वाह करनेवाला आकाश है इति । तहां संशय है कि आकाशशब्दसें भूताकाशका ग्रहण है वा परब्रह्मका ग्रहण है अत आह ॥

आकाशोऽर्थान्तरत्वादिव्यपदेशात् ॥ ४१ ॥

इस सूत्रके आकाशः १ अर्थांतरत्वादिव्यपदेशात् २ यह दो पद हैं॥ (तेयदन्तरातद्ब्रह्म । अस्यार्थः । जो तेरे भीतर है सो ब्रह्म है इति) इसश्रुति वाक्यकरके नाम रूपसें भिन्न आकाशका कथन होनेतें आकाशशब्दसें परब्रह्मका ग्रहण है । औ जो पूर्व । आकाशस्तल्लिङ्गात् । यह सूत्र कहा है तिसका विस्तार इहां कहा है इसीसें पुनरुक्तिदूषण नहीं ॥ ४१ ॥

बृहदारण्यकके विषे श्रवण होता है कि याज्ञवल्क्य ऋषिके प्रति राजाजनक पूछताभया कि हे भगवन् ! आत्मा कौन है तब ऋषि बोले कि विज्ञानमय आत्मा है । तहां संशय है कि याज्ञवल्क्य ऋषि संसारी जीवात्माका स्वरूप कहतेभये वा असंसारी प्राज्ञात्माका स्वरूप कहतेभये अत आह ।

सुषुप्त्युत्क्रान्त्योर्भेदेन ॥ ४२ ॥

इस सूत्रके सुषुप्त्युत्क्रान्त्योः १ भेदेन२यह दो पद हैं॥ सुषुप्तिके विषै औ मरणके विषै जीवात्माका औ प्राज्ञात्माकाभेद करके कथन किया है इसीसैं जाना जाताहै कि याज्ञवल्क्य ऋषि असंसारी प्राज्ञात्माका स्वरूप जनकके प्रति कहतेभये ॥ ४२ ॥

पत्यादिशब्देभ्यः ॥ ४३ ॥

इस सूत्रका पत्यादिशब्देभ्यः १ यह एकहि पद है॥(सर्वस्यवशी-सर्वस्येशानःसर्वस्याधिपतिः) इत्यादि श्रुतिवाक्योंके विषै पत्यादि शब्दोंसैंभी असंसारी प्राज्ञात्माके स्वरूपका कथन है । औ श्रुतिवाक्यका अर्थ यह है कि सो परमात्मा सर्वके अपराधीन है औ सर्वका नियंता है औ सर्वका अधिपति है इति ॥ ४३ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायांब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपि-कायांप्रथमाध्यायस्यतृतीयपादः ॥ ३ ॥

प्रथमाध्याये चतुर्थःपादः।

आनुमानिकमप्येकेषामितिचेन्नशरीररूपकविन्यस्त गृहीतेर्दर्शयतिच ॥ १ ॥

इस सूत्रके आनुमानिकं १ अपि २ एकेषां ३ इति ४ चेत् ५ न ६ शरीररूपकविन्यस्तगृहीतेः ७ दर्शयति ८ च ९ यह नौ पद हैं॥ ईक्षतेर्नाशब्दम् इस सूत्रके विषै कहाहै कि अशब्दप्रधान जगत्का कारण नहीं इति । अब सांख्यवादी कहताहै कि यद्यपि प्रधान अनुमानसैं जाना जाताहै तथापि किसी वेदकी शाखावाले पुरुषोंको प्रधान शब्द प्राप्त होताहै जैसैं कठवल्लीके विषै। महतः परमव्यक्तमव्यक्तात् पुरुषःपरः इति। अस्यार्थः। महत्तत्त्वसैं पर अव्यक्त है औ अव्यक्तसैं पर

पुरुष है इति इस वाक्यमें अव्यक्तनाम प्रधानका है सो प्रधान कारण है यह सांख्यवादीका कहना समीचीन नहीं काहेतें किसी प्रकरणके विषै आत्माकों रथी रूपसें ग्रहण करके औ शरीकों रथरूपसें ग्रहण करके दिखाया है इसीसें यहभी जाना जाता हैं कि उक्तवाक्यके विषै अव्यक्त शब्दसें शरीरका ग्रहण है प्रधानका नहीं ॥ १ ॥

पूर्व जो कहा कि उक्तवाक्यके विषै अव्यक्तशब्दसें प्रधानका ग्रहण नहीं किंतु शरीरका ग्रहण है सो कहना ठीक नाहिं काहेतें अव्यक्त शब्दका अर्थ सूक्ष्म है औ शरीर स्थूल है सो अव्यक्त शब्दका अर्थ नहीं हो सकताहै अत आह ॥

सूक्ष्मंतुतदर्हत्वात् ॥ २ ॥

इस सूत्रके सूक्ष्मं १ तु २ तदर्हत्वात् ३यह तीन पद हैं॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है इहां सूक्ष्मशरीर कारण रूप करके विवक्षित है सो अव्यक्तशब्दके योग्य है पूर्व अवस्थाके विषै यह जगत् अपने नामरूपको त्यागके बीजशक्तिके विषै स्थित है सोई अव्यक्त शब्दके योग्य है ॥ २ ॥

शंकते। जो तुम कहते हो कि सृष्टिसें पूर्व अवस्थाके विषै यह जगत् अपनें नामरूपको त्यागके बीज शक्तिमें स्थित रहताहै इसीकों हम प्रधान कारण वाद कहते हैं। अत आह ॥

तदधीनत्वादर्थवत् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके तदधीनत्वात्१ अर्थवत्२यह दो पद हैं॥ जो हम इस जगत्की पूर्व अवस्थाकों स्वतंत्र माने तो हमारे मतमें प्रधान कारण वादका प्रसंग होवै किंतु इस जगतकी पूर्व अवस्थाको परमेश्वरके अधीन मानते हैं इसीसें यह पूर्व अवस्था अर्थवाली है ॥ ३ ॥

ज्ञेयत्वावचनाच्च ॥ ४ ॥

इस सूत्रके ज्ञेयत्वावचनात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ गुणपुरुषा-

न्तरज्ञानात्कैवल्यमिति । यह सांख्यस्मृति है । इहां सांख्यवादी कह-ताहै कि जब सत्त्व रज तम इन तीन गुणरूप प्रधानसैं पुरुषका भेद-ज्ञान होवै तब मोक्ष होवै औ तीन गुणरूप प्रधानकों जाने विना पुरु-षका भेदज्ञान होवै नहीं इसीसैं प्रधान ज्ञेय है । यह सांख्यवादीका कहना ठीक नहीं काहेतें । महतः परमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषःपरः । इस वाक्यके विषै प्रधानकों ज्ञेय नहीं कहा किंतु अव्यक्त इतना शब्द मात्र कहा है इसीसैं अव्यक्त शब्द करके प्रधानका ग्रहण नहीं ॥ ४ ॥

वदतीतिचेन्नप्राज्ञोहिप्रकरणात् ॥ ५ ॥

इस सूत्रके वदति १ इति २ चेत् ३ न ४ प्राज्ञः ५ हि ६ प्रकर-णात् ७ यह सात पद हैं । अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययम् । इत्यादि श्रुति अव्यक्तशब्दवाच्य प्रधानकों ज्ञेय कहती हैं यह सांख्यवादीका कहना समीचीन नहीं काहेतें यह प्रकरण प्रधानका नहीं किंतु प्राज्ञात्माका है इस श्रुतिके विषै जो शब्दसैं रहित औ स्पर्शसैं रहित औ रूपसैं रहित औ अखण्ड एकरस कहा है सो प्राज्ञात्मा है ॥ ५ ॥

त्रयाणामेवचैवमुपन्यासःप्रश्नश्च ॥ ६ ॥

इस सूत्रके त्रयाणां १ एव २ च ३ एवं ४ उपन्यासः ५ प्रश्नः ६ च ७ यह सात पद हैं ॥ कठवल्लीके विषै श्रवण होताहै कि नचिकेताके प्रति यमराज कहता भया कि हे नचिकेतः तूं मेरेसैं तीन वर मांग तब नचिकेता अग्नि १ जीव २ परमात्मा ३ इन तीनके जाननेवास्ते तीन प्रश्न करताभया औ नचिकेताके अगाडी इन तीनहींका निरूपण यम-राज करताभया प्रधानकों विषय करनेवाला न प्रश्न है औ न निरूपण है इसीसैं प्रधान अव्यक्तशब्दका वाच्य नहीं औ ज्ञेयभी नहीं ॥ ६ ॥

महद्वच्च ॥ ७ ॥

इस सूत्रके महद्वत् १ च २ यह दो पद हैं ॥ जैसैं सत्त्वगुण प्रधान प्रकृतिका जो पहिला परिणाम है तिसके विषै सांख्यवादी महत्शब्दका

प्रयोग करते हैं तैसैं । बुद्धेरात्मा महान्परः । बुद्धिसैं महान् आत्मा परे है इत्यर्थः॥ इत्यादि वैदिक प्रयोगके विषै आत्मशब्दरूप हेतु होनेंतै महत् शब्द प्रकृतिके परिणामकों नहीं कहता तैसैंहीं वैदिक प्रयोगके विषै अव्यक्त शब्द प्रधानको नहीं कहता इसीसैं प्रधान अशब्द है ॥ ७ ॥

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीःप्रजाःसृजमानांसरूपाः ॥ अजोह्येकोजुषमाणोऽनुशेतेजहात्येनांभुक्तभोगामजोन्यः ॥ अस्यार्थः। रज सत्व तम इन तीन गुणमयी औ अपनें सदृश बहुत प्रजाकों उत्पन्न कररही ऐसी एक अजा प्रकृति है तिसकों एक अजपुरुष सेवताहुवा सुखी दुःखी होके संसारकों प्राप्त होता है औ दुसरा अज विरक्त पुरुष किया है भोग जिसका ऐसी प्रकृतिकों त्यागता है इति ॥ इस श्रुतिके विषै अजानाम प्रधानका है सो श्रुतिमूलक प्रधान अशब्द नहीं यह सांख्यवादीकी शंका है तिसकों दूर करते हैं ॥

चमसवदविशेषात् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके चमसवत् १ अविशेषात् २ यह दो पद हैं ॥ अर्वाग्बिलश्चमसऊर्ध्वबुध्नः ॥ जैसैं इसमंत्रके विषै यह नियम नहीं होसकता कि जिसका नीचे बिल होवै औ उपरसैं गोल होवै ऐसा चमसनामा यज्ञपात्रही होता है अन्यभी सर्वत्र यथा कथंचित ऐसा होसकता है। तैसैं अजामेकां इस मंत्रके विषैभी यह नियम नहिं होसकता कि अजाशब्दसैं सांख्यपरिकल्पित प्रधानका ग्रहण है अन्यमायादिकोंकाभी ग्रहण होसकता है ॥ ८ ॥

सांख्यपरिकल्पित प्रधानका नाम अजा नहीं है तो अजानाम किसका है अत आह।

ज्योतिरुपक्रमात्तुतथाह्यधीयतएके ॥ ९ ॥

इस सूत्रके ज्योतिरुपक्रमात् १ तु २ तथा ३ हि ४ अधीयते ५

एके ६ यह छेह पद हैं ॥ तुशब्द निश्चयार्थ है जो ज्योतितें आदिलेके परमेश्वरसैं उत्पन्न भये हैं औ जरायुज अण्डज स्वेदज उद्भिज्ज इन च्यार प्रकारके भूतोंके कारण हैं ऐसे तेज १ जल २ पृथिवी ३ इन तीन भूतोंका नाम अजा है सांख्यकल्पित तीनगुणका नाम अजा नहीं औ छान्दोग्यशाखावाले कहते हैं कि । लोहित लालरूप तेजका है औ शुक्लरूप जलका है औ कृष्णरूप पृथिवीका है इसीसैं इन तीन भूतोंका नाम अजा है इति ॥ ९ ॥

शंकते । तेज १ जल २ पृथिवी ३ इन तीनके विषै अजाकी आकृति नहीं है औ इन तीनके जन्मका श्रवण होता है औ अजानाम अजन्माका है सो अजन्मा प्रधान है तिसीका नाम अजा है अत आह ॥

कल्पनोपदेशाच्चमध्वादिवदविरोधः ॥ १० ॥

इस सूत्रके कल्पनोपदेशात् १ च २ मध्वादिवत् ३ अविरोधः ४ यह च्यार पद हैं ॥ यह अजाशब्द आकृति औ अजन्मके निमित्त नहीं है किंतु जैसें आदित्य मधु नहीं है परन्तु आदित्यके विषै मधुकी कल्पना करके उपासना करते हैं तैसें तेज १ जल २ पृथिवी ३ इन तीनके विषै अजाकी कल्पनाका उपदेश होनेतैं कोई विरोध नहीं ॥ १० ॥

पुनः शंकते । यस्मिन् पञ्च पञ्चजना आकाशश्चप्रतिष्ठितः तमेवमन्य आत्मानंविद्वान्ब्रह्मामृतोऽमृतमिति । इस श्रुतिके विषै २ दो पञ्च-शब्दका श्रवण होता है औ पञ्चकों पञ्चगुणा करनेसैं पच्चीस होते हैं सोई पच्चीसतत्त्व सांख्यमें कहे हैं इसीसैं प्रधानशब्द श्रुति मूलक है अत आह ॥

नसंख्योपसंग्रहादपि नानाभावादतिरेकाच्च ॥ ११ ॥

इस सूत्रके न १ संख्योपसंग्रहात् २ अपि ३ नानाभावात् ४ अति-रेकात् ५ च ६ यह छेह पद हैं ॥ संख्याका उपसंग्रह होनेतैं प्रधान श्रुति

मूलक नहीं हो सकता काहेतें यह पच्चीस तत्त्व नाना हैं इन पञ्च पञ्चके विषै ऐसा साधारण धर्म कोई नहीं है जिससैं पच्चीसकी संख्याका ग्रहण होवै जैसैं सप्तऋषि सप्त हैं तैसैंही पञ्चजन पञ्च हैं पच्चीस नहीं हैं औ इस श्रुतिके विषै आकाश औ आत्मा यह दो अधिक कहे हैं इसीसैं पच्चीस तत्त्वका ग्रहण नहीं होसकता । औ श्रुतिका अर्थ यह है कि । प्राण १ चक्षु २ श्रोत्र ३ अन्न ४ मन ५ औ इनका कारण आकाश यह जिसके विषै स्थित हैं तिस अमृत ब्रह्म आत्माको मैं मानताहूं । औ इस मननसैं मैं विद्वान् अमृतरूपहों इति ॥ ११ ॥

जो पच्चीस तत्त्वका नाम पञ्चजन नहीं तो किसका नाम है इस शंकाको दूर करते हैं सूत्रकार ॥

प्राणादयोवाक्यशेषात् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके प्राणादयः १ वाक्यशेषात् २ यह दो पद हैं ॥ यस्मिन् पञ्च पञ्चजना इस वाक्यके उत्तर ब्रह्मस्वरूपनिरूपणके वास्ते । प्राणस्यप्राणमुतचक्षुषश्चक्षुरुतश्रोत्रस्य श्रोत्रमन्नस्यान्नं मनसोयेमनोविदुः । यह वाक्यशेष है इसके विषै जो प्राण १ चक्षु २ श्रोत्र ३ अन्न ४ मन ५ यह पञ्च कहे हैं सो पञ्चजन है काहेतें पञ्चजनशब्दकी प्राणादिकोंमें लक्षणा है । औ वाक्यशेषका अर्थ यह है कि जो विवेकी पुरुष है सो तिस ब्रह्मको प्राणका प्राण औ चक्षुका चक्षु औ श्रोत्रका श्रोत्र औ अन्नका अन्न औ मनका मन जानते हैं इति ॥ १२ ॥

पुनःशंकते । माध्यंदिनीशाखावाले प्राणादिकोंके विषै अन्नका कथन करतेहैं तिनके मतमें प्राणादिक पञ्चजन हैं औ काण्वशाखावाले प्राणादिकोंके विषै अन्नका कथन नहीं करते तिनके मतमें प्राणादिक पञ्चजन कैसें हैं अत आह ॥

ज्योतिषैकेषामसत्यन्ने ॥ १३ ॥

इस सूत्रके ज्योतिषा १ एकेषां २ असति ३ अन्ने ४ यह च्यार पद हैं ॥

यद्यपि काण्वशाखावाले प्राणादिकोंके विषै अन्नका कथन नहीं करते तथापि ज्योति करके पञ्च संख्याको पूरतेहैं ॥ १३ ॥

आत्मन आकाशः संभूतः। आत्मासैं आकाश उत्पन्न होताभया। तत्तेजोसृजत। सो ब्रह्म तेजको रचताभया। सप्राणमसृजत। सो प्राणको रचताभया। इत्यादि वेदांतवाक्योंके विषै सृष्टिक्रमका विरोध होनेतैं जगत्का कारण ब्रह्म नहीं हो सकताहै अत आह ॥

कारणत्वेनचाकाशादिषुयथाव्यपदिष्टोक्तेः ॥ १४ ॥

इस सूत्रके कारणत्वे १ न २ च ३ आकाशादिषु ४ यथा ५ व्यपदिष्टोक्तेः ६ यह छेह पद हैं ॥ जैसा एक वेदांतके विषै सर्वज्ञ सर्वेश्वर अद्वितीय ब्रह्म जगत्का कारण कहा है तैसाही दूसरे वेदांतके विषै कहा है इसीसैं नाना आकाशादि कार्यके विषै सृष्टिक्रमका विरोध है औ कारण ब्रह्मके विषै कोई विरोध नहीं ॥ १४ ॥

असद्वाइदमग्रआसीत् यह जगत् सृष्टिके पूर्व असत् होताभया इस वाक्यसैं जाना जाता है कि इस जगत्का कारण असत् है सत् नहीं अत आह ॥

समाकर्षात् ॥ १५ ॥

इस सूत्रका समाकर्षात् १ यह एकहि पद है ॥ असद्वा इदमग्र आसीत्। इस वाक्यके अगाडी असत्वादकों दूर करके। सद्वाइदमग्रआसीत्। यह जगत् सृष्टिके पैहिले सत् होताभया इस वाक्यका समाकर्षण कियाहै इसीसैं जाना जाताहै कि इस जगत्का कारण सत् ब्रह्म है ॥ १५ ॥

कौषितकि ब्राह्मणके विषै श्रवण होताहै कि काशीका राजा अजातशत्रु बालाकि ब्राह्मणके प्रति कहताभया कि। योवैबालाकएतेषांपुरुषाणांकर्त्तायस्यवैतत्कर्मसवैवेदितव्यः इति ॥ अस्यार्थः ॥ हेबालाके जो आदित्यादि पुरुषोंका कर्त्ता है औ जिसका यह सर्व जगत्। कर्म।

कार्य है सो जाननें योग्य है इति। तहां संशय है कि जाननें योग्य जीव कहा है वा मुख्य प्राण कहा है वा परमात्मा कहा है अत आह॥

जगद्वाचित्वात्॥ १६॥

इस सूत्रका जगद्वाचित्वात् १ यह एकहि समस्त पद है॥ उक्तश्रुतिके विषै परमात्मा जानने योग्य कहा है काहेतैं श्रुतिके विषै कर्मपद है सो सर्व जगत्का वाचक है सर्व जगत्रूप कार्य परमात्माके विना अन्य किसीका नहींहो सकता॥ १६॥

जीवमुख्यप्राणलिङ्गान्नेतिचेत्तद्व्याख्यातम्॥ १७॥

इस सूत्रके जीवमुख्यप्राणलिङ्गात् १ न २ इति ३ चेत् ४ तत् ५ व्याख्यातम् ६ यह छेह पद हैं॥ जो यह कहाहै कि वाक्यशेषके विषै जीवका लिङ्ग होनेंतैं औ मुख्य प्राणका लिङ्ग होनेंतैं जीवका वा मुख्य प्राणका ग्रहण करना योग्य है सो कहना समीचीन नहीं काहेतैं। नोपासात्रैविध्यादाश्रितत्वादिहतद्योगात्। इस सूत्रके विषै त्रिविध उपासनाके प्रसंगरूप दूषणतैं इसका व्याख्यान पूर्व कर आयेहैं॥ १७॥

अन्यार्थंतुजैमिनिः प्रश्नव्याख्यानाभ्यामपिचैवमेके १८

इस सूत्रके अन्यार्थं १ तु २ जैमिनिः ३ प्रश्नव्याख्यानाभ्यां ४ अपि ५ च ६ एवं ७ एके ८ यह आठ पद हैं॥ अजातशत्रु औ बालाकिके प्रश्नसैं औ उत्तरसैं यह निश्चय होताहै कि उक्तवाक्यके विषै ब्रह्मज्ञानके अर्थ जीवका ग्रहण है ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है औ ऐसैं हीं वाजसनेयी शाखावाले मानते हैं॥ १८॥

बृहदारण्यकमें मैत्रेयी ब्राह्मणके विषै श्रवण होताहै कि। आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्यासितव्यः इति। अस्यार्थः॥याज्ञवल्क्य कहते भये कि अरे मैत्रेयि आत्मा श्रवण करने योग्य है औ मनन करने योग्यहै औ निदिध्यासनकरने योग्यहै औ देखने योग्यहै इति।तहां संशयहै कि श्रवण मननके योग्य जीवात्माहै वा परमात्माहै अत आह॥

वाक्यान्वयात् ॥ १९ ॥

इस सूत्रका वाक्यान्वयात् १ यह एकहि समस्त पद है ॥ पूर्वापर विचार करनेंसें आत्मा वा अरे इस वाक्यका परमात्माके विषै। अन्वय। सम्बन्ध प्रतीत होता है इसीसें जाना जाताहै कि श्रवण मननके योग्य परमात्मा है ॥ १९ ॥

प्रतिज्ञासिद्धेर्लिङ्गमाश्मरथ्यः ॥ २० ॥

इस सूत्रके प्रतिज्ञासिद्धेः १ लिंगं २ आश्मरथ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ एक आत्माके जाननेंसें सर्व जगत् जाना जाता है यह वेदकी प्रतिज्ञा है इस प्रतिज्ञाकी सिद्धिका सूचक जो द्रष्टव्यत्वादि तिनका कथन है सो जीवात्मा परमात्माके अभेद अंशकों लेके है ऐसें आश्मरथ्य आचार्य मानताहै ॥ २० ॥

उत्क्रमिष्यतएवम्भावादित्यौडुलोमिः ॥ २१ ॥

इस सूत्रके उत्क्रमिष्यतः १ एवंभावात् २ इति ३ औडुलोमिः ४ यह च्यार पद हैं ॥ संसार दशाके विषै देह इंद्रिय मन बुद्धिरूप उपाधिके सम्बन्धसें मलिन जीव है सो ज्ञान ध्यानादि साधनके अनुष्ठानसें शुद्ध होके देहादिक उपाधिकों त्यागके मुक्तिदशामें परमात्माके साथ अभेदकों प्राप्त होताहै ऐसें औडुलोमि आचार्य मानताहै ॥ २१ ॥

अवस्थितेरितिकाशकृत्स्नः ॥ २२ ॥

इस सूत्रके अवस्थितेः १ इति२ काशकृत्स्नः३यह तीन पद हैं ॥ इस परमात्माकीही जीवभावकरके अवस्थिति होनेतें जीवात्मा औ परमात्माका अत्यन्त अभेद है ऐसें काशकृत्स्न आचार्य मानता है काशकृत्स्नके मतमें परमेश्वरही जीव है इसीसें यह मत श्रुतिके अनुसार है औ आश्मरथ्यके मतमें यद्यपि जीव औ परमात्माका अभेद है तथापि जीव औ परमात्माका कार्य कारण भाव है औ औडुलोमिके मतमें संसार औ मुक्तिकी अपेक्षासें जीव औ परमात्माका भेद अभेद है॥२२॥

जन्माद्यस्ययतः । इस सूत्रके विषै कहा है कि इस जगत्का कारण ब्रह्म है तहां संशय है कि जैसें घटका उपादान कारण मृत्तिका है औ निमित्त कारण कुलाल है तैसें ब्रह्म जगत्का उपादान कारण है वा निमित्त कारण है अत आह ।

प्रकृतिश्चप्रतिज्ञादृष्टान्तानुपरोधात् ॥ २३ ॥

इस सूत्रके प्रकृतिः १ चं २ प्रतिज्ञादृष्टांतानुपरोधात् ३ यह तीन पद हैं ॥ येनाश्रुतंश्रुतंभवत्यमतंमतमविज्ञातंविज्ञातम् । यह प्रतिज्ञावाक्य है । अस्यार्थः । जिस वस्तुका श्रवण मनन विज्ञान नहीं भया है तिस वस्तुका श्रवण मनन विज्ञान ब्रह्मके जानेंसें होता है इति । औ । यथा सौम्यैकेनमृत्पिण्डेनसर्वंमृन्मयंविज्ञातंस्यात् । यह दृष्टांतवाक्य है । अस्यार्थः । हे सौम्य जैसें एक मृत्पिण्डके जानेंसें सर्व मृद्विकार जाना जाता है तैसें एक ब्रह्मके जानेंसें सर्व जगत् जाना जाता है इति । इस प्रतिज्ञा औ दृष्टांतके नहीं रुकनेंसें यह निश्चय है कि ब्रह्म जगत्का उपादान कारण है क्योंकि उपादानके ज्ञानसें तिसके कार्यका ज्ञान होता है । औ जैसै मृत्तिकासें भिन्न कुलाल घटका कारण है तैसै ब्रह्मसें भिन्न जगत्का अन्य कारण है नहीं इसीसें ब्रह्महीं जगत्का निमित्तकारण है२३

एकहि आत्मा जगत्का उपादान कारण औ निमित्त कारण कैसें है अत आह ॥

अभिध्योपदेशाच्च ॥ २४ ॥

इस सूत्रके आभिध्योपदेशात १ च २ यह दो पद हैं ॥ सोऽकामयत् बहुस्यांप्रजायेय । सो परमात्मा संकल्प करता भया कि मैं बहु प्रपंच-रूप करके उत्पन्न होओं इत्यर्थः। इस वाक्यके विषै । अभिध्या ॥ संकल्प पूर्वक स्वतंत्र प्रवृत्तिके उपदेशसें निश्चय होताहै कि ब्रह्म जगत्का निमित्त कारण है औ अपनेंकों बहुत होनेंके संकलपसें ब्रह्म उपादान कारण है॥ २४ ॥

साक्षाच्चोभयाम्नानात् ॥ २५ ॥

इस सूत्रके साक्षात् १ च २ उभयाम्नानात् ३ यह तीन पद हैं ॥ वेदके विषै कहाहै कि इस जगत्की उत्पत्ति औ प्रलय साक्षात् ब्रह्मसैं होतेहैं इसीसैं यह निश्चय है कि जगत्का उपादान कारण ब्रह्म है ॥२५॥

आत्मकृतेःपरिणामात् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके आत्मकृतेः १ परिणामात् २ यह दो पद हैं ॥ जैसैं मृत्तिका घटाऽकार परिणामकों प्राप्त होती है तैसैं आत्मा अपना आपही । जगदाऽऽकार परिणामकों प्राप्त होता भया इसीसैं जगत्का उपादान कारण है ॥ २६ ॥

योनिश्चहिगीयते ॥ २७ ॥

इस सूत्रके योनिः १ च २ हि ३ गीयते ४ यह च्यार पद हैं॥ इस जगत्का । योनि उपादान कारण ब्रह्म है ऐसैं वेदान्तके विषै कहतेहैं।तथाहि । यद्भूतयोनिंपरिपश्यन्तिधीराः । अस्यार्थः । जो सर्व भूतोंका । योनि । कारण है तिसकों धीर पुरुष ध्यानके विषै देखते हैं इति ॥ २७ ॥

एतेनसर्वेव्याख्याताव्याख्याताः ॥ २८ ॥

इस सूत्रके एतेन १ सर्वे २ व्याख्याताः ३ व्याख्याताः ४ यह च्यार पद हैं॥ईक्षतेर्नाशब्दम् इस सूत्रसैं आदि लेके सांख्यपरिकल्पित प्रधान कारण वादका निषेध कियाहै इस प्रधान कारणवादके निषेध करके ही न्यायादिपरिकल्पित सर्व परमाण्वादि कारणवादके निषेधका व्याख्यान होताभया इहां दोबेर व्याख्याता इस पदका कथन है सो इस समन्वयाध्यायकी समाप्तिकों द्योतन करताहै ॥ २८ ॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्ययमुनानाथपूज्यपादशिष्यश्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारर्थप्रदीपिकायां प्रथमाध्यायस्य चतुर्थपादः ॥ ४ ॥

इति प्रथमाध्यायः समाप्तः १.

द्वितीयोऽध्यायः २.

प्रथमः पादः ।

प्रथम अध्यायके विषै कहाहै कि प्रधानादिक अशब्द हैं सो जगत्के कारण नहीं हैं किंतु सर्वज्ञ सर्वेश्वर सर्वशक्तिमान परमेश्वर जगत्का कारण है इति । अब अपने मतमें स्मृति न्यायादिकोंका विरोध दूर करनेंके वास्ते इस द्वितीय अध्यायका प्रारंभ करतेहैं ।

स्मृत्यनवकाशदोषप्रसङ्गइतिचेन्नान्यस्मृत्यनवकाशदोषप्रसङ्गात् ॥ १ ॥

इस सूत्रके स्मृत्यनवकाश दोषप्रसंगः १इति२चेत् ३ न ४अन्यस्मृत्यनवकाशदोषप्रसंगात् ५ यह पांच पद हैं ॥ शंकते । जो सर्वज्ञ ब्रह्मको जगत्का कारण कहोगे तो अचेतन प्रधानकों स्वतंत्र जगत्का कारण कहनेंवाली कपिलस्मृतिके अनवकाशरूप दोषका प्रसंग वेदान्त मतमें होवैगा इति चेन्न । ऐसें न कहो काहेतें । अहंकृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा । हे अर्जुन मैं सर्व जगत्की उत्पत्तिका हेतु औ प्रलयका स्थान हों इस परमेश्वरको जगत्का कारण कहनेंवाली गीतास्मृतिका कपिलके मतमें अनवकाशरूप दोषका प्रसंग होनेतें परमेश्वरही सर्व जगत्का कारण है ॥ १ ॥

सांख्यस्मृतिका अनवकाश प्रसंगरूप दोष वेदान्तमतमें क्यों नहीं है अत आह ॥

इतरेषांचानुपलब्धेः ॥ २ ॥

इस सूत्रके इतरेषां १ च २ अनुपलब्धेः ३ यह तीन पद हैं ॥ प्रधानसैं इतर भिन्न औ प्रधानका परिणाम जो महतत्त्व अहंकारादि सो देवके

विषे वा लोकके विषे प्रसिद्ध नहीं इसीसें सांख्यस्मृतिका अनवकाश प्रसंगरूप दोष वेदांत मतमें नहीं ॥ २ ॥

एतेनयोगःप्रत्युक्तः ॥ ३ ॥

इस सूत्रके एतेन १ योगः २ प्रत्युक्तः ३ यह तीन पद हैं ॥ इस सांख्यस्मृतिके निषेध करके योगस्मृतिका भी निषेध होताभया परंतु जो श्रुतिसें विरुद्ध प्रधानको स्वतंत्र कारण कहती है औ लोक वेद करके अप्रसिद्ध महत्तत्त्वादिकोंको प्रधानका कार्य कहती है ऐसी योगस्मृतिका निषेध है औ आसन प्राणायामादि योगका विस्तार श्वेताश्वतरोपनिषद्के विषे है सो श्रुतिके अनुसार है औ योगशास्त्रमें कहाहै कि । अथ तत्त्वदर्शनाभ्युपायोयोगः । तत्त्वदर्शनकी उपायका नाम योग है इस योगका हमारे अंगीकार है ॥ ३ ॥

नविलक्षणत्वादस्यतथात्वंचशब्दात् ॥ ४ ॥

इस सूत्रके न १ विलक्षणत्वात् २ अस्य ३ तथात्वं ४ च ५ शब्दात् ६ यह छेह पद हैं॥पूर्वपक्षी पुनःतर्कसें आक्षेप करता है।जो यह कहा है कि चेतन ब्रह्म जगत्का उपादान कारण है सो कहना ठीक नहीं काहेतें यह जगत् ब्रह्मसें विलक्षण है जगत् अचेतन है औ अशुद्ध है औ ब्रह्म चेतन है औ शुद्ध है औ विलक्षणोंका कार्य कारणभाव बनें नहीं जैसें कटकादि भूषणका औ मृत्तिका कार्य कारणभाव नहीं औ। विज्ञानंचाऽविज्ञानंच । इत्यादि शब्दभी विज्ञानस्वरूप चेतन ब्रह्मसें अविज्ञानस्वरूप अचेतन जगत्कों विलक्षण कहताहै ॥ ४ ॥

वेदान्ती आशंका करता है कि जैसें । मृदब्रवीत् । इस वाक्यके विषे श्रवण होता है कि मृत्तिका बोलती भई तैसें और भी अचेतन इंद्रियादिकोंके विषे चेतनताका श्रवण होताहै अत आह ॥

अभिमानिव्यपदेशस्तुविशेषानुगतिभ्याम् ॥ ५ ॥

इस सूत्रके अभिमानिव्यपदेशः १ तु २ विशेषानुगतिभ्याम् ३

यह तीन पद हैं ॥ तु शब्द आशंकाकी निवृत्तिके अर्थ है मृदब्रवीत् इस वाक्यके विषे अचेतन मृत्तिका बोलती भई ऐसा कथन नहीं है किंतु तिसका अभिमानी चेतन देवता बोलताभया ऐसा कथन है काहेतें चेतन भोक्ता है औ अचेतन भोग्य है । जो सर्वही चेतन होवें तो यह भोक्ता है औ यह भोग्य है ऐसा विशेष कथन होवैनहीं औ अभिमानी चेतनदेवता सर्व अचेतनके विषे अनुगत हैं इस रीतिसैं चेतनब्रह्म अचेतन जगत्का कारण नहीं यह सांख्यवादीका आक्षेप है इसका उत्तर । दृश्यते तु । इस अग्रिम सूत्र करके सूत्रकार कहते हैं ॥ ५ ॥

दृश्यतेतु ॥ ६ ॥

इस सूत्रके दृश्यते १ तु २ यह दो पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है जो यह कहा कि विलक्षण होनेतें चेतन ब्रह्म अचेतन जगत्का कारण नहीं हो सकता है सो कहना ठीक नहीं काहेतें इस लोकके विषे प्रसिद्ध चेतन पुरुषोंसैं अचेतन केश नखादिकोंकी उत्पत्ति दीखती है औ अचेतन गोमयादिकोंसैं चेतन वृश्चिकादिकोंकी उत्पत्ति दीखती है ॥ ६ ॥

असदितिचेन्नप्रतिषेधमात्रत्वात् ॥ ७ ॥

इस सूत्रके असत् १ इति २ चेत् ३ न ४ प्रतिषेधमात्रत्वात् ५ यह पांच पद हैं ॥ जो शब्दादि हीन शुद्ध चेतन ब्रह्मकों शब्दादिमान् अशुद्ध अचेतन जगत्का कारण कहोगे तो तुम्हारे सत्कार्यवादीके मतमें उत्पत्तिसैं पैहिली इस जगत्रूप कार्यके असत् पनेंका प्रसंग होवैगा इति चेन्न । ऐसैं न कहो काहेतें यह तुम्हारा कहना प्रतिषेध मात्र है प्रतिषेध करनेंके योग्य वस्तु कोई नहीं है जैसैं अब यह जगत् कारणरूप करके सत है तैसैं उत्पत्तिके पैहिले भी कारणरूप करके सत ही था असत् नहीं ॥ ७ ॥

अपीतौतद्वत्प्रसङ्गादसमञ्जसम् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके अपीतौ १ तद्वत् २ प्रसंगात् ३ असमंजसम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ यह शंका सूत्र है जो स्थूलत्व सावयवत्व अचेतनत्व परिच्छिन्नत्व अशुद्धत्वादि धर्मवाला जगत् ब्रह्मका कार्य कहोगे तो जैसें जलके विषै लीयमान लवण जलकों दूषित करता है तैसें प्रलयकालमें कारण ब्रह्मके विषै लीयमान जगत् ब्रह्मकों दूषित करेगा ऐसें ब्रह्मकों अशुद्धताका प्रसंग होनेतें जो उपनिषद् ब्रह्मकों जगत्का कारण कहता है सो समीचीन नहीं ॥ ८ ॥

नतुदृष्टान्तभावात् ॥ ९ ॥

इस सूत्रके न १ तु २ दृष्टान्तभावात् ३ यह तीन पद हैं ॥ यह सिद्धान्तसूत्र है जो यह कहा कि यह जगत् प्रलयकालमें अपनें कारणके विषै लीन होके कारणकों दूषित करेगा सो कहना ठीक नहीं काहेतें कार्य है सो कारणकों दूषित नहीं करे इसमें दृष्टान्त होनेतें जैसें घट शरावादि बडे छोटे मृत्तिकाके कार्य हैं औ कटक कुंडलादि सुवर्णके कार्य हैं परंतु जब यह नष्ट होके अपनें कारण मृत्तिकामें तथा सुवर्णमें लीन होते हैं तब मृत्तिकाकों तथा सुवर्णको दूषित नहीं करते तैसेंहि यह जगत् कारणमें लीन होके अपने कारणकों दूषित नहीं करता औ तुम्हारे पक्षमें दृष्टान्त है नहीं जो जल लवणका दृष्टान्त कहा सो विषम है काहेतें मधुर जल है सो लवणका कारण नहीं ॥ ९ ॥

स्वपक्षदोषाच्च ॥ १० ॥

इस सूत्रके स्वपक्षदोषात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ जितनें दोष वेदान्त पक्षमें कहे हैं उतनेहीं दोष सांख्यपक्षमें भी समान हैं जैसें यह कहा कि विलक्षण होनेतें ब्रह्म जगत्का कारण नहीं तैसेंहि विलक्षण होनेतें प्रधानभी जगत्का कारण नहीं औ जो उत्प-

त्तिके पैहिली असत्कार्य वादका प्रसंग कहा सो प्रसंग सांख्यपक्षमें भी समानहै औ जो यह कहा कि प्रलयकालमें कार्य करके कारण दूषित होवैगा सो सांख्यपक्षमें भी होवैगा इत्यादि सर्वदोष समान हैं ॥ १० ॥

तर्काप्रतिष्ठानादप्यन्यथानुमेयमितिचेदेवम-
प्यविमोक्षप्रसङ्गः ॥ ११ ॥

इस सूत्रके तर्काप्रतिष्ठानात् १ अपि २ अन्यथा ३ अनुमेयं ४ इति ५ चेत् ६ एवं ७ अपि ८ अविमोक्षप्रसंगः ९ यह नौ पद हैं ॥ ब्रह्म-निष्ठ कारणताको वेद करके सिद्ध होनेतैं केवल तर्क करके तिसका बाध नहीं हो सकता काहेतैं वेद प्रमाणसैं रहित औ कपिल कणादादि पुरुषोंकी भिन्न भिन्न बुद्धिमात्रसैं अन्यथा अन्यथा कल्पित तर्ककी प्रतिष्ठा नहीं औ जो तर्कवादी ऐसैं अन्यथा अनुमान करे कि सर्व तर्ककों अप्रतिष्ठित कहोगे तो सर्वलोक व्यवहार तर्कसैं सिद्ध होताहै तिसका उच्छेद होवैगा यह तर्कवादीका कहना ठीक नहीं काहेतैं एक वस्तुके सम्यक् ज्ञानसैं मोक्ष होताहै ऐसैं सर्व मोक्षवादी मानतेहैं औ परस्पर विरोधि पुरुषोंकी कल्पना मात्रसैं रचित तर्कके ज्ञानसैं मोक्ष होवै नहीं ऐसैं तर्कवादीके पक्षमें अमोक्षका प्रसंग है यह बड़ाभारी कष्ट है ॥११॥

एतेनशिष्टापरिग्रहाअपिव्याख्याताः ॥ १२ ॥

इस सूत्रके एतेन १ सिष्टापरिग्रहाः २ अपि ३ व्याख्याताः ४ यह च्यार पद हैं॥मनु व्यास वसिष्ठादि शिष्ट पुरुष भये हैं सो किसीभी अंश करके न्यायादि परिकल्पित अण्वादिकारणवादका ग्रहण नहीं करते भये तिस अण्वादि कारणवादकों प्रधान कारणवादके तुल्य होनेतैं इस प्रधानकारणवादके निराकरण करके अण्वादिकारणवादका भी निराकरण होताभया ॥ १२ ॥

भोक्त्रापत्तेरविभागश्चेत्स्याल्लोकवत् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके भोक्त्रापत्तेः १ अविभागः २ चेत् ३ स्यात् ४ लोकवत् ५

यह पांच पद हैं ॥ अद्वैतवादके विषै भोक्ता है सो भोग्यभावकों प्राप्त होवेगा वा भोग्य है सो भोक्तृभावकों प्राप्त होवैगा तो इतरेतर भावकी आपत्ति होनेतैं लोकके विषै चेतन जीवात्मा भोक्ता है औ शब्दादि विषय भोग्य हैं इस भोक्तृभोग्यका विभाग न रहेगा यह कहना समीचीन नहीं काहेतें जैसें लोकके विषै समुद्रसें जल अभिन्न भी है परंतु फेन तरङ्गबुद्बुदादि रूपकरके भिन्न है तैसेंहिं अभिन्न भोक्तृभोग्यभी उपाधि करके भिन्न हैं ॥ १३ ॥

तदनन्यत्वमारम्भणशब्दादिभ्यः ॥ १४ ॥

इस सूत्रके तदनन्यत्वं १ आरंभणशब्दादिभ्यः २ यह दो पद हैं ॥ पूर्व सूत्रके विषै व्यावहारिक भोक्तृ भोग्य मानके तिनका विभाग कहाहै औ परमार्थ दृष्टिसें न कोई भोक्ता है न भोग्य है काहेतें । यथा सौम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् । इस दृष्टान्तभूत श्रुतिरूप आरम्भण शब्दसें तथा। ब्रह्मैवेदं सर्वम् । यह सर्व जगत् ब्रह्महीं हैं । इस श्रुतिवाक्यसें कार्यमात्रका अभाव निश्चित है यह इस सूत्रका अर्थ है औ श्रुतिका अर्थ यह है कि हे सौम्य श्वेतकेतो एक मृत्पिण्डके यथार्थ ज्ञानसें सर्व घट शरावादि मृत्तिकाके विकार जानें जाते हैं काहेतें वाणी करके जिसका आरम्भ भया ऐसा घटादि विकार नाम मात्रहै अपनें कारण मृत्तिकासें जुदा नहीं औ कारणरूप मृत्तिकाही सत्य है इति ॥ १४ ॥

भावेचोपलब्धेः ॥ १५ ॥

इस सूत्रके भावे १ च २ उपलब्धेः ३ यह तीन पद हैं ॥ जब मृत्तिकारूप कारण विद्यमान है तबहि घटादि कार्यका । उपलब्धि । ज्ञान होताहै ऐसेंहिं ब्रह्मरूप कारणके होनेतें जगत्‌रूप कार्यका ज्ञान होताहै इसीसें कार्य कारणका भेद नहीं है ॥ १५ ॥

सत्त्वाच्चावरस्य ॥ १६ ॥

इस सूत्रके सत्त्वात् १च २ अवरस्य३ यह तीन पद हैं ॥ सदेवसौम्येदमग्र आसीत् । इस श्रुतिकरके इस कालमें विद्यमान जगत्रूप कार्यके सत्वका सृष्टिके पूर्व कारणरूप करके श्रवण होनेतें कार्य कारणका भेद नहीं । औ श्रुतिका अर्थ यह है कि हे सौम्य श्वेतकेतो यह जगत् सृष्टिसें पैहिली सत्कारणरूपहि होताभया इति ॥ १६ ॥

असद्व्यपदेशान्नेतिचेन्नधर्मान्तरेणवाक्यशेषात् ॥ १७ ॥

इस सूत्रके असद्व्यपदेशात् १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ धर्मान्तरेण ६ वाक्यशेषात् ७ यह सात पद हैं ॥ असदेवेदमग्रआसीत् । अस्यार्थः । यह जगत् सृष्टिके पूर्व असत्हि होताभया इति । इस श्रुति करके असत्का कथन होनेतें सृष्टिके पैहिली यह जगत् सत् नहींथा । इति चेन्न । ऐसें नकहो काहेतें । तत्सदासीत् । सो जगत् सत् होताभया इस वाक्यशेषसें निश्चय है कि सृष्टिके पूर्व अस्पष्ट नाम रूप धर्मान्तरकों लेके श्रुति असत्का कथन करती है ॥ १७ ॥

युक्तेःशब्दान्तराच्च ॥ १८ ॥

इस सूत्रके युक्तेः १ शब्दान्तरात् २ च ३ यह तीन पद हैं ॥ जिस पुरुषकों दधि बनानेंकी वा घट बनानेंकी इच्छा होवै सो तिसके कारण दुग्धकों वा मृत्तिकाकों ग्रहण करताहै औ जो असत्की उत्पत्ति होवै तौ कदाचित् दुग्धसें घट बना चाहिये वा मृत्तिकासें दधि हुआ चाहिये औ कदाचित् शशशृङ्गकी वा वन्ध्याके पुत्रकी भी उत्पत्ति होनी चाहिये इस युक्तिसें औ । एकमेवाद्वितीयम् । एकहि अद्वितीय ब्रह्म है इस शब्दान्तरसें यहि जाना जाताहै कि उत्पत्तिके पूर्व यह जगत् सत् हि था असत् नहीं ॥ १८ ॥

पटवच्च ॥ १९ ॥

इस सूत्रके पटवत्१च२यह दो पद हैं ॥ जब पट है सो किसी वस्तुमें

दबा रहताहै तब देखनेंवाले पुरुषकों यह पट है ऐसा स्पष्ट ज्ञान नहीं होता किंतु यह पट है वा अन्य द्रव्य है ऐसा ही ज्ञान होताहै औ जब पटकों पसारे तब यह पट है ऐसा स्पष्ट ज्ञान होता है ऐसेंहिं तन्तुरूप कारणके विषै यद्यपि पट है तथापि पटका ज्ञान नहीं होता औ तुरी-वेमकुविन्दादि कारक व्यापारके अनंतर यह पट है ऐसा स्पष्ट ज्ञान होताहै इस रीतिसें कार्य कारणका भेद है वास्तव भेद नहीं ॥ १९ ॥

यथाचप्राणादि ॥ २० ॥

इस सूत्रके यथा १ च २ प्राणादि ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसें लोकके विषै प्राणाऽपानादि प्राणके भेद प्राणायाम करके जब निरुद्ध होते हैं तब कारणमात्र प्राणकरके जीवन मात्रहि शेष रहताहै आकुञ्चन प्रसा-रणादि कार्य नहीं रहता औ जब निरुद्ध नहीं है तब जीवनसें अधिक आकुञ्चन प्रसारणादि कार्यभी होताहै तहां कारणरूप प्राणसें प्राणाऽ पानादि भेद भिन्न नहीं तैसेंहिं सर्व जगत् अपनें कारण ब्रह्मसें भिन्न नहीं इस प्रकारसें । येनाश्रुतंश्रुतंभवत्यमतंमतमविज्ञातं विज्ञातम् । यह श्रुतिकी प्रतिज्ञा सिद्ध भई इस श्रुतिका अर्थ । प्रकृतिश्च प्रतिज्ञा दृष्टा-न्तानुपरोधात् । इस सूत्रकी व्याख्यामें कर आयेहैं ॥ २० ॥

इतरव्यपदेशाद्धिताकरणादिदो-षप्रसक्तिः ॥ २१ ॥

इस सूत्रके इतरव्यपदेशात् १ हिताकरणादिदोषप्रसक्तिः २ यह दो पद हैं॥यह पूर्वपक्षका सूत्र है जो चेतनकों जगत्का कारण मानोंगे तो चेतनके अहित जो जन्म मरण जरा रोग नरकादि तिनके करणें-रूप दोषका प्रसंग होवेगा काहेतें । तत्त्वमसि श्वेतकेतो । हे श्वेतकेतो। तत् । सो ब्रह्म । त्वमसि । तूं है इस महावाक्य करके । इतर । जीवात्माकों ब्रह्म कहाहै औ ब्रह्म स्वतंत्र है जो स्वतंत्र ब्रह्म सृष्टिकों करे तो अपनें अहित नरकादिक नहीं बनावै ॥ २१ ॥

अधिकंतुभेदनिर्देशात् ॥ २२ ॥

इस सूत्रके अधिकं १ तु २ भेदनिर्देशात् ३ यह तीन पद हैं ॥ यह सिद्धांतसूत्र है तु शब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है । सोऽन्वेष्टव्यः । सो परमात्मा देखनें योग्य है इत्यादि श्रुति करके अल्पज्ञ अल्पशक्तिमान् जीवात्मासैं सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् नित्य शुद्धबुद्ध मुक्त परमात्माके भेदका कथन होनेतैं जीवात्मासैं परमात्मा । अधिक । भिन्न है तिसके विषै अहित करणादि दोष नहीं हो सकते औ जो पूर्वपक्षी ऐसैं कहै कि तत्त्वमसि महावाक्य करके भेदसैं विरुद्ध जीव ब्रह्मका अभेद क्यों कहा सो दोष हमारे मतमें नहीं काहेतैं महाकाश घटाकाशकी न्याईं भेदाभेदका कथन है परमार्थसैं नहीं ॥ २२ ॥

अश्मादिवच्चतदनुपपत्तिः ॥ २३ ॥

इस सूत्रके अश्मादिवत् १ च २ तदनुपपत्तिः ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसैं लोकके विषै सर्व । अश्म । पत्थर एक पृथिवीत्व धर्मवाले हैं परंतु तिनके विषै वज्र वैडूर्यादिमणि बहुत मौल्यके योग्य हैं औ सूर्यकान्तादिमणि न्यूनमौल्यके योग्य हैं कोई पत्थर काक कुत्तेके संमुख फेंकने योग्य हैं तैसैंहिं एक ब्रह्म जीव प्राज्ञ भेद करके भिन्न है औ विचित्र कार्यवाला है इसीसैं पूर्वपक्षी कल्पित दोषोंकी हमारे पक्षमें अनुपपत्ति है अर्थात् भेदको लेके कोई दोष नहीं ॥ २३ ॥

उपसंहारदर्शनान्नेतिचेन्नक्षीरवद्धि ॥ २४ ॥

इस सूत्रके उपसंहारदर्शनात् १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ क्षीरवत् ६ हि ७ यह सात् पद हैं ॥ शंकते । एक अद्वितीय चेतन ब्रह्म जगत्का कारण नहीं हो सकता काहेतैं लोकके विषै उपसंहारका दर्शन है उपसंहार नाम मेलनका है जैसैं लोकके विषै घटादि कार्यके कर्त्ता कुलालादिक हैं सो मृत्तिका दण्ड चक्र सूत्रादि अनेक साधनवाले हैं तैसैं अद्वितीय ब्रह्मके सृष्टि बनानेंका कोइ साधन नहीं ।

इति चेतन। ऐसें न कहो काहेतें जैसें लोकके विषै । क्षीर दुग्ध किसी बाह्य साधनकी अपेक्षा नहीं कर्त्ता औ अपना आपहि दधिरूप परिणामकों प्राप्त होता है तैसें ब्रह्मभी किसी साधनकी अपेक्षा नहीं करके जगदाऽऽकार परिणामकों प्राप्त होताहै ॥ २४ ॥

यद्यपि अचेतन दुग्धादि अपनें दध्यादि कार्यके वास्ते किसी साधनकी अपेक्षा नहीं करते तथापि चेतन कुलालादि अपनें घटादि कार्य करनेंके वास्ते दण्ड चक्रादि साधन सामग्रीकों ग्रहण करते हैं तैसें ब्रह्म चेतन भी बाह्य साधनकी अपेक्षा क्यों नहीं करता अत आह ॥

देवादिवदपिलोके ॥ २५ ॥

इस सूत्रके देवादिवत् १ अपि २ लोके ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसें लोकके विषै देव ऋषि योगी इत्यादि चेतन पुरुष ऐश्वर्य संयुक्त हैं सो किसी बाह्य साधनको नहीं लेके अपनें संकल्प मात्रसें अपूर्व शरीर प्रासाद रथादि अनेक कार्यकों बनाते हैं तैसें महाऐश्वर्यवान् ब्रह्म चेतन सृष्टिके बनानें वास्ते किसी साधनकी अपेक्षा नहीं करता ॥ २५ ॥

कृत्स्नप्रसक्तिर्निरवयवत्वशब्दकोपोवा ॥ २६ ॥

इस सूत्रके कृत्स्नप्रसक्तिः १ निरवयवत्वशब्दकोपः २ वा ३ यह तीन पद हैं ॥ यह पूर्व पक्ष सूत्र है ब्रह्म निरवयव है वा सावयव है जो निरवयव है तो सर्वहि ब्रह्मका रूप परिणामकों प्राप्त होवेगा औ जो सावयव है तो यद्यपि एकदेशहि परिणामको प्राप्त होवेगा तथापि । निष्कलं निष्क्रियं शांतम् । इत्यादि श्रुति ब्रह्मकों निरवयव कहती है तिसका कोप होवैगा ॥ श्रुत्यर्थः ॥ ब्रह्म निष्कल है अर्थात् निरवयव है औ क्रिया-रहित है औ शांत है इति ॥ २६ ॥

श्रुतेस्तुशब्दमूलत्वात् ॥ २७ ॥

इस सूत्रके श्रुतेः १ तु २ शब्दमूलत्वात् ३ यह तीन पद हैं ॥ तु शब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है । तावानस्य महिमा ततो ज्यायांश्च

पूरुषः । इस श्रुतिसें यह निश्चय है कि सर्व ब्रह्म कार्यरूप परिणामकों प्राप्त नहीं होता औ निरवयव ब्रह्मका अंगीकार होनेंत निष्कलं इत्यादि श्रुतिका कोप भी नहीं होता इस रीतिसें ब्रह्ममें शब्दमूल प्रमाण है इंद्रिय प्रमाण नहीं औ श्रुतिका अर्थ है कि सर्व प्रपंच इस ब्रह्मकी विभूति है औ पुरुष पूर्ण ब्रह्म तिस प्रपंचसें अधिक है इति ॥ २७ ॥

आत्मनिचैवंविचित्राश्चहि ॥ २८ ॥

इस सूत्रके आत्मनि १ च २ एवं ३ विचित्राः ४ च ५ हि ६ यह छेह पद हैं ॥ जैसें स्वप्नावस्थामें एक आत्माके विषे अपनें स्वरूप नाशके विनाहिं अनेक प्रकारकी विचित्र सृष्टि उत्पन्न होतीहै तैसेंहिं एक ब्रह्मके विषे अपनें स्वरूप नाशके विनाहिं अनेक प्रकारकी विचित्र सृष्टि उत्पन्न होती है इसीका नाम विवर्त्तवाद है औ इस अर्थमें यह श्रुति प्रमाण है । नतत्ररथानरथयोगानपन्थानोभवन्त्यथरथानूरथयोगानूपथः सृजते । अस्यार्थः । तिस स्वप्नावस्थाके विषे न रथ हैं औ न रथके योग्य घोडा हैं औ न चलनेके योग्य मार्ग हैं परंतु रथ घोडा मार्ग इन सर्वकों आपहि रचता है इति ॥ २८ ॥

स्वपक्षदोषाच्च ॥ २९ ॥

इस सूत्रके स्वपक्षदोषात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ जो सर्व ब्रह्मकों परिणामका प्रसंग औ निरवयवके अंगीकारका कोप इत्यादि वेदान्त पक्षमें दोष कहे सो प्रधान कारणवादी सांख्यपक्षमें औ अणुकारणवादी न्याय वैशेषिक पक्षमें भी समान हैं ॥ २९ ॥

सर्वोपेताचतद्दर्शनात् ॥ ३० ॥

इस सूत्रके सर्वोपेता १ च २ तद्दर्शनात् ३ यह तीन पद हैं ॥ सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः सर्वरसः । इत्यादि श्रुतिके विषे श्रवण होता है कि सर्व विचित्र शक्तिवाला परदेवताहि सर्व विचित्र जगत्का कर्त्ता है औ श्रुतिका अर्थ यह है कि सो परमेश्वर सर्व कर्मवाला है

औ सर्व कामवाला है औ सर्व गंधवाला है औ सर्व रसवाला है अर्थात् सर्व विचित्र शक्तिवाला है इति ॥ ३० ॥

विकरणत्वान्नेतिचेत्तदुक्तम् ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके विकरणत्वात् १ न २ इति ३ चेत् ४ तत् ५ उक्तं ६ यह छेह पद हैं ॥ अचक्षुष्कमश्रोत्रमवागमनाः । अस्यार्थः परब्रह्म चक्षु श्रोत्र वाक मन इत्यादि सर्वइंद्रियोंसें रहित है इति इस श्रुतिकरके परब्रह्म इंद्रियरहित प्रतीत होता है औ इंद्रियके विना कर्त्ता नहीं होसकता चेत् यदि पूर्वपक्षी ऐसें कहै सो कहना ठीक नहीं काहेतें। देवादिवदपि लोके । इस सूत्रकरके उक्त शंकाका उत्तर कर आये हैं औ । अपाणिपादोजवनोगृहीतापश्यत्यचक्षुः सशृणोत्यकर्णः । यह श्रुति इंद्रियरहित ब्रह्मके सर्व सामर्थ्यकों कहती है अस्या अर्थः । परमात्माके हस्तपाद नहीं हैं औ वेगवाला है औ सर्वकों ग्रहण करता है औ चक्षु श्रोत्र नहीं हैं औ सर्वकों देखता है औ सुनता है इति ॥ ३१ ॥

नप्रयोजनवत्त्वात् ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके न १ प्रयोजनवत्त्वात् २ यह दो पद हैं ॥ यह शंका सूत्र है लोकमें यह वार्त्ता प्रसिद्ध है कि अपनें प्रयोजनके विना मंद पुरुषभी प्रवर्त्त नहीं होता है औ परमात्मा नित्य तृप्त है तिसके जगत् रचनेंमें कोई प्रयोजन नहीं ॥ ३२ ॥

लोकवत्तुलीलाकैवल्यम् ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके लोकवत् १ तु २ लीला ३ कैवल्यम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ तु शब्द शंकाकी निवृत्तिके अर्थ है जैसें लोकके विषे सर्वकामनाकरके रहित कोई राजा अपनें प्रयोजनके विनाहिं कदाचित् केवल लीला करनेंकों प्रवर्त्त होता है तैसें ईश्वर भी अपनें प्रयोजनके विनाहिं केवल स्वभावमात्रसें सृष्टिरूप लीला करनेंकों प्रवर्त्त होता है ॥ ३३ ॥

वैषम्यनैर्घृण्येनसापेक्षत्वात्तथाहिदर्शयति ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके वैषम्यनैर्घृण्ये १ न २ सापेक्षत्वात् ३ तथा ४ हि ५ दर्शयति ६ यह छेह पद हैं ॥ इस जगतके विषे देवादि शरीर अति सुखकों भोगनेंवाले बनाये औ पश्वादि शरीर अति दुःखकों भोगनेंवाले बनाये औ मनुष्यादि शरीर मध्यम भोग भोगनेंवाले बनाये औ सर्वके नाशका हेतु प्रलय इसांसें जाना जाता है कि ईश्वर विषमकारी है औ अतिक्रूर है यह पूर्वपक्षीका आक्षेप है सो समीचीन नहीं काहेतें ईश्वर निरपेक्ष होके सृष्टि स्थिति प्रलयकों नहीं बनाता किंतु सर्वजीवोंके धर्माधर्मकी सापेक्षतासें बनाता है। सो धर्माऽधर्महिं सुखदुःखादिकोंके हेतु हैं औ ईश्वर सर्वका साधारण कारण है सो न विषमकारी है औ न क्रूर है औ इस अर्थकों श्रुतिभी कहती है। पुण्योवैपुण्येनकर्मणा भवति पापःपापेन । अस्या अर्थः । पुण्यकर्म करके पुण्यात्मा होता है पापकर्म करके पापात्मा होता है इति ॥ ३४ ॥

नकर्माविभागादितिचेन्नाऽनादित्वात् ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके न १ कर्म २ अविभागात् ३ इति ४ चेत् ५ न ६ अनादित्वात् ७ यह सात पद हैं ॥ जो यह कहा कि विषम संसारका कर्ता ईश्वर नहीं है किंतु जीवोंके कर्म हैं सो कहना ठीक नहीं काहेतें। सदेव सौम्येदमग्र आसीत्। यह श्रुति सृष्टिसें पेहिलें इस संसारकों सत् कहती हैं जब यह संसार सत्‌रूप था तब कोईभी कर्म नहीं था इतिचेन्न। ऐसें न कहो काहेतें यह संसार बीजांकुर न्यायसें अनादि है जैसें बीजसें अंकुर होताहै औ अंकुरसें बीज होताहै तैसेंहिं कर्मसें संसार होता है औ संसारसें कर्म होताहै ॥ ३५ ॥

शंका आप इस संसारकों अनादि कैसें जानतेहो अत आह ।

उपपद्यतेचाप्युपलभ्यतेच ॥ ३६ ॥

इससूत्रके उपपद्यते १ च २ अपि ३ उपलभ्यते ४ च ५ यह पांच

पद हैं ॥ जो संसार अनादि न होवै तो कर्मके विनाहिं संसारकी उत्पत्ति होनेतैं मुक्त पुरुषकाभी जन्म होना चाहिये औ होता है नहीं काहेतैं कर्मसैं शरीर होवै है औ शरीरसैं कर्म होवैहै औ मुक्तके कर्म है नहीं इसीसैं मुक्तका जन्म नहीं होता है औ संसारके अनादित्वमें श्रुति प्रमाणहै। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। अस्यार्थः। धाता। परमेश्वर जैसैं पहिले कल्पमें सूर्यचन्द्रमा थे तैसैंहिं इस कल्पमें बनाता भया इति ॥ ३६ ॥

सर्वधर्मोपपत्तेश्च ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके सर्वधर्मोपपत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ पूर्वोक्त प्रकारकरके सर्वज्ञत्व सर्वशक्तित्वादि सर्व धर्म कारण ब्रह्मके विषैहि प्राप्त होतेहैं इसीसैं औपनिषद दर्शन निर्दोष है ॥ ३७ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायांब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां द्वितीयाध्यायस्य प्रथमःपादः ॥ १ ॥

द्वितीयाध्याये द्वितीयःपादः।

यद्यपि मुमुक्षु पुरुषोंके हितके वास्ते वेदान्तवाक्योंका तात्पर्य दिखानेंकों वेदान्तशास्त्र प्रवर्तभया है तथापि वेदान्तके विरोधी जो सांख्यादि दर्शन हैं तिनका खण्डन करनेंके वास्ते इस द्वितीयपादका आरम्भ है।

रचनानुपपत्तेश्चनानुमानम् ॥ १ ॥

इस सूत्रके रचनानुपपत्तेः १ च २ न ३ अनुमानम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ प्रधान कारणवादीके पक्षमें संसाररचनाकी अनुपपत्ति रूप दूषण होनेतैं यह अनुमान नहीं होसकता कि केवल अचेतन प्रधान संसारका कारण है काहेतैं यह केवल अचेतन अपने कार्यकों कर्त्ता है ऐसा दृष्टान्त नहीं जैसैं लोकके विषै कुलालादि चेतनके विना केवल

अचेतन मृदादि अपनें घटादि कार्यकों नहीं करसकते तैसें चेतन परमेश्वरके विना अचेतन प्रधान भी संसारकों नहीं रचसकता ॥ १ ॥

प्रवृत्तेश्च ॥ २ ॥

इस सूत्रके प्रवृत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ च शब्द अनुपपत्ति पदकी अनुवृत्तिके अर्थ है सांख्यवादी सत्त्व रज तम इन तीनगुणकी साम्यावस्थाका नाम प्रधान औ प्रकृति कहते हैं औ कहते हैं कि सृष्टिके आदिकालमें संसाररचनाके वास्ते साम्यावस्थाका परित्यागरूप प्रधानकी प्रवृत्ति होती है सो कहना ठीक नहीं काहेतें जैसें लोकके विषै अश्व कुलालादि चेतनके विना अपनें आपहि रथ मृदादिकोंकी प्रवृत्ति नहीं होती तैसें चेतन परमात्माके विना अचेतन प्रधानकीभी अपनी आपहि प्रवृत्ति नहीं होसकती ॥ २ ॥

पयोऽम्बुवच्चेत्तत्रापि ॥ ३ ॥

इस सूत्रके पयोऽम्बुवत् १ चेत् २ तत्र३अपि४ यह च्यार पद हैं ॥ जैसें लोकके विषै बच्छेकी वृद्धिके अर्थ अचेतन दुग्ध अपना आपहि प्रवर्त्त होताहै औ लोकके उपकारके वास्ते अचेतन जल स्वभावसें प्रवर्त्त होता है तैसें पुरुषार्थकी सिद्धिके अर्थ अचेतन प्रधानभी स्वभावसें प्रवर्त्त होताहै । चेत् । यदि ऐसें सांख्यवादी कहै सो कहना ठीक नहीं काहेतें चेतन धेनुके स्नेहकरके दुग्धकी प्रवृत्ति होती है स्वभावसें नहीं औ जलभी चेतनकी प्रेरणासें चलता है इस अर्थमें श्रुति प्रमाण है । एतस्यवाअक्षरस्यप्रशासनेगार्गिप्राच्योऽन्यानद्यःस्यन्दन्ते । अस्यार्थः याज्ञवल्क्य कहतेभये कि हे गार्गि इस अक्षरब्रह्मकी आज्ञाके विषै पूर्वदिशाकी नदी औ अन्य सर्व नदी चलती हैं इति ॥ ३ ॥

व्यतिरेकानवस्थितेश्चानपेक्षत्वात् ॥ ४ ॥

इस सूत्रके व्यतिरेकानवस्थितेः १ च २ अनपेक्षत्वात् ३ यह तीन

पद हैं ॥ सांख्यमतमें तीन गुणकी साम्यावस्थाकों प्रधान कहते हैं औ साम्यावस्थाके विना प्रधानका प्रवर्त्तक वा निवर्त्तक कोई अपेक्षित बाह्य वस्तु स्थित है नहीं औ पुरुष उदासीन है न प्रवर्त्तक है न निवर्त्तक है इसीसें अनपेक्ष प्रधान जगत्का कारण नहीं होसकता औ ईश्वर सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् है तिसकी प्रवृत्ति निवृत्तिमें कोई विरोध नहीं ॥ ४ ॥

अन्यत्राभावाच्चनतृणादिवत् ॥ ५ ॥

इस सूत्रके अन्यत्र १ अभावात् २ च ३ न ४ तृणादिवत् ५ यह पांच पद हैं ॥ जैसें तृण पल्लव उदक इत्यादिक हैं सो किसी निमित्तकी अपेक्षा नहीं करके अपनें स्वभावसैंहिं दुग्धाकार परिणामको प्राप्त होते हैं तैसें प्रधानभी अन्य किसी निमित्तकी अपेक्षा नहीं करके स्वभावसें महदाद्याकार परिणामकों प्राप्त होता है यह सांख्यवादीका कहना ठीक नहीं काहेतें धेन्वादि निमित्तकी अपेक्षा करकेहि तृणादिक दुग्धाकार परिणामको प्राप्त होतेहैं स्वभावसें नहीं जो स्वभावसैंहिं दुग्धाकार परिणामकों प्राप्त होवै तो बैल करके भुक्त तृणादिक भी दुग्धाकार परिणामकों प्राप्त हुआ चाहिये इस रीतिसें प्रधानभी स्वभावसें परिणामकों प्राप्त नहीं होसकता ॥ ५ ॥

अभ्युपगमेऽप्यर्थाभावात् ॥ ६ ॥

इस सूत्रके अभ्युपगमे १ अपि २ अर्थाभावात् ३ यह तीन पद हैं ॥ पूर्वोक्त प्रकारसें यह सिद्धभया कि प्रधानकी प्रवृत्ति स्वभावसें नहीं होसकती इति। अब कहतेहैंकि जो स्वभावसें प्रवृत्ति मानोंगे तो भोग मोक्षादिपुरुषार्थका अभाव होवेगा काहेतें जो प्रधान अपनी प्रवृत्तिके वास्ते अन्यकिसीकी अपेक्षा नहीं करता है तो भोग मोक्षादि पुरुषार्थकी भी अपेक्षा नहीं करेगा तब । पुरुषार्थकी सिद्धिके अर्थ प्रधानकी प्रवृत्ति होती है इस तुम्हारी प्रतिज्ञाकी हानि होवेगी ॥ ६ ॥

पुरुषाश्मवदितिचेत्तथापि ॥ ७ ॥

इस सूत्रके पुरुषाश्मवत् १ इति २ चेत् ३ तथा ४ अपि ५ यह पांच पद हैं ॥ जैसें कोई पंगु पुरुष है सो किसी अन्ध पुरुषके उपरि चढके तिसकों प्रवर्त्त करता है औ अयस्कांतमणि लोहकों प्रवर्त्त करता है तैसें पुरुष है सो प्रधानकों प्रवर्त्त करेगा यहभी सांख्यवादीका कहना ठीक नहीं काहेतें प्रधान स्वभावसें प्रवर्त्त होता है औ पुरुष उदासीन है इस सांख्य सिद्धान्तका त्याग होवैगा औ प्रधान औ पुरुष नित्य हैं औ व्यापक हैं तिनका नित्य सम्बन्ध होनेतें नित्यहि प्रवृत्ति होवैगी ॥ ७ ॥

अंगित्वानुपपत्तेश्च ॥ ८ ॥

इस सूत्रके अङ्गित्वानुपपत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ सत्त्व रज तम इन तीन गुणकी सम अवस्थाका नाम प्रधान है औ जब प्रधानकी प्रवृत्ति होवैगी तब तीनों गुण विषम होके अङ्गाङ्गीभावकों प्राप्त होवैंगे औ जब अङ्गाङ्गीभावकों प्राप्त होवेंगे तब सम अवस्थारूप प्रधान भी नष्टहोवैगा यह मूल प्रधानका नष्टहोनाहिं प्रधानवादीके बडाभारी कष्ट है इसीसें अङ्गाङ्गीभाव नहीं होसकता ॥ ८ ॥

अन्यथानुमितौचज्ञशक्तिवियोगात् ॥ ९ ॥

इस सूत्रके अन्यथा १ अनुमितौ २ च ३ ज्ञशक्तिवियोगात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ यह तीनों गुण परस्परमें सापेक्ष होके जो जो कार्य करना होवै तिस तिस कार्यके अनुकूल स्वभाववाले होते हैं यह प्रधानवादीका अन्यथा अनुमान है सो समीचीन नहीं काहेतें प्रधानके विषै ज्ञान-शक्तिका अभाव होनेतें संसार रचनाहिं नहीं होसकती औ जो प्रधानके विषै ज्ञानशक्तिका अनुमान करै तो एक चेतन संसारका कारण है इस ब्रह्मवादका प्रसंग होवै ॥ ९ ॥

विप्रतिषेधाच्चासमञ्जसम् ॥ १० ॥

इस सूत्रके विप्रतिषेधात् १ च२ असमंजसम् ३यह तीन पद हैं ॥ सांख्यवादी किसी जग है एकत्वङ्‌ मात्र कोंहिं ज्ञान इंद्रिय मानके औ एकत्वक्‌काहि श्रोत्रादि पंचभेद कहके पंचकर्म इंद्रिय एक मन यह सप्त इंद्रिय कहते हैं औ किसी जग है पंच ज्ञानइंद्रिय पंच कर्मइंद्रिय एक मन यह एकादश इंद्रिय कहते हैं औ कहां महत्तत्त्वसैं तन्मात्राकी उत्पत्ति कहते हैं औ कहां अहंकारसैं कहते हैं औ कहां बुद्धि अहंकार मन यह तीन अन्तःकरण कहते हैं औ कहां एक बुद्धिकोंहिं अन्तः-करण कहते हैं इस प्रकारसैं परस्परमें विरुद्ध होनेंतें औ श्रुतिस्मृतिसैं विरुद्ध होनेंतें यह सांख्यमत समीचीन नहीं ॥ १० ॥

पूर्वोक्त प्रकारसैं प्रधान कारणवादका निराकरण किया अब न्यायवैशेषिकाभिमतपरमाणुकारण वादका निराकरण करतेहैं नैयायिक परमाणुसैं जगत्की उत्पत्ति मानते हैं औ यह नियम करते हैं कि कारणका गुण है सो कार्यके विषै अपनें समान जातीय गुणकों उत्पन्न करता है जैसें शुक्लतन्तुसैं शुक्लपटकीहि उत्पत्ति होती है तैसें चेतन ब्रह्मसैं उत्पन्नभया सर्वजगत् चेतनहि होना चाहिये इस रीतिसैं वेदांतमतमें आक्षेप करते हैं इसका उत्तर औ पूर्वोक्त नियममें व्यभिचार नैयायिककी प्रक्रियासें हिं दिखाते हैं सूत्रकार ॥

महद्दीर्घवद्वाह्रस्वपरिमण्डलाभ्याम् ॥ ११ ॥

इस सूत्रके महद्दीर्घवत् १ वा २ ह्रस्वपरिमण्डलाभ्याम् ३ यह तीन पद हैं ॥ परिमण्डल नाम परमाणुका है औ तिसके परिमाणका नाम पारिमाण्डल्य है जैसें नैयायिकमतमें परिमण्डलसैं अणु ह्रस्व परि-माणवाला द्व्यणुक उत्पन्न होता है औ तद्गत पारिमाण्डल्य उत्पन्न नहीं होता है औ द्व्यणुकसैं महत् दीर्घ परिमाणवाला त्र्यणुक

उत्पन्न होता है द्व्यणुकगत ह्रस्व परिमाण उत्पन्न नहीं होता तैसैंहि चेतन ब्रह्मसें जगत् उत्पन्न होता है औ ब्रह्मगत चैतन्य उत्पन्न नहीं होता ॥ ११ ॥

उभयथापिनकर्मातस्तदभावः ॥ १२ ॥

इस सूत्रके उभयथा १ अपि २ न ३ कर्म ४ अतः ५ तद-भावः ६ यह छेह पद हैं ॥ सृष्टिके आदि कालमें सर्व परमाणुके विषै कर्म उत्पन्न होता है तिसके अनंतर दो दो परमाणुका संयोग होके द्व्यणुक उत्पन्न होते हैं औ तीन तीन द्व्यणुकका संयोग होके त्र्यणुक उत्पन्न होते हैं इस रीतिसे औरभी चतुरणुकादि उत्पत्ति क्रमसें महापृथिवी महाजल महातेज महावायु उत्पन्न होते हैं औ प्रलयके आदि-कालमें सर्व परमाणुमें कर्म होके द्व्यणुकादिकोंका विभाग होके सर्व पृथिव्यादिकोंका नाश होताहै ऐसैं वैशेषिक कहतेहैं सो कहना ठीक नहीं काहेतें सृष्टिके आदिकालमें परमाणुके कर्मका कोई निमित्त नहीं अभावसें संयोग विभाग नहीं होसकते संयोग विभागके अभावसें निमित्तके सृष्टि प्रलयभी नहीं होसकते ॥ १२ ॥

समवायाभ्युपगमाच्चसाम्यादनवस्थितेः ॥ १३ ॥

इस सूत्रके समवायाभ्युपगमात् १ च २ साम्यात् ३ अनवस्थितेः ४ यह च्यार पद हैं ॥ वैशेषिक मतमें समवायका अंगीकार होनेतें सृष्टि-प्रलयका अभावहि सिद्ध होताहै काहेतें जैसें परमाणुसें अत्यन्त भेद-वाला द्व्यणुक है सो समवाय सम्बन्धसें परमाणुमें रहता है तैसैंहि पर-माणुसें अत्यन्त भेदवाला समवायभी किसी अन्यसमवाय सम्बन्धसैं परमाणुमें रहेगा तैसें समवायका समवायभी किसी अन्य समवायसें रहेगा इस प्रकारसैं अनवस्थाका प्रसंग होनेतें सृष्टिप्रलय सिद्ध नहीं होसकते ॥ १३ ॥

नित्यमेवचभावात् ॥ १४ ॥

इस सूत्रके नित्यं १ एव २ च ३ भावात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ परमाणु नित्य प्रवृत्ति स्वभाववाले हैं वा नित्यनिवृत्ति स्वभाव वाले हैं वा प्रवृत्ति निवृत्ति दोनों स्वभाव वाले हैं जो नित्य प्रवृत्ति स्वभाववाले हैं वा प्रवृत्ति निवृत्ति दोनों स्वभाववाले हैं तो प्रलयका अभाव होवैगा औ जो निवृत्ति स्वभाववाले हैं तो सृष्टिका अभाव होवैगा औ जो उभय स्वभाववाले कहो सो समीचीन नहीं काहेतें प्रवृत्ति निवृत्तिका परस्पर विरोध है ॥ १४ ॥

रूपादिमत्वाच्चविपर्ययोदर्शनात् ॥ १५ ॥

इस सूत्रके रूपादिमत्वात् १ च २ विपर्ययः ३ दर्शनात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ पृथिवी जल तेज वायु यह च्यार प्रकारके परमाणु हैं सो रूपादि गुणवाले हैं औ नित्य हैं ऐसैं वैशेषिक कहते सो कहना ठीक नहीं काहेतें वैशेषिक मतमें विपरीतताका प्रसंग होनेंतें जैसैं लोकके विषै रूपादि गुणवाला पट है सो अपनें कारण तन्तुकी अपेक्षासैं स्थूल है औ अनित्य है तैसैं परमाणुभी रूपादि गुणवाले होनेंतें अपनें परम कारणकी अपेक्षासैं स्थूल औ अनित्य होवैंगे ॥ १५ ॥

उभयथाचदोषात् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके उभयथा १ च २ दोषात् ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसैं लोकके विषै गन्ध रस रूप स्पर्श इन च्यार गुणवाली पृथिवी स्थूल है औ रूप रस स्पर्श इन तीन गुणवाला जल सूक्ष्म है औ रूप स्पर्श इन दो गुणवाला तेज सूक्ष्मतर है औ एक स्पर्श गुणवाला वायु सूक्ष्मतम है तैसैं परमाणु अधिक न्यून गुणवाले हैं वा नहीं इन दोनोंहि पक्षके विषै तुह्मारे मतमें दोष है काहेतें जो अधिक न्यून गुणवाले परमाणु हैं तो जिसमें अधिक गुण हैं सो स्थूल होनेतें परमाणु न रहेगा औ जो सर्व परमाणु सर्व गुणवाले हैं तो जलके विषै गन्ध होना चाहिये औ तेजके विषै गन्ध रस होनें चाहिये इत्यादि दोषका प्रसंग होवैगा ॥ १६ ॥

अपरिग्रहाच्चात्यन्तमनपेक्षा ॥ १७ ॥

इस सूत्रके अपरिग्रहात् १ च २ अत्यंतं ३ अनपेक्षा ४ यह च्यार पद हैं ॥इस परमाणु कारण वादकों कोईभी मन्वादि शिष्ट पुरुष ग्रहण नहीं करतेभये इसीसैं वेदवादी पुरुष परमाणु कारणवादका अत्यन्त अनादर करते हैं ॥ १७ ॥

पूर्वोक्त प्रकारसैं परमाणु कारणवादका खण्डन किया अब सर्व क्षणिकवादी बौद्धमतका खण्डन करते हैं।

समुदायउभयहेतुकेऽपितदप्राप्तिः ॥ १८ ॥

इस सूत्रके समुदायः १ उभयहेतुके२ अपि३तदप्राप्तिः ४ यह च्यार पद हैं ॥ सर्व पदार्थ बाह्यान्तर भेदसैं दो प्रकारके हैं पृथिव्यादि भूत औ रूपादि भौतिक यह बाह्य पदार्थ हैं चित्त औ कामादि चैत्त यह आन्तर पदार्थ हैं औ कठिन स्नेह उष्ण चलन स्वभाववाले पृथिवी जल तेज वायुके परमाणु मिलके बाह्य समुदाय होताहै औ रूप विज्ञान वेदना संज्ञा संस्कार यह पांचस्कंध मिलके सर्व व्यवहारका हेतु आध्यात्म समुदाय होताहै ऐसें सर्वास्तित्ववादी बौद्ध कहताहै सो कहना ठीक नहीं काहेतें बौद्धके मतमें कर्त्ता भोक्ता वा प्रेरक कोई चेतन है नहीं औ परमाणुकों तथा रूपादि पंचस्कंधकों अचेतन होनेंतें परमाणु हेतुक बाह्य समुदाय औ रूपादिहेतुक आध्यात्म समुदाय नहीं हो सकता औ समुदायके न होनेंतें लोकयात्राका भी लोप होवेगा ॥ १८ ॥

इतरेतरप्रत्ययत्वादितिचेन्नोत्पत्तिमात्र-
निमित्तत्वात् ॥ १९ ॥

इस सूत्रके इतरेतरप्रत्ययत्वात् १ इति २ चेत् ३ न ४ उत्पत्तिमात्रनिमित्तत्वात्५यह पांच पद हैं ॥ शंकते यद्यपि हमारे मतमें भोक्ता वा प्रेरक कोई स्थिर चेतन नहीं है तथापि अविद्या संस्कार विज्ञान नामरूप षडायतन स्पर्श वेदना तृष्णा उपादान भव जाति जरा मरण

शोक परिदेवना दुःख दुर्मनस्ता यह अविद्यादिक परस्परमें कारण हैं तिनके विषै अविद्यादि जन्मादिकोंके कारण हैं औ जन्मादि अविद्यादिकोंके कारण हैं इस रीतिसैं समुदायकी उत्पत्ति होनेतैं लोकयात्राकी सिद्धि है । इति चेन्न । ऐसे न कहो काहेतैं अविद्यादिक उत्पत्तिमात्रके कारण हैं समुदायकी उत्पत्तिका कोई निमित्त नहीं औ निमित्तके अभावतैं लोकयात्राकी सिद्धि नहीं होसकती ॥ १९ ॥

उत्तरोत्पादेचपूर्वनिरोधात् ॥ २० ॥

इस सूत्रके उत्तरोत्पादे१ च २ पूर्वनिरोधात् ३ यह तीन पद हैं ॥ पूर्व यह कहाकि अविद्यादिक उत्पत्तिमात्रके निमित्त हैं समुदायके निमित्त नहीं अब कहते हैं कि अविद्यादिक उत्पत्तिमात्रके भी निमित्त नहीं होसकते काहेतैं जब उत्तरक्षणकी उत्पत्ति होतीहै तब पूर्वक्षण नष्ट होजाताहै ऐसैं क्षणभंगवादी मानते हैं जो पूर्वक्षण नष्ट होगया तो उत्तरक्षणका कारणही नहीं होसकता इसीसैं यह सुगतका मत समीचीन नहीं ॥ २० ॥

असतिप्रतिज्ञोपरोधोयौगपद्यमन्यथा ॥ २१ ॥

इस सूत्रके असति १ प्रतिज्ञोपरोधः २ यौगपद्यम् ३ अन्यथा ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो हेतुके विनाही कार्यकी उत्पत्ति कहै तो विषय करण सहकारि संस्कार इन च्यार प्रकारके हेतुकों प्राप्त होके। चित्त रूपादिकोंका विज्ञान औ चैत्त सुखादि उत्पन्न होतैहैं इस प्रतिज्ञाकी हानि होवै औ जो उत्तरक्षणकी उत्पत्ति पर्यंत पूर्वक्षण रहताहै ऐसैं कहै तो कार्यकारणकों एक कालमें स्थित होनेतैं सर्व पदार्थ क्षणिक हैं इस प्रतिज्ञाका उपरोध होवै ॥ २१ ॥

प्रतिसंख्याऽप्रतिसंख्यानिरोधाप्रा-
प्तिरविच्छेदात् ॥ २२ ॥

इस सूत्रके प्रतिसंख्याऽप्रतिसंख्यानिरोधाप्राप्तिः १ अविच्छेदात् २

यह दो पद हैं॥ क्षणिकवादी है सो बुद्धिपूर्वक पदार्थोंके नाशकों प्रतिसंख्यानिरोध कहताहै औ अबुद्धिपूर्वक नाशकों अप्रतिसंख्यानिरोध कहताहै परंतु उत्तरक्षण औ पूर्वक्षणका जो कार्य कारण रूप प्रवाह है तिसका विच्छेद न होनेतें दोनोंहि प्रकारका निरोध नहीं होसकता ॥ २२ ॥

उभयथाचदोषात् ॥ २३ ॥

इस सूत्रके उभयथा १ च २ दोषात् ३ यह तीन पद हैं॥ क्षणिकवादी कहताहै कि प्रतिसंख्यानिरोध अप्रतिसंख्यानिरोधके अन्तर्भूतहि अविद्यादिकोंका निरोध है सो कहना ठीक नहीं काहेतें जो यमनियमादिसाधनसहित सम्यक् ज्ञानसें अविद्यादिकोंका निरोध होताहै तो हेतुके विनाहि अविद्यादिकोंका नाश होता है इस क्षणिकवादीके मतकी हानि होवैगी औ जो अपना आपहि अविद्यादिकोंका नाश होता है तो सर्व दुःख क्षणिक हैं यह क्षणिकवादीका मार्गोपदेश अनर्थक होवैगा इस रीतिसें क्षणिकवादीका मत समीचीन नहीं ॥ २३ ॥

आकाशेचाविशेषात् ॥ २४ ॥

इस सूत्रके आकाशे १ च २ अविशेषात् ३ यह तीन पद हैं॥ क्षणिकवादी कहताहै कि आकाश कोई वस्तु नहीं है सो कहना समीचीन नहीं काहेतें प्रतिसंख्या अप्रतिसंख्या निरोधकी न्यांई आकाशकोंभी वस्तुत्वज्ञानका अविशेष है औ। आत्मन आकाशः संभूतः। आत्मासें आकाश होताभया इस श्रुतिकरकेभी आकाश वस्तु सिद्ध है औ शब्दः वस्तुनिष्ठः गुणत्वात् गन्धवत् इस अनुमानसेंभी आकाश वस्तु सिद्ध है॥२४॥

अनुस्मृतेश्च ॥ २५ ॥

इस सूत्रके अनुस्मृतेः १ च २ यह दो पद हैं॥ क्षणिकवादी आत्मासें आदि लेके सर्व वस्तुकों क्षणिक कहता है सो कहना ठीक नहीं काहेतें जो आत्मा क्षणिक है तो जो मै पहिलें घटकों देखताभया सो मै अब

घटका स्मरण करता हों ऐसा अनुस्मरण होताहै सो न होना चाहिये काहेतें क्षणिकवादीके मतमें घटकों देखनेंवाला आत्मा नष्ट होगया औ अन्य पुरुषकी देखी वस्तुका दूसरेकों स्मरण होता नहीं ॥ २५ ॥

नासतोऽदृष्टत्वात् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके न १ असतः २ अदृष्टत्वात् ३ यह तीन पद हैं ॥ नष्ट बीजसैं अंकुर उत्पन्न होताहै औ नष्ट दुग्धसैं दधि उत्पन्न होताहै नष्ट मृत्पिण्डसैं घट उत्पन्न होताहै ऐसैं अभावसैं भावकी उत्पत्ति होती है यह सुगतका मत है सो समीचीन नहीं काहेतें अभावसैं भावकी उत्पत्ति देखी नहीं औ जो अभावसैं भावकी उत्पत्ति होवै तो बीजके अभावसैं घट उत्पन्न होना चाहिये औ दंड चक्रादि कारणका ग्रहण न करना चाहिये ॥ २६ ॥

उदासीनानामपिचैवंसिद्धिः ॥ २७ ॥

इस सूत्रके उदासीनानाम् १ अपि २ च ३ एवं ४ सिद्धिः ५ यह पांच पद हैं ॥ जो अभावसैं भावकी उत्पत्ति होवै तो यत्न करके रहित उदासीन पुरुषोंकेभी वांछित अर्थकी सिद्धि होनी चाहिये ॥

यत्नके विनाहिं कुलालकों घट मिलना चाहिये तन्तुवायकों वस्त्र मिलना चाहिये ॥ २७ ॥

क्षणिकविज्ञानवादी योगाचार बौद्धका यह मत है कि विज्ञानसैं व्यतिरिक्त कोईभी घटपटादि बाह्य पदार्थ नहीं हैं जैसैं स्वप्नके विषै बाह्यवस्तुके विनाहिं सर्व व्यवहार विज्ञान मात्रसैं होताहै तैसैं जाग्रत्के विषैभी प्रमाण प्रमेयादि सर्व व्यवहार विज्ञान मात्रसैंहिं होताहै अत आह ।

नाभावउपलब्धेः ॥ २८ ॥

इस सूत्रके न १ अभावः २ उपलब्धेः ३ यह तीन पद हैं ॥ घटपट कुड्य कुसूल इत्यादि सर्व बाह्यपदार्थोंका ज्ञान होनेतें तिनका अभाव नहीं होसकता ॥ २८ ॥

वैधर्म्याच्चनस्वप्नादिवत् ॥ २९ ॥

इस सूत्रके वैधर्म्यात् १ च २ न ३ स्वप्नादिवत् ४ यह च्यार पद हैं॥ जो यह कहा कि जैसें बाह्य वस्तुके बिनाहिं स्वप्नके विषै ज्ञान होता है तैसें जागरितके विषै भी बाह्यवस्तुके विनाहिं ज्ञान होता है सो कहना ठीक नहीं काहेतें स्वप्नके पदार्थका औ जागरितके पदार्थका बाध अबाध रूप वैधर्म्य है जब पुरुष जागताहै तब स्वप्न दृष्टवस्तुका बाध होता है औ जागरितके विषै दृष्टघटादि वस्तुका बाध कभी होता नहीं यहहि स्वप्न जाग्रत्के पदार्थोंका वैधर्म्य है ॥ २९ ॥

नभावोऽनुपलब्धेः ॥ ३० ॥

इस सूत्रके न १ भावः २ अनुपलब्धेः ३ यह तीन पद हैं॥ बाह्य-वस्तुके विनाहिं वासनाकी विचित्रतासैं घटपटादि ज्ञानकी विचित्रता है यह कहना भी ठीक नहीं काहे तें तुम्हारे मतमें बाह्य वस्तुका ज्ञानहै नहीं औ बाह्य वस्तुके ज्ञान विना वासनाकी उत्पत्ति होती नहीं॥ ३०॥

क्षणिकत्वाच्च ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके क्षणिकत्वात्१च२ यह दो पद हैं॥ यद्यपि क्षणिकज्ञान-वादी योगाचार अहं अहं इस आलय विज्ञानकों वासनाका आश्रय कहताहै तथापि अयं घटः अयं पटः इस प्रवृत्तिविज्ञानकी न्यांई आल-यविज्ञानकों भी क्षणिक होनेतें वासनाका आश्रय नहिं होसकता॥३१॥

सर्वथानुपपत्तेश्च ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके सर्वथा १ अनुपपत्तेः २ च ३ यह तीन पद हैं ॥ बहुत कहनें करके क्या है सर्व प्रकार करके जैसें जैसें इस क्षणिकवादीके सिद्धान्तकी परीक्षा करैं तैसें तैसें वालुकाकूपकी न्यांई विदीरण होताहै अपनें कल्याणकी इच्छावाला पुरुष इस सुगतमतकों सर्वथा अनुप-पन्न जानके इसका अनादर करै ॥ ३२ ॥

नैकस्मिन्नसंभवात् ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके न १ एकस्मिन् २ असंभवात् ३ यह तीन पद हैं॥ सुगतके मतका निराकरण किया अब विवसन (दिगंवर) के मतका निराकरण करते हैं विवसन हैं सो स्याद्वाद सप्तभङ्गी न्यायकों अपना सिद्धान्त मानते हैं सो सप्तभङ्ग यह हैं। स्यादस्ति १ स्यान्नास्ति २ स्यादस्ति चनास्तिच ३ स्यादवक्तव्यः ४ स्यादस्तिचावक्तव्यश्च ५ स्यान्नास्तिचावक्तव्यश्च ६ स्यादस्तिचनास्तिचावक्तव्यश्च ७ इति। इस सप्तभङ्गके समुदायकों सप्तभङ्गी कहते हैं स्याद् अव्यय कथंचित् अर्थकों कहता है इसका संक्षेपसें अर्थ यह है कि घटादि वस्तु कथंचित् है १ कथंचित् नहीं है २ कथंचित् है औ नहीं है ३ कथंचित् अवक्तव्य है ४ कथंचित् है औ अवक्तव्य है ५ कथंचित् नहीं है औ अवक्तव्य है ६ कथंचित् है औ नहीं है औ अवक्तव्य है ७ इति। यहभी मत समीचीन नहीं काहेतें एक कालमें एक वस्तुके विषै सत्त्व असत्त्वादि विरोधि धर्मोंका संभव नहीं जहां सत्त्व है तहां असत्त्व नहीं औ जहां असत्त्व है तहां सत्त्व नहीं ॥ ३३ ॥

एवंचात्माऽकात्स्न्र्यम् ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके एवं १ च २ आत्माऽकात्स्न्र्यम् ३ यह तीन पद हैं॥ जैसें एक धर्मीके विषै विरुद्ध धर्मका असंभव रूप दोष स्याद्वादमें है तैसें जीवात्माका अकात्स्न्र्य दोषभी है काहेतें विवसन कहतेहैं कि शरीरके परिमाणहिं जीवका परिमाण है जो शरीरके परिमाण जीव है तो असर्वगत परिच्छिन्न जीवात्मा मध्यम परिणामवाला होनेंतें घटादिकोंकि न्याईं अनित्य होवैगा ॥ ३४ ॥

नचपर्यायादप्यविरोधोविकारादिभ्यः ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके न १ च २ पर्यायात् ३ अपि ४ अविरोधः ५ विकारादिभ्यः ६ यह छे पद हैं ॥ पर्यायता करके जब जीव हस्तीके शरीरकों

त्यागके कीटपतंगके शरीरमें जाता है तब जीवके अवयव कम होजातेहैं औ जब कीटपतंगके शरीरकों त्यागके हस्तीके शरीरमें जाता है तब अवयव बढजाते हैं इस रीतिसें हमारे मतमें विरोध नहीं ऐसें दिगंबर कहते हैं सो ठीक नहीं काहेतें जो जीवके अवयव घटते बढते हैं तो जीव विकारी होनेतें अनित्य होवैगा ॥ ३५ ॥

अन्त्यावस्थितेश्चोभयनित्यत्वादविशेषः ॥ ३६ ॥

इस सूत्रके अन्त्यावस्थितेः १ च २ उभयनित्यत्वात् ३ अविशेषः ४ यह च्यार पद हैं ॥ मोक्ष अवस्थाके विषै जीवका अन्त्य परिमाण है सो नित्य है ऐसें जैनमतवाले मानते हैं सो समीचीन नहीं काहेतें जैसें अन्त्यपरिमाण नित्य है तैसें आद्य मध्य परिमाणकोभी नित्यत्वका प्रसंग होनेतें तीनोंहिं परिमाणोंकों अविशेष प्रसंग है जैसें सौगतमत आदरके योग्य नहीं तैसें आर्हत मतभी असंगत होनेतें आदरके योग्य नहीं ॥ ३६ ॥

पत्युरसामञ्जस्यात् ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके पत्युः १ असामञ्जस्यात् २ यह दो पद हैं ॥ ईश्वर है सो इस जगत्का केवल निमित्त कारणहि है उपादान कारण नहीं ऐसें शैव वैशेषिकादिक कहते हैं सो समीचीन नहीं काहेतें हीन मध्यम उत्तम प्राणियोंके भेदकों करनेवाले ईश्वरके रागद्वेषादि दोषका प्रसंग होनेतें अस्मदादिकोंकी न्याईं अनीश्वरताका प्रसंग होवैगा जो विषमकारी है सो दोषवाला है यह व्याप्ति लोकमें प्रसिद्ध है ॥ ३७ ॥

सम्बन्धानुपपत्तेश्च ॥ ३८ ॥

इस सूत्रके संबन्धानुपपत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ प्रधान पुरुषसें जुदा ईश्वर संयोगसमवायादि संबंधके विना प्रधान पुरुषकों प्रेर नहीं सकता औ प्रधान पुरुष ईश्वर इनतीनोंका संयोगसंबंध बने नहीं काहेतें यह तीनों सर्वगत हैं औ निरवयव हैं औ इनके आश्रयाश्रयिभावकों

न होनेतैं समवायादि संबंधभी नहीं होसकता इसीसैं सांख्यादिकोंके ईश्वरकी कल्पना ठीक नहीं ॥ ३८ ॥

अधिष्ठानानुपपत्तेश्च ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके अधिष्ठानानुपपत्तेः१ च२ यह दो पद हैं ॥ जैसें मृदादिकोंकों लेके कुंभकार कुंभ करनेकों प्रवृत्त होता है तैसें ईश्वरभी प्रधानादिकोंकों लेके प्रवृत्त होता है ऐसें तार्किक कहते हैं सो समीचीन नहीं काहेतैं मृदादिकोंसैं विलक्षण रूपादि हीन अप्रत्यक्ष प्रधानादिकोंकों लेके ईश्वर प्रवृत्त नहीं हो सकता ॥ ३९ ॥

करणवच्चेन्न भोगादिभ्यः ॥ ४० ॥

इस सूत्रके करणवत्१चेत्२न३ भोगादिभ्यः४यह च्यार पद हैं ॥ जैसें रूपादिहीन अप्रत्यक्ष चक्षुरादि करणकों लेके पुरुष प्रवृत्त होताहै तैसें प्रधानादिकोंकों लेके ईश्वर प्रवृत्त होताहै। इतिचेन्न । ऐसें न कहो काहेतैं जो चक्षुरादि करणके सम प्रधानादिकोंकों मानोंगे तो संसारी पुरुषकी न्यांई ईश्वरकों भी भोगादिकोंका प्रसंग होवैगा ॥ ४० ॥

अन्तवत्त्वमसर्वज्ञतावा ॥ ४१ ॥

इस सूत्रके अन्तवत्त्वम् १ असर्वज्ञता२वा३ यह तीन पद हैं ॥ ईश्वर सर्वज्ञ औ अनंत है प्रधान औ पुरुष अनंत हैं ऐसें तार्किक कहते हैं तहां हम पूछते हैं कि ईश्वर है सो अपनी तथा प्रधान पुरुषकी संख्याकों वा परिमाणकों जानता है वा नहीं जो जानता है तो जैसें लोकमें संख्या परिमाणवाला घटादि पदार्थ अनित्य है तैसें प्रधान पुरुष ईश्वर यह तीनोंही अनित्य होवेंगे औ जो नहीं जानता है तो ईश्वर सर्वज्ञ नहीं इस रीतिसैं तार्किकपरिकल्पित ईश्वरकारणवाद असंगत है ॥ ४१ ॥

उत्पत्त्यसंभवात् ॥ ४२ ॥

इस सूत्रका उत्पत्त्यसंभवात् १ यह एकहि समस्त पद है ॥ एकहि

भगवान् वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध इस चतुर्व्यूहरूप करके स्थित है वासुदेव परमात्मा है संकर्षण जीव है प्रद्युम्न मन है अनिरुद्ध अहंकार है वासुदेवसें संकर्षण उत्पन्न होता है संकर्षणसें प्रद्युम्न उत्पन्न होता है प्रद्युम्नसें अनिरुद्ध उत्पन्न होता है ऐसें भागवत मानते हैं सो ठीक नहीं काहेतें वासुदेव परमात्मासें संकर्षण जीवकी उत्पत्तिका असंभव है औ जो जीवकी उत्पत्ति होती है तो उत्पत्तिवाले जीवकों घटादिवत् अनित्य होनेंतें जीवकी भगवत्प्राप्तिरूप मोक्ष न होवैगी ॥ ४२ ॥

नचकर्त्तुःकरणम् ॥ ४३ ॥

इस सूत्रके न १ च २ कर्त्तुः ३ करणम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ संकर्षणाख्य जीव कर्त्तासें प्रद्युम्नसंज्ञक मनरूप करण उत्पन्न होता है औ प्रद्युम्नसंज्ञक मनसें अनिरुद्धसंज्ञक अहंकार उत्पन्न होता है ऐसें भागवत कहते हैं सो समीचीन नहीं काहेतें लोकमें देवदत्तादि कर्त्तासें कुठारादि करण उत्पन्न होते देखे नहीं औ जो ऐसें कहै कि देवदत्त अपना आपहि कुठारकों बनायके छिदि क्रियाकों करसकताहै सो भी ठीक नहीं काहेतें देवदत्त अपनें हस्तसें कुठारकों बनाता है जीवके हस्तभी नहीं औ जीव कर्त्तासें मन करण उत्पन्न होताहै ऐसी कोई श्रुतिभी नहीं है ॥ ४३ ॥

विज्ञानादिभावेवातदप्रतिषेधः ॥ ४४ ॥

इस सूत्रके विज्ञानादिभावे १ वा २ तदप्रतिषेधः ३ यह तीन पद हैं ॥ जो ऐसें कहै कि वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध यह च्यारोंही विज्ञानादि शक्तिवाले ईश्वर हैं सो कहना बनें नहीं काहेतें जो यह च्यारों परस्पर भिन्न हैं तो च्यार ईश्वर माननें निरर्थक हैं औ एक भगवान् वासुदेव परमार्थ तत्त्व है इस तुम्हारी प्रतिज्ञाकी हानि होवैगी औ जो एकहीके च्यार भेद हैं तो वासुदेवसें संकर्षणकी उत्पत्तिका असंभव है ॥ ४४ ॥

विप्रतिषेधाच्च ॥ ४५ ॥

इस सूत्रके विप्रतिषेधात् १ च २ यह दो पद हैं॥ इस शास्त्रके विषै आत्माही गुण औ गुणी है प्रद्युम्न अनिरुद्ध आत्मासैं भिन्न हैं वासुदेवादि च्यारों आत्मा हैं इत्यादि विरुद्धोक्ति बहुत हैं औ शांडिल्यऋषि च्यारों वेदके विषै कल्याणकों नहीं देखके इस शास्त्रकों पढताभया इत्यादि वेदकी निन्दा है इसीसैं यह कल्पना असंगत है ॥ ४५ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां द्वितीयाध्यायस्य द्वितीयःपादः ॥ २ ॥

द्वितीयाध्याये तृतीयः पादः ।

वेदान्तके विषै तैत्तिरीय उपनिषद्में आकाशवायुकी उत्पत्ति मानते हैं औ छान्दोग्यके विषै नहीं मानते हैं औ वाजसनेयी शाखावाले जीवप्राणकी उत्पत्ति मानते हैं औ अथर्ववेदके विषै प्राणकी उत्पत्ति मानते हैं ऐसैं उत्पत्ति श्रुतियोंका परस्परमें विरोध है तिसको दूर करते हैं सूत्रकार ॥

नवियदश्रुतेः ॥ १ ॥

इस सूत्रके न १ वियत् २ अश्रुतेः३ यह तीन पद हैं॥ आकाशकी उत्पत्ति नहीं होती काहेतें छान्दोग्यके विषै । तत्तेजोऽसृजत । यह श्रुति तेजपूर्वक जगत्की उत्पत्तिकों कहती है औ आकाशकी उत्पत्तिमें कोई श्रुति नहीं ऐसैं एकदेशी मानता है ॥ १ ॥

अस्तितु ॥ २ ॥

इस सूत्रके अस्ति १ तु २ यह दो पद हैं ॥ तुशब्द पक्षान्तर ग्रहणके वास्ते है जो छान्दोग्यके विषै आकाशकी उत्पत्तिकों कहनेंवाली श्रुति नहीं है तो न रहो परंतु तैत्तिरीयके विषै । तस्माद्वाएतस्मादा-

त्मनआकाशःसंभूतः । यह श्रुति कहती है कि इस आत्मासैं आकाश उत्पन्न होताभया इसीसैं श्रुतियोंका परस्पर विरोध है ॥ २ ॥

गौण्यसंभवात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके गौणी १ असंभवात् २ यह दो पद हैं ॥ कोई कहता है कि आकाशकी उत्पत्ति नहीं होसकती औ जो आकाशकी उत्पत्तिमें श्रुति प्रमाण कहा सो श्रुति गौण है मुख्य नहीं काहेतें कारणसामग्रीके अभावतें आकाशकी उत्पत्तिका असंभव है औ जितनें काल कणादके शिष्य जीवते हैं उतनेंकाल आकाशकी उत्पत्ति कोई भी नहीं कह सकता ॥ ३ ॥

शब्दाच्च ॥ ४ ॥

इस सूत्रके शब्दात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ वायुश्चान्तरिक्षंचैतदमृतम् । यह श्रुति वायुको औ आकाशकों अमृत कहती है अमृत नाम नित्यका है नित्यकी उत्पत्ति होती नहीं औ । आकाशशरीरंब्रह्म । आकाशशरीरवाला ब्रह्म है इस श्रुतिसैं भी आकाश अनादि भान होता है ॥ ४ ॥

एकही संभूत शब्द आकाशके विषै गौण औ तेजके विषै मुख्य कैसें है इस शंकाका उत्तर एकदेशी कहता है ॥

स्याच्चैकस्यब्रह्मशब्दवत् ॥ ५ ॥

इस सूत्रके स्यात् १ च २ एकस्य ३ ब्रह्मशब्दवत् ४ यह च्यार पद हैं ॥ जैसें एक ब्रह्म प्रकरणके विषै अन्नंब्रह्म आनंदोब्रह्म इन दो वाक्यों करके अन्नकों औ आनंदकों ब्रह्म कहा है तहां अन्नके विषै ब्रह्मशब्द गौण है औ आनंदके विषै मुख्य है तैसें एकहि संभूत शब्द आकाशके विषै गौण है औ तेजके विषै मुख्य है ॥ ५ ॥

प्रतिज्ञाऽहानिरव्यतिरेकाच्छब्देभ्यः ॥ ६ ॥

इस सूत्रके प्रतिज्ञाऽहानिः १ अव्यतिरेकात् २ शब्देभ्यः ३ यह तीन पद हैं॥ यह वेदकी प्रतिज्ञा है कि एक आत्माके जाननेसैं सर्व जगत जाना जाताहै जो सर्व जगत्कों ब्रह्मसैं अभिन्न माने तो इस प्रतिज्ञाकी हानि न होवै औ जो आकाशकों ब्रह्मका कार्य न माने तो ब्रह्मके ज्ञानसैं आकाशका ज्ञान न होवैगा तब प्रतिज्ञाकी हानि होवैगी औ। ऐतदात्म्यमिदंसर्वम्। यह सर्व जगत् इस आत्मरूप है इत्यादि शब्दोंसैं भी जगत् औ ब्रह्मका अभेद भान होता है॥ ६॥

जो यह कहा कि आकाशकी उत्पत्तिकों कहनेवाली श्रुति गौण है तहां कहते हैं॥

यावद्विकारंतुविभागोलोकवत् ॥ ७॥

इस सूत्रके यावत् १ विकारं २ तु ३ विभागः ४ लोकवत् ५ यह पांच पद हैं॥ तुशब्द शंकाकी निवृत्तिके अर्थ है जैसें लोकके विषै घट घटिका शराव कटक केयूरकुण्डलादि जितना विकार है उतनाही तिसका विभाग है औ विकाररहित वस्तुका विभाग है नहीं औ आकाश दिक् कालादिकोंका पृथिव्यादिकोंसैं विभाग होनेतैं आकाशादिकोंसैं विभाग है तथापि आत्मासैं पर कोई वस्तु है नहीं जिसका आत्मा विकार होवै॥ ७॥

एतेनमातरिश्वाव्याख्यातः ॥ ८॥

इस सूत्रके एतेन १ मातरिश्वा २ व्याख्यातः ३ यह तीन पद हैं॥ इस आकाशके व्याख्यान करके आकाशके आश्रित वायु-का भी व्याख्यान होता भया जो श्रुति आकाशकों आत्माका विकार कहती है सो श्रुति वायुको आकाशका विकार कहती है॥ ८॥

असंभवस्तुसतोऽनुपपत्तेः ॥ ९॥

इस सूत्रके असंभवः १ तु २ सतः ३ अनुपपत्तेः ४ यह

च्यार पद हैं॥ जो कोई ऐसें कहै कि जैसें आकाश वायुकी उत्पत्ति होती है तैसें ब्रह्मकी भी उत्पत्ति होवैगी सो कहना असंभव है काहेतें सत्-ब्रह्मकी उत्पत्ति सत्सें है वा असत्सें है जो सत्सें कहोतो ब्रह्मसें दूसरा कोई सत् नहीं औ जो असत्सें कहो तो कदाचित् वन्ध्याके पुत्रसें भी किसीकी उत्पत्ति होने चाहिये औ ब्रह्मकी उत्पत्तिकों कहनेंवाली कोई श्रुति भी नहीं है ॥ ९ ॥

तेजोऽतस्तथाह्याह ॥ १० ॥

इस सूत्रके तेजः १ अतः २ तथा ३ हि ४ आह ५ यह पांच पद हैं॥ तेज है सो वायुसें उत्पन्न होताभया काहेतें । वायोरग्निः। यह श्रुतिवाक्य वायुसें तेजकी उत्पत्ति कहता है औ जो छान्दोग्यमें । तत्तेजोसृजत।यह श्रुति है सो परंपरासें तेजकों ब्रह्मका कार्य कहती है साक्षात् नहीं ॥१०॥

आपः ॥ ११ ॥

इस सूत्रका आपः१यह एकही पद है ॥ पूर्व सूत्रसें अतस्तथाह्याह इन पदोंकी अनुवृत्ति करणी, आप है सो तेजसें उत्पन्न होतेभये काहेतें। अग्नेरापः । यह श्रुतिवाक्य अग्निसें आपकी उत्पत्ति कहता है ॥ ११ ॥

पृथिव्यधिकाररूपशब्दान्तरेभ्यः ॥ १२ ॥

इस सूत्रके पृथिवी १ अधिकाररूपशब्दान्तरेभ्यः २ यह दो पद हैं ॥ वेदके विषे श्रवण होता है कि। ताअन्नमसृजत। अस्यार्थः। आप है सो अन्नकों रचतेभये इति । तहां संशय है कि अन्नशब्दसें व्रीहि यवादिकोंका ग्रहण है वा पृथिवीका ग्रहण है इति । तहां कहते हैं कि अन्नशब्दसें पृथिवीका ग्रहण है काहेतें। तत्तेजोऽसृजत । यह महाभूतोंका अधिकार है व्रीहि यवादिकोंको नहीं औ । यत्कृष्णंतदन्नस्य । जो कृष्णरूप है सो अन्नका है इहां अन्नशब्दसें पृथिवीका ग्रहण है औ । अद्भ्यः पृथिवी । आपसें पृथिवी होतीभई इस शब्दान्तरसें भी पृथिवीका ग्रहण है ॥ १२ ॥

आकाशादि पंचमहाभूत अपनें आपही अपनें कार्यकों रचते हैं वा परमेश्वर तिस तिस आकाशादि रूपसैं स्थित होके तिस तिस कार्यका चिंतन करके तिस तिस कार्यकों रचता है अतआह ॥

तदभिध्यानादेवतुतल्लिङ्गात्सः ॥ १३ ॥

इस सूत्रके तदभिध्यानात् १ एव २ तु ३ तल्लिंगात् ४ सः ५ यह पांच पद हैं ॥ सो परमेश्वरही तिस तिस आकाशादि रूपसैं स्थित होके तिस तिस कार्यका चिंतन करके तिस तिस कार्यकों रचता है काहेतें । यः पृथिव्यांतिष्ठन् । इत्यादि श्रुति कहती है कि जो परमेश्वर पृथिवीमें स्थित होके पृथिवीको प्रेरता है औ पृथिवी तिसकों नहीं जानती है इति ॥ १३ ॥

विपर्ययेणतुक्रमोऽतउपपद्यतेच ॥ १४ ॥

इस सूत्रके विपर्ययेण १ तु २ क्रमः ३ अतः ४ उपपद्यते ५ च ६ यह छेह पद हैं ॥ भूतोंका उत्पत्तिक्रम कहके अब प्रलयक्रम कहते हैं जैसें उत्पत्तिक्रम है तैसेंहि प्रलयक्रम है वा विपरीत है तहां कहते हैं कि उत्पत्तिक्रमसें प्रलयक्रम विपरीत है काहेतें जैसें जिस क्रमसैं पुरुष मकानके ऊपर चढता है तिसतें विपरीत क्रमसैं उतरता है तैसें ही उत्पत्ति क्रमसैं प्रलयक्रम विपरीत है औ इस अर्थकों स्मृति भी कहती है। जगत्प्रतिष्ठादेवर्षेपृथिव्यप्सुप्रलीयते । ज्योतिष्यापःप्रलीयंतेज्योतिर्वायौ प्रलीयते। वायुश्चलीयते व्योम्नितच्चाव्यक्तेप्रलीयते इत्यादि । अर्थः ॥ हे नारद जगत्को धारण करनेंवाले पृथिवी जलके विषै लीन होतीहै औ जल ज्योतिके विषै लीन होता है औ ज्योति वायुके विषै लीन होताहै औ वायु आकाशके विषै लीन होता है औ आकाश अव्यक्तके विषै लीन होता है ॥ १४ ॥

अन्तराविज्ञानमनसीक्रमेणतल्लिङ्गादिति चेन्नाविशेषात् ॥ १५ ॥

इस सूत्रके अन्तराविज्ञानमनसी १ क्रमेण२ तल्लिङ्गात्३ इति४चेत् ५ न ६ अविशेषात्७यह सात पद हैं॥ अथर्ववेदके विषे उत्पत्ति प्रकरणमें । एतस्माज्जायतेप्राणोमनः सर्वेंद्रियाणिच । इत्यादि मंत्रलिङ्गसें आत्माके औ भूतोंके मध्यमें सर्व इंद्रियसहित बुद्धि औ मनकी उत्पत्तिका श्रवण होताहै तिस मन बुद्धिके उत्पत्ति क्रम करके पूर्वोक्त भूतादि क्रमका भंग होवैगा। इतिचेन्न। ऐसें नकहो काहेतें मन बुद्धि इंद्रिय यह सर्व भूतोंके कार्य हैं भूतोंके उत्पत्ति प्रलय करकेहि इनकाभी उत्पात्ति प्रलय सिद्ध है और कुछ विशेषता नहीं । मंत्रार्थः । इस आत्मासें प्राण मन सर्व इंद्रिय इत्यादि सर्वही उत्पन्न होते हैं इति ॥ १५ ॥

चराचरव्यपाश्रयस्तुस्यात्तद्व्यपदेशोभाक्तस्तद्भावभावित्वात् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके चराचरव्यपाश्रयः १ तु २ स्यात् ३ तद्व्यपदेशः ४ भाक्तः ५ तद्भावभावित्वात् ६ यह छेह पद हैं॥ जीव जन्मता है औ मरता है यह किसी पुरुषकों भ्रांति है तिसकों दूर करते हैं जन्ममरण शब्दका कथन चराचर शरीरके आश्रय मुख्य है औ जीवके विषे जन्ममरण शब्दका कथन गौण है शरीरके प्रादुर्भाव तिरोभावका नाम जन्ममरण है शरीरके विना जीवका न जन्म है न मरण है ॥ १६ ॥

नात्माऽश्रुतेर्नित्यत्वाच्चताभ्यः ॥ १७ ॥

इस सूत्रके न १ आत्मा २ अश्रुतेः ३ नित्यत्वात् ४ च ५ ताभ्यः ६ यह छेह पद हैं ॥ जैसें व्योमादिक परब्रह्मसें उत्पन्न होते हैं तैसें जीव उत्पन्न होता है वा नहीं तहां कहते हैं कि जीव उत्पन्न नहीं होता काहेतें उत्पतिप्रकरणके विषे जीवकी उत्पत्तिका श्रवण

नहीं औ । सवाएषमहानजआत्माऽजरोऽमरोऽमृतोऽभयो ब्रह्म । इत्यादि श्रुतिसें जीवात्मा नित्य सिद्ध है । श्रुत्यर्थः । यह जीव है सो महान् है अज है आत्मा है अजर है अमर है अमृत है अभय है ब्रह्म है इति ॥ १७ ॥

वैशेषिक कहते हैं कि जीवात्मा स्वतः जड है आत्मा मनके संयोगसें जीवमें चैतन्य गुण उत्पन्न होता है औ सांख्यवादी कहतेहैं कि जीव नित्य चैतन्यस्वरूप है इस संशयकों दूर करते हैं सूत्रकार ॥

ज्ञोऽतएव ॥ १८ ॥

इस सूत्रके ज्ञः १ अतः २ एव ३ यह तीन पद हैं ॥ जीवात्मा नित्य चैतन्यस्वरूप है इसी हेतुसें जीवकी उत्पत्ति नहीं होती ॥ १८ ॥

जीवका अणु परिमाण है वा मध्यम परिमाण है वा महत् परिमाण है अत आह ॥

उत्क्रान्तिगत्यागतीनाम् ॥ १९ ॥

इस सूत्रका उत्क्रान्तिगत्यागतीनाम् १ यह एकही पद समस्त है ॥ जीवका अणु परिमाणहै काहेतें शास्त्रके विषै जीवकी उत्क्रान्ति गति आगतिका श्रवण है इस शरीरकों त्यागनेंका नाम उत्क्रान्ति है इस लोकसें चन्द्रलोकादिकोंमें जानेंका नाम गति है चन्द्रलोकादिकोंसें इस लोकमें आनेका नाम आगति है ॥ १९ ॥

स्वात्मनाचोत्तरयोः ॥ २० ॥

इस सूत्रके स्वात्मना १ च २ उत्तरयोः ३ यह तीन पद हैं ॥ यद्यपि जैसें कोई पुरुष किसी ग्रामका स्वामी है सो न चले तौभी कदाचित् तिसका स्वामीपना दूर होजाता है तैसें जीव इस शरीरसें न चले तौभी इस शरीरके स्वामीपनेंकी निवृत्तिरूप उत्क्रान्ति होसकती है तथापि उत्तर जो गति आगति है सो अपनें आत्माके संयोग विना नहीं होसकती इस

हेतुसैंभी जीव अणु है अणुके विना संयोग नहीं होता संयोग विना चलना नहीं होता चले विना गति आगति नहीं होसकती ॥ २० ॥

नाणुरतच्छ्रुतेरितिचेन्नेतराधिकारात् ॥ २१ ॥

इस सूत्रके न १ अणुः २ अतच्छ्रुतेः ३ इति ४ चेत् ५ न ६ इतराधिकारात् ७ यह सात पद हैं ॥ जीवका अणुपरिमाण नहीं है काहेतें। महानजआत्मा। यह श्रुतिवाक्य आत्माका अणुपरिमाणसैं विपरीत महत् परिमाण कहता है। इतिचेन्न। ऐसैं न कहो काहेतें उक्त श्रुतिवाक्यमें परमात्माका अधिकार होनेंतें परमात्मा महत् परिमाणवाला है जीवात्मा नहीं ॥ २१ ॥

स्वशब्दोन्मानाभ्यांच ॥ २२ ॥

इस सूत्रके स्वशब्दोन्मानाभ्याम् १ च २ यह दो पद हैं ॥ जीवके अणु परिमाणकों साक्षात् श्रुति कहती है। एषोऽणुरात्माचेतसावेदितव्योयस्मिन्प्राणः पंचधासंविवेश इति। अस्यार्थः।यह आत्मा अणु है औ चित्त करके जाननें योग्य है औ जिसके विषै प्राण पांच प्रकार करके प्रवेश करताभया इति। औ शास्त्रमें यह भी कहा है कि केशके अग्रभागका सौ भाग करे तिसमें भी एक भागका सौ भागकरे तिस परिमाणवाला जीव है इस उन्मानसें भी जीवका अणुपरिमाण सिद्ध है॥ २२॥

जो जीवात्मा अणुपरिमाणवाला है तो सर्व शरीरके विषै शीतादिकोंका ज्ञान न होना चाहिये इस शंकाका उत्तर कहते हैं सूत्रकार ॥

अविरोधश्चन्दनवत् ॥ २३ ॥

इस सूत्रके अविरोधः १ चंदनवत् २ यह दो पद हैं ॥ जैसैं हरिचन्दनका एक बिन्दु शरीरके एकदेशमें लगाहुआ सर्व शरीर व्यापी आनन्दकों करता है तैसैं जीवात्मा भी त्वक्के साथ संयोग पायके शरीरके एकदेशमें स्थित हुआ भी सर्वशरीरव्यापी शीतादि ज्ञानकों कर सकता है ॥ २३ ॥

अवस्थितिवैशेष्यादितिचेन्नाभ्युपगमाद्धृदिहि ॥ २४ ॥

इस सूत्रके अवस्थितिवैशेष्यात् १ इति २ चेत् ३ न ४ अभ्युपगमात् ५ हृदि ६ हि ७ यह सात पद हैं॥ शरीरके एकदेशमें चन्दनकी अवस्थिति औ सर्वशरीरमें चन्दनकृत आनन्द यह दोनों प्रत्यक्ष हैं औ आत्मकृत सर्वशरीरव्यापी ज्ञान प्रत्यक्ष है परंतु शरीरके एकदेशमें आत्माकी अवस्थिति प्रत्यक्ष नहीं इस रीतिसें अवस्थिति विशेष होनेतें चन्दनका दृष्टान्त विषम है। इति चेन्न। ऐसें न कहो काहेतें। हृदिह्येष आत्मा। यह आत्मा हृदेके विषै है इस श्रुतिवाक्यसें एकदेश हृदेके विषै आत्माकी अवस्थितिका निश्चय है ॥ २४ ॥

गुणाद्वालोकवत् ॥ २५ ॥

इस सूत्रके गुणात् १ वा २ लोकवत् ३ यह तीन पद हैं॥ जैसें लोकके विषै मणि वा प्रदीप किसी मकानके एकदेशमें स्थित हैं परंतु तिनकी प्रभा सर्व मकानमें है तैसें आत्मा अणु है परंतु तिसका चैतन्य गुण सर्वशरीरव्यापी है ॥ २५ ॥

जैसें पटका शुक्ल गुण है सो पटके विना और जगह नहीं रहता तैसें जीवका चैतन्य गुण भी जीवके विना सर्वशरीरमें नहीं रहेगा इस शंकाका उत्तर कहते हैं॥

व्यतिरेकोगन्धवत् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके व्यतिरेकः १ गंधवत् २ यह दो पद हैं। जैसें गन्ध गुण है सो अपनें आश्रय पुष्पमें वर्त्तके और जगहभी वर्त्तता है तैसें चैतन्य गुण भी अपनें आश्रय जीवमें वर्त्तके सर्वशरीरमें वर्त्तता है ॥ २६ ॥

तथाचदर्शयति ॥ २७ ॥

इस सूत्रके तथा १ च २ दर्शयति ३ यह तीन पद हैं॥ आलोमभ्य आनखाग्रेभ्यः। यह श्रुति कहती है कि सर्व लोम पर्यंत औ सर्वनखके अग्रभागपर्यंत सर्वशरीरमें जीवका चैतन्य गुण वर्त्तता है ॥ २७ ॥

पृथगुपदेशात् ॥ २८ ॥

इस सूत्रके पृथक् १ उपदेशात् २ यह दो पद हैं॥ प्रज्ञया शरीरं समारुह्य। इस श्रुति करके आत्माका औ प्रज्ञाका कर्तृ करण भाव करके पृथक् उपदेश होनेंतें चैतन्य गुण करके जीव सर्वशरीर-व्यापी है ॥ २८ ॥

जो यह जीवका अणु परिमाण कहा सो एकदेशीका मत है तिसको दूषित करनेंके वास्ते मुख्य सिद्धान्ती कहता है कि पर ब्रह्मका नाम जीव है औ परब्रह्मकों विभु होनेंतें जीव विभु है शंका जो जीव विभु है तो शास्त्रके विषै अणु क्यों कहाहै अतआह ॥

तद्गुणसारत्वात्तुतद्व्यपदेशः प्राज्ञवत् ॥ २९ ॥

इस सूत्रके तद्गुणसारत्वात् १ तु २ तद्व्यपदेशः ३ प्राज्ञवत् ४ यह च्यार पद हैं ॥ तुशब्द एकदेशी पक्षकी निवृत्तिके अर्थ है जैसें प्राज्ञ परमात्मा विभु है परंतु सगुण उपासनाके विषै उपाधीकों लेके व्रीहि यवादिकोंसें भी अणु कहा है तैसें बुद्धिका गुण जो इच्छा द्वेष सुखदुःखादि तिनकों संसारदशामें जीव अपनें विषै सार मानता है इस उपाधिकों लेके बुद्धिके अणु परिमाणका जीवके विषै कथन है ॥२९॥

जो बुद्धिके संयोगसें आत्मा संसारी है तो जब बुद्धिका वियोग होवैगा तब आत्मा संसारी न रहेगा इस शंकाकों दूर करते हैं ॥

यावदात्मभावित्वाच्चनदोषस्तद्दर्शनात् ॥ ३० ॥

इस सूत्रके यावत् १ आत्मभावित्वात् २ च ३ न ४ दोषः ५ तद्दर्शनात् ६ यह छेह पद हैं ॥ जो दोष तुम कहते हो सो नहीं लगसकता काहेतें जितने काल इस जीवकों सम्यक् ज्ञान न होगा उतनेंकाल बुद्धिका संयोग रहनेंसें यह जीव संसारीही रहेगा औ शास्त्र भी विज्ञान-मय शब्दसें इस जीवकों बुद्धिमय कहता है ॥ ३० ॥

सुषुप्ति औ प्रलयके विषै सर्वविकारका नाश होनेतैं बुद्धिका संयोग भी नहीं रहता इस शंकाकों दूर करते हैं ॥

पुंस्त्वादिवत्तस्यसतोऽभिव्यक्तियोगात् ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके पुंस्त्वादिवत् १ तस्य २ सतः ३ अभिव्यक्तियोगात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ जैसें लोकके विषै पुंस्त्वादिधर्म विद्यमान भी हैं परंतु बाल्यावस्थाके विषै अविद्यमानकी न्याई रहते हैं औ यौवनादि अवस्थाके विषै प्रगट होते हैं तैसें सुषुप्ति प्रलयके विषै भी बुद्धिसंयोगादि सर्व हैं परंतु अविद्यमानकी न्याई रहते हैं औ जागरितादि अवस्थाके विषै प्रगट होते हैं ॥ ३१ ॥

नित्योपलब्ध्यनुपलब्धिप्रसंगोऽन्यतरनियमोवाऽन्यथा ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके नित्योपलब्ध्यनुपलब्धिप्रसंगः १ अन्यतरनियमः २ वा ३ अन्यथा ४ यह च्यार पद हैं ॥ मन बुद्धि चित्त अहंकार यह च्यार प्रकारका अन्तःकरण आत्माकी उपाधि है औ जो अन्तःकरणकों न माने तो आत्मा इंद्रिय विषय इनका नित्य संबंध होनेतैं नित्यही ज्ञान होना चाहिये अथवा नित्यही न होना चाहिये अथवा आत्माकी वा इंद्रियकी शक्ति रुकनेसें कदाचित् ज्ञान होताहै कदाचित् नहीं होता ऐसा मानना चाहिये जिसके समवधानसें ज्ञान होताहै औ असमवधानसें नहीं होता सो मन हैं औ । मनसा ह्येव पश्यति मनसा शृणोति । यह श्रुति भी कहती है कि मन करकेही देखता है ॥ औ मन करकेही सुनता है इति ॥ ३२ ॥

कर्ताशास्त्रार्थवत्त्वात् ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके कर्त्ता १ शास्त्रार्थवत्त्वात् २ यह दो पद हैं ॥ बुद्धिके संबंधसें जीव कर्त्ता है औ जो जीवकों कर्त्ता न मानोंगे तो । यजेतजुहुया-

तद्यात् । इत्यादि विधि शास्त्र अनर्थक होवैगा काहेतें यजन करना होम करना दान करना यह सर्व चेतन कर्ताके विना नहीं हो सकते॥३३॥

विहारोपदेशात् ॥ ३४ ॥

इस सूत्रका विहारोपदेशात् १ यह एकही समस्त पद है ॥ स ईयते-ऽमृतोयत्रकामम् ॥ सो अमृत आत्मा स्वप्नस्थानके विषै अपनी इच्छापूर्वक गमन करताहै यह विहारका उपदेश करनेंवाली श्रुति भी जीवकों कर्त्ता कहती है ॥ ३४ ॥

उपादानात् ॥ ३५ ॥

इस सूत्रका उपादानात् १ यह एकही पद है ॥ वेदके विषै कहा है कि जीवात्मा प्राणइंद्रियादिकोंका उपादान कर्त्ता है ॥ ३५ ॥

व्यपदेशाच्चक्रियायांनचेन्निर्देशविपर्ययः ॥ ३६ ॥

इस सूत्रके व्यपदेशात् १ च २ क्रियायां ३ न ४ चेत् ५ निर्देश-विपर्ययः६यह छेह पद हैं ॥ विज्ञानंयज्ञंतनुते । इत्यादि शास्त्र लौकिक वैदिक क्रियाके विषै जीवात्माकों कर्त्ता कहता है इहां विज्ञानशब्दसें जीवात्माका निर्देश है औ जो जीवात्माका निर्देश न होवै तो विज्ञानेन ऐसें करणमें तृतीया होके प्रथमासें विपरीत निर्देश होना चाहिये । विज्ञान । जीवात्मा यज्ञका विस्तार करता है इति श्रुत्यर्थः ॥ ३६ ॥

जो जीव स्वतंत्र कर्त्ता है तो नियमसें अपनें हित कार्यकों करना चाहिये अहितकों न करना चाहिये इस शंकाका उत्तर कहते हैं ॥

उपलब्धिवदनियमः ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके उपलब्धिवत् १ अनियमः २ यह दो पद हैं॥ जैसें जीव अपनें ज्ञानके प्रति स्वतंत्र है परंतु अनियमसें इष्ट अनिष्टकों प्राप्तहोता है तैसें जीव स्वतंत्र होके भी देश कालादि निमित्तकों लेके अनियमसें हित अहित कार्यकों करता है ॥ ३७ ॥

शक्तिविपर्ययात् ॥ ३८ ॥

इस सूत्रका शक्तिविपर्ययात् १ यह एकही समस्त पद है ॥ विज्ञान शब्द वाच्य बुद्धि करण है औ बुद्धिसे भिन्न जीव कर्त्ता है औ जो बुद्धिकों कर्त्ता कहै तो बुद्धिकी करणशक्ति विपरीत होवै औ कर्त्ताके विषै अहं गच्छामि इत्यादि अहं शब्दका प्रयोग होता है सो जडबुद्धिके विषै नहीं होसकता इसीसैं बुद्धि करण है कर्त्ता नहीं ॥ ३८ ॥

समाध्यभावाच्च ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके समाध्यभावात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानम् । ओम् इस प्रकार आत्माका ध्यान करना यह वेदान्तके विषै समाधि कहा है सो चेतन कर्त्ताके विना नहीं होसकता इसीसैं जीव कर्त्ता है बुद्धि नहीं ॥ ३९ ॥

जो यह कहा कि जीव कर्त्ता है तहां संशय है कि जीव स्वभावसैं कर्त्ता है वा किसी निमित्तसैं कर्त्ता है अत आह ॥

यथाचतक्षोभयथा ॥ ४० ॥

इस सूत्रके यथा १ च २ तक्षा ३ उभयथा ४ यह च्यार पद हैं ॥ जैसैं लोकके विषै काष्ठ छेदनकरनेंवाला तक्षा है सो जितनें काल वास्यादि करणकों अपनें हाथमें धारण करे उतनें काल कर्त्ता है औ दुःखी है औ जब अपनें घरमें जायके वास्यादि करणकों त्यागता है तब निर्व्यापार होके सुखी रहता है तैसैं जीवात्माभी जागरित स्वप्नके विषै बुद्ध्यादि करणकों लेके कर्त्ता है औ दुःखीहै औ सुषुप्ति मोक्षके विषै बुद्ध्यादि करणकों त्यागके सुखी रहताहै न कर्त्ता है न दुःखी है ॥ ४० ॥

जो यह कहा कि अविद्या अवस्थाके विषै उपाधिकों लेके जीव कर्त्ता है तहां संशय है कि जीवकों अपनें कर्तापनेंमें ईश्वरकी अपेक्षा है वा नहीं अत आह ॥

परात्तुतच्छ्रुतेः ॥ ४१ ॥

इस सूत्रके परात् १ तु २ तच्छ्रुतेः ३ यह तीन पद हैं ॥ अविद्यारूप तिमिरकरके अंधा जीव है सो परमेश्वरकी आज्ञासें कर्तृत्व भोक्तृत्वरूप संसारकों प्राप्त होताहै औ परमेश्वरके अनुग्रहरूप हेतुसें सम्यक् ज्ञान होके मोक्षकों प्राप्त होताहै इस अर्थकों यह श्रुतिभी कहती है । एष ह्येव साधु कर्म कारयति । यह परमेश्वरही श्रेष्ठकर्मकों कराता है ॥ ४१ ॥

जो ईश्वरही शुभ अशुभ कर्मकों कराता है तो ईश्वरमें विषमतादि दोषका प्रसंग होवैगा इस शंकाका निराकरण करते हैं ॥

कृतप्रयत्नापेक्षस्तुविहितप्रति-
षिद्धावैयर्थ्यादिभ्यः ॥ ४२ ॥

इस सूत्रके कृतप्रयत्नापेक्षः १ तु २ विहितप्रतिषिद्धावैयर्थ्यादिभ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ ईश्वरमें विषमतादि दोष नहीं काहेतें जीवकृत धर्म अधर्मकी अपेक्षासें ईश्वर कर्म कराता है स्वतः नहीं इसीसें विहित निषिद्धकर्मकों कहनेवाले वेदादि शास्त्र व्यर्थ नहीं होते ॥ ४२ ॥

अंशोनानाव्यपदेशादन्यथाचापिदा
शकितवादित्वमधीयतएके ॥ ४३ ॥

इस सूत्रके अंशः १ नानाव्यपदेशात२ अन्यथा ३ च४ अपि ५ दाशकितवादित्वम् ६ अधीयते७ एके ८ यह आठ पद हैं ॥ जीव है सो ईश्वरका अंश है काहेतें शास्त्रके विषै नाना जीवका कथन है यद्यपि ईश्वर निरवयव है तिसका जीव मुख्य अंश नहीं होसकता तथापि जीव अंशकी न्याईं अंश है औ शास्त्रके विषै अनानात्वका कथन होनेतेंभी जीव ईश्वरका अंश है कोईं शाखावाले कहते हैं कि दाशकितवादि सर्व ब्रह्म हैं इस रीतिसें जीव ईश्वरका भेद अभेद होनेतें अग्नि विस्फुलिङ्गकी न्याईं अंशांशी भाव है ॥ ४३ ॥

मंत्रवर्णाच्च ॥ ४४ ॥

इस सूत्रके मंत्रवर्णात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ पादोऽस्य सर्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि । इस मंत्रवर्णसैंभी जीव ईश्वरका अंश प्रतीत होता है इहां पाद नाम अंशका है । अस्यार्थः । यह सर्व स्थावर जंगम इस परमेश्वरके अंश हैं औ इसके अमृतरूप तीन अंश अपनें स्वरूपके विषै हैं इति ॥ ४४ ॥

अपिचस्मर्यते ॥ ४५ ॥

इस सूत्रके अपि १ च २ स्मर्यते ३ यह तीन पद हैं ॥ ईश्वरगीताके विषै स्मरण होता है कि ईश्वरका अंश जीव है॥ ममैवांशोजीवलोके जीवभूतः सनातनः । अस्यार्थः । हे अर्जुन इस जीवलोकके विषै यह सनातन जीव है सो मेराही अंश है इति ॥ ४५ ॥

जैसें हस्त पादादि एक अंगमें दुःख होनेसें अंगी देवदत्त दुःखी होताहै तैसें जीव अंशके विषै दुःख होनेतें अंशी ईश्वर भी दुःखी होना चाहिये इस शंकाका उत्तर करते हैं ॥

प्रकाशादिवन्नैवंपरः ॥ ४६ ॥

इस सूत्रके प्रकाशादिवत् १ न २ एवं ३ परः ४ यह चार पद हैं ॥ जैसें अंगुल्यादि उपाधिकों ऋजु वक्र होनेतें आकाशमें स्थित सूर्यादिप्रकाश ऋजु वक्र भान होता है परंतु परमार्थसें न ऋजु होता है न वक्र होता है तैसें अविद्यादि उपाधिवाले जीवकों दुःखी होनेतें ईश्वर दुःखी नहीं होता ॥ ४६ ॥

स्मरन्तिच॥ ४७ ॥

इस सूत्रके स्मरंति १ च २ यह दो पद हैं ॥ जीवके दुःख करके परमात्मा दुःखी नहीं होता इस अर्थके विषै व्यासादिकोंकी स्मृतिभी है । तत्रयः परमात्माहिसनित्योनिर्गुणः स्मृतः । नलिप्यतेफलैश्चापिप

द्मपत्रमिवांभसा । अस्या अर्थः । जीवात्मा परमात्माके मध्यमें जो परमात्मा है सो नित्य है औ निर्गुण है औ जैसें कमलका पत्ता जलकरके लिपायमान नहीं होता तैसें सुख दुःखादि फलकरके परमात्मा लिपायमान नहीं होता इति ॥ ४७ ॥

अनुज्ञापरिहारौदेहसम्बन्धाज्ज्योतिरादिवत् ॥ ४८ ॥

इस सूत्रके अनुज्ञापरिहारौ १ देहसंबंधात् २ ज्योतिरादिवत् ३ यह तीन पद हैं॥जैसें लोकके विषै सर्व ज्योति एकही है परन्तु श्मशानकी अग्निका निषेध है औरका नहीं तैसें एकही आत्माकों देहके सम्बन्धसें अनुज्ञा परिहार हैं अनुज्ञा नाम विधिका है जैसें ऋतु कालमें अपनी भार्यासें संग करना यह शास्त्रकी अनुज्ञा है औ परिहारनाम निषेधका है जैसें गुरुकी भार्यासें संग नहीं करना यह परिहार है ॥ ४८ ॥

एक आत्माका सर्व शरीरके साथ संबंध होनेतें देवदत्तके कर्मका फल यज्ञदत्त क्यों नहीं भोगता इस शंकाका परिहार करते हैं सूत्रकार ॥

असंततेश्चाव्यतिकरः ॥ ४९ ॥

इस सूत्रके असंततेः १ च२ अव्यतिकरः ३ यह तीन पद हैं ॥ बुद्धि अहंकारादि उपाधिवाला जीव कर्त्ता भोक्ता है तिसका सर्व शरीरके साथ संबंध नहीं हो सकता इस हेतुसें एक पुरुषके कर्मका फल दूसरा पुरुष नहीं भोग सकता ॥ ४९ ॥

आभासएवच ॥ ५० ॥

इस सूत्रके आभासः१ एव२ च ३यह तीन पद हैं ॥जैसें जलके विषै सूर्यका प्रतिबिम्ब सूर्यका आभास है तैसें अन्तःकरणके विषै परमात्माका प्रतिबिम्ब जीव आभास है औ जैसें एक जल प्रतिबिम्बके कंपनेंसें दूसरा नहीं कंपता तैसें एक जीवके कर्म फलकों दूसरा जीव नहीं भोगता औ जिसके मतमें नाना आत्मा हैं तिसके मतमें सर्व आत्माका सर्व

शरीरके साथ संबंध होनेतें एक पुरुषके कर्मका फल दूसरे पुरुषकों भोगना चाहिये ॥ ५० ॥

अदृष्टानियमात् ॥ ५१ ॥

इस सूत्रके अदृष्टानियमात् १ यह एकही पद है॥ जिस अदृष्ट करके जिस आत्माका औ मनका संयोग भयाहै सो संयोग उसही आत्माके सुखादिकोंका हेतु है दूसरेका नहीं यह वैशेषिकका कहना ठीक नहीं काहेतें अदृष्टकों सर्व आत्माके साथ साधारण होनेतें अदृष्ट करके नियम नहीं हो सकता ॥ ५१ ॥

अभिसंध्यादिष्वपिचैवम् ॥ ५२ ॥

इस सूत्रके अभिसंध्यादिषु १ अपि २ च ३ एवम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ मैं इस कर्मकों करके इस फलकों प्राप्त होओंगा इत्यादि संकल्प है सो भिन्न भिन्न आत्माका औ अदृष्टका नियम करता है यह कहना भी समीचीन नहीं काहेतें सर्व साधारण आत्मा मन संयोग करके संकल्प होताहै सो नियमका हेतु नहीं हो सकता ॥ ५२ ॥

प्रदेशादितिचेन्नान्तर्भावात् ॥ ५३ ॥

इस सूत्रके प्रदेशात् १ इति २ चेत् ३ न ४ अंतर्भावात् ५ यह पांच पद हैं ॥ यद्यपि आत्मा विभु है तथापि शरीरके विषै स्थित मनका संयोग शरीरविशिष्ट आत्माके विषै होताहै जिस शरीरविशिष्ट आत्मामें मनका संयोग है तिस शरीरविशिष्ट आत्माही अपनें सुख दुःखकों भोगता है दूसरा नहीं भोगता। इति चेन्न। ऐसें नकहो काहेतें तुम्हारे मतमें सर्व आत्माका सर्व मनके साथ संयोग होके एकका सुख दुःख दूसरेकों भोगनाही होवेगा इस दोषका परिहार हमारे एकात्मपक्षमें हो सकता है ॥ ५३ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायांब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां द्वितीयाध्यायस्य तृतीयः पादः ॥ ३ ॥

द्वितीयाध्याये चतुर्थः पादः।

तृतीयपादके विषै आकाशादि पंचभूतकी उत्पत्तिका विचार किया औ तिसके अनंतर कर्ता भोक्ता जीवके स्वरूपका विचार किया अब भौतिक प्राणकी उत्पत्तिका विचार करनेंके वास्ते इस चतुर्थ पादका प्रारंभ है वेदके विषै उत्पत्तिप्रकरणमें कहां प्राणकी उत्पत्ति कही है औ कहां नहीं कही है तहां संशय है कि प्राण उत्पन्न होते हैं वा नहीं इस संशयको दूर करते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

तथाप्राणाः ॥ १ ॥

इस सूत्रके तथा १ प्राणाः २ यह दो पद हैं ॥ जैसें आकाशादि पंचभूतकी उत्पत्ति परब्रह्मसें होतीहै तैसें प्राणकी उत्पत्ति भी परब्रह्मसें होतीहै औ प्राणकी उत्पत्तिकों श्रुति भी कहती है। एतस्माज्जायतेप्राणो मनःसर्वेंद्रियाणिच। अस्याअर्थः। इस परमात्मासें प्राण मन औ सर्व इंद्रिय उत्पन्न होते हैं इति ॥ १ ॥

गौण्यसंभवात् ॥ २ ॥

इस सूत्रके गौणी १ असंभवात् २ यह दो पद हैं ॥ जो श्रुति प्राणकी उत्पत्तिकों कहती है सो गौण है यह पूर्वपक्षीका कहना ठीक नहीं काहेतें एक कारण परमेश्वरके जानेंतें सर्व कार्य जानाजाता है यह वेदकी प्रतिज्ञा है जो प्राणादि सर्व जगत् ब्रह्मका कार्य न होवै तो प्रतिज्ञाकी हानि होवै इसीसें प्राणकी उत्पत्तिकों कहनेवाली श्रुति गौण नहीं किंतु मुख्य है ॥ २ ॥

तत्प्राक्छ्रुतेश्च ॥ ३ ॥

इस सूत्रके तत्प्राक्छ्रुतेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ जायते यह एकही जन्मवाची शब्द है सो पहिलें प्राणकी उत्पत्तिकों कहके पश्चात् आकाशादिकोकी उत्पत्तिकों कहता है एक प्रकरणके विषै एक बेर कथन

किया हुआ बहुतकेसाथ संबंधवाला एकही शब्द है सो कहीं गौण कहीं मुख्य नहीं कहाता किंतु सर्वत्र मुख्यही कहाता है ॥ ३ ॥

तत्पूर्वकत्वाद्वाचः ॥ ४ ॥

इस सूत्रके तत्पूर्वकत्वात् १ वाचः २ यह दो पद हैं ॥ यद्यपि तत्तेजोऽसृजत इस प्रकरणके विषै प्राणकी उत्पत्ति नहीं कही है तेज जल पृथिवी इन तीनकी उत्पत्तिका श्रवण है तथापि तेज जल पृथिवीकों ब्रह्मका कार्य होनेतें वाक् प्राण मन यह भी ब्रह्मके कार्य हैं इस अर्थकों श्रुति भी कहती है। अन्नमयंहि सौम्यमनःआपोमयःप्राणःतेजोमयी वाक् इति। अस्याअर्थः। हे सौम्य श्वेतकेतो यह मन पृथिवीमय है औ प्राण जलमय है औ वाक् तेजोमयी है इति ॥ ४ ॥

सप्तगतेर्विशेषितत्वाच्च ॥ ५ ॥

इस सूत्रके सप्तगतेः १ विशेषितत्वात् २ च ३ यह तीन पद हैं ॥ अब प्राणकी संख्या कहते हैं तिनमें मुख्य प्राणकों अगाडी कहेंगे वेदके विषै कहीं पंचज्ञानइंद्रिय वाक् मन यह सप्तप्राण कहे हैं औ कहीं यही हस्त करके सहित अष्टप्राण कहे हैं औ कहीं दो श्रोत्र दो चक्षु दो घ्राण वाक् पायु उपस्थ यह नवप्राण कहे हैं औ कहीं पंचज्ञानइंद्रिय पंचकर्मइंद्रिय यह दश प्राण कहे हैं औ कहीं यही मनसहित एकादश प्राण कहे हैं औ कहीं यही बुद्धिसहित द्वादश प्राण कहे हैं औ कहीं यही अहंकारसहित त्रयोदश प्राण कहे हैं तहां संशय है कि इनमें प्राणकी कौनसी संख्या माननी चाहिये तहां पूर्वपक्षी कहताहै कि। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। इस श्रुतिसें शिरके विषै दो श्रोत्र दो चक्षु दो घ्राण एक वाक् इन सप्तप्राणका ज्ञान होता है यह शिर करके विशेषित सप्त प्राणही माननें चाहिये ॥ ५ ॥

हस्तादयस्तुस्थितेऽतोनैवम् ॥ ६ ॥

इस सूत्रके हस्तादयः १ तु २ स्थिते ३ अतः ४ न ५ एवं ६ यह

छेह पद हैं ॥ सप्त प्राणसैं अधिक हस्तादिक प्राण कहे हैं सप्त प्राणसैं अधिक हस्तादि प्राणकों स्थित होनेतैं सप्तही प्राण हैं ऐसें नहीं मानना चाहिये औ सिद्धान्त कोटि यह है कि पंच ज्ञानइंद्रिय पंच कर्मइंद्रिय एक मन यह एकादशही प्राण हैं इनसैं न न्यून हैं न अधिक हैं ॥ ६ ॥

अणवश्च ॥ ७ ॥

इस सूत्रके अणवः १ च २ यह दो पद हैं ॥ यह प्राण अणु हैं अर्थात् सूक्ष्म औ परिच्छिन्न परिमाणवाले हैं परमाणुकी तुल्य नहीं औ जो स्थूल होवैं तो जैसें बिलसैं निकलता सर्प दिखता है तैसें मरण कालमें देहसैं निकलते प्राण भी दिखनें चाहिये ॥ ७ ॥

श्रेष्ठश्च ॥ ८ ॥

इस सूत्रके श्रेष्ठः १ च २ यह दो पद हैं ॥ जैसें और प्राण ब्रह्मसैं उत्पन्न भये हैं तैसें मुख्य प्राण भी ब्रह्मसैं उत्पन्न भया है। सप्राणमसृजत। यह श्रुति वाक्य कहता है कि सो परमात्मा मुख्यप्राणकों रचता भया इति ॥ ८ ॥

नवायुक्रियेपृथगुपदेशात् ॥ ९ ॥

इस सूत्रके न १ वायुक्रिये २ पृथगुपदेशात् ३ यह तीन पद हैं ॥ अब मुख्यप्राणके स्वरूपका विचार करते हैं मुख्यप्राण है सो न वायु है औ न इंद्रियोंका व्यापार है काहेतें। प्राणएवब्रह्मणश्चतुर्थः पादः सवायुना ज्योतिषा भातिचतपतिच। यह श्रुति कहती है कि मनोरूप ब्रह्मका वाक् प्राण चक्षु श्रोत्र यह च्यार पाद हैं तिनके विषै प्राण है सो अपनें अधिदेव वायु करके प्रगट होता है औ ज्योतिकरके अपना कार्य करनेकों समर्थ होता है ऐसें वायुसैं औ इंद्रियव्यापारसैं मुख्यप्राणका पृथक् उपदेश है ॥ ९ ॥

जैसें इस शरीरके विषै जीव स्वतंत्र है तैसें प्राण भी सर्ववागादिकोंसें श्रेष्ठ है सो स्वतंत्र होना चाहिये इस शंकाका उत्तर करते हैं ॥

चक्षुरादिवत्तुतत्सहशिष्ट्यादिभ्यः ॥ १० ॥

इस सूत्रके चक्षुरादिवत् १ तु २ तत्सहशिष्ट्यादिभ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ तुशब्द प्राणकी स्वतंत्रताकी निवृत्तिके अर्थ है जैसें चक्षु श्रोत्रादिक जीवके कर्तृत्व भोक्तृत्वका साधन हैं तैसें मुख्यप्राण भी राजमंत्रीकी न्याईं जीवके सर्व अर्थकों सिद्धकरनेंवाला है स्वतंत्र नहीं काहेतें प्राण है सो चक्षुरादिकोंके साथही शेष रहताहै अर्थात् चक्षुरादिकोंके समानधर्मवाला है ॥ १० ॥

अकरणत्वाच्चनदोषस्तथाहिदर्शयति ॥ ११ ॥

इस सूत्रके अकरणत्वात् १ च २ न ३ दोषः ४ तथा ५ हि ६ दर्शयति ७ यह सात पद हैं ॥ जैसें नेत्र श्रोत्रादिकोंका रूप शब्दादिक विषय हैं तैसें प्राणका भी कोई विषय होना चाहिये यह दोष प्राणके विषैं नहीं आ सकता काहेतें जैसें नेत्रादि करण हैं तैसें प्राण करण नहीं है। प्रश्न। जो प्राण करण नहीं तो प्राणसें कोई कार्य न होना चाहिये। उत्तर। यद्यपि प्राण करण नहीं तथापि शरीररक्षाही प्राणका कार्य श्रुति कहती है। प्राणेन रक्षन्नवरं कुलायम्। अस्या अर्थः। प्राण करके इस नीच देहकी रक्षा करताहुआ जीवात्मा सोता है इति ॥ ११ ॥

पञ्चवृत्तिर्मनोवद्व्यपदिश्यते ॥ १२ ॥

इस सूत्रके पंचवृत्तिः १ मनोवत् २ व्यपदिश्यते ३ यह तीन पद हैं॥ जैसें श्रोत्रादि निमित्तद्वारा शब्दादिकोंकों विषय करनेंवाली मनकी पांच वृत्ति हैं तैसें मुख्यप्राणकी भी कार्यद्वारा प्राण अपान व्यान उदान समान यह पांच वृत्ति श्रुतिके विषै कथन करी हैं ॥ १२ ॥

अणुश्च ॥ १३ ॥

इस सूत्रके अणुः १ च २ यह दो पद हैं॥ मुख्यप्राणकी उत्पत्तिकों

औ स्वरूपकों कहके अब तिसका परिमाण कहते हैं मुख्यप्राण अणु-परिमाणवाला है अणुशब्दसें इहां सूक्ष्म औ परिच्छिन्न परिमाणका ग्रहण है काहेतें मरणकालमें समीप बैठे पुरुषकों दिखता नहीं इस हेतुसें सूक्ष्म है औ अपनी प्राणादि पंच वृत्तिसें सर्व शरीरमें वर्त्तता है औ लोकांतरमें जाता आता है इस हेतुसें परिच्छिन्नपरिमाणवाला है १३

जो पूर्व जितनें प्राण कहे सो अपनें स्वभावसें अपनें अपनें कार्यमें प्रवृत्त होते हैं वा अपनें अधिष्ठातृ देवताके अधीन होके प्रवृत्त होते हैं तहां पूर्वपक्षी कहता है कि अपनें स्वभावसें ही प्रवृत्त होते हैं औ जो देवताके अधीन होके प्रवृत्त होवेंगे तो देवताही भोक्ता रहेगा जीव भोक्ता न रहेगा इस शंकाका उत्तर कहते हैं ॥

ज्योतिराद्यधिष्ठानंतुतदामननात् ॥ १४ ॥

इस सूत्रके ज्योतिराद्यधिष्ठानं १ तु २ तदामननात् ३ यह तीन पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है अग्न्यादि देवताके अधीन होके वागादि सर्व प्राण प्रवृत्त होते हैं इस अर्थमें श्रुति प्रमाण है। अग्निर्वाग्भूत्वामुखंप्राविशत्। अस्याअर्थः। अग्नि है सो वाक् इंद्रिय होके मुखमें प्रवेश करताभया इति ॥ १४ ॥

प्राणवत्ताशब्दात् ॥ १५ ॥

इस सूत्रके प्राणवत्ता १ शब्दात् २ यह दो पद हैं ॥ जो यह कहाकि देवताके अधीन होके प्राण प्रवृत्त होवेगे तो देवताही भोक्ता होवैगा सो कहना ठीक नहीं काहेतें कार्यकरणसमुदायका स्वामी जो शारीर जीवात्मा तिसके साथ ही सर्व प्राणका संबंध श्रुति कहती है और एक शारीरात्माही भोक्ता है बहुत देवता भोक्ता नहीं होसकते ॥ १५ ॥

तस्यचनित्यत्वात् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके तस्य १ च २ नित्यत्वात् ३ यह तीन पद हैं ॥ शारीरआत्मा इस शरीरके विषे भोक्तृरूप करके नित्य है तिसकेही पुण्यपापका लेप

होताहै औ सुखदुःखका भोग होताहै औ देवता परमऐश्वर्यवाले हैं इस हीन शरीरके विषै भोग नहीं भोगते औ करणपक्षके अग्न्यादि देवता हैं भोक्तृपक्षके नहीं ॥ १६ ॥

एक मुख्य प्राण है औ दूसरे वागादि एकादश प्राण हैं तहां संशय है कि वागादि मुख्यप्राणके भेद हैं वा नहीं इस संशयको दूर करते हैं ।

तइन्द्रियाणितद्व्यपदेशादन्यत्रश्रेष्ठात् ॥ १७ ॥

इस सूत्रके ते १ इन्द्रियाणि २ तद्व्यपदेशात् ३ अन्यत्र ४ श्रेष्ठात् ५ यह पांच पद हैं ॥ वागादिक मुख्यप्राणके भेद नहीं हैं किंतु मुख्यप्राणसें जुदे हैं काहेतें श्रुतिके विषै मुख्य प्राणको वरजके वागादि एकादश इन्द्रिय कहे हैं औ मुख्यप्राण इंद्रिय है नहीं ॥ १७ ॥

भेदश्रुतेः ॥ १८ ॥

इस सूत्रका भेदश्रुतेः १ यह एकही पद है ॥ उद्गीथ कर्मके विषै पापवृत्ति असुरोंके नाशके वास्ते वाक् इंद्रियको देवता कहते भये कि तूं हमारे मध्यमें उद्गान कर जिस उद्गानसें पापवृत्ति असुर नष्ट होवें जब वाक् उद्गान करनें लगा तब असुर हैं सो अनृत दोष करके वाक्का विध्वंस करतेभये ऐसें सर्व इंद्रियोंको पाप करके ग्रस्त करते भये पीछे निर्विषय औ संग दोष रहित मुख्य प्राण उद्गान करनें लगा तब असुर नष्ट होतेभये इत्यादि स्थलके विषै सारे मुख्यप्राणसैं वागादिकोंके भेदका श्रवण होता है ॥ १८ ॥

वैलक्षण्याच्च ॥ १९ ॥

इस सूत्रके वैलक्षण्यात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ वागादिकोंसें मुख्य प्राण विलक्षण है काहेतें जब वागादिक सर्व इंद्रिय सोते हैं तब एक मुख्य प्राणही जागता है औ प्राणकी स्थितिसें देहकी स्थिति रहती है औ प्राणके निकलनेंसें देहका पतन होता है ॥ १९ ॥

संज्ञामूर्त्तिक्लृप्तिस्तुत्रिवृत्कुर्वतउपदेशात् ॥ २० ॥

इस सूत्रके संज्ञामूर्तिक्लृप्तिः १ तु २ त्रिवृत्कुर्वतः ३ उपदेशात् ४

यह चार पद हैं॥ इस सूत्रके विषै संज्ञाशब्दसें नामका ग्रहण है मूर्त्तिशब्दसें रूपका ग्रहण है क्लृप्तिनाम करनेंका है वेदमें ऐसें कहा है कि जो परमात्मा तेज जल पृथिवी इन सूक्ष्म भूतोंका त्रिवृत् करके इनकों स्थूल करताभया सोही परमात्मा इस जगत्का नामरूप करताभया इति। यह त्रिवृत्करण है सो पंचीकरणका उपलक्षण है॥ २०॥

मांसादिभौमंयथाशब्दमितरयोश्च ॥ २१ ॥

इस सूत्रके मांसादिभौमं १ यथाशब्दम् २ इतरयोः ३ च ४ यह चार पद हैं॥ बाह्यत्रिवृत् कहके अब इस सूत्रसें अध्यात्मत्रिवृत् कहते हैं पुरुष करके भक्षित अन्नरूप पृथिवीका स्थूलभाग है सो पुरीष होके बाहिर निकलता है औ मध्यमभाग मांस होजाता है औ अणुभाग मन है औ जलका स्थूलभाग मूत्र होके बाहिर निकलता है औ मध्यम भाग रुधिर होजाता है औ अणुभाग प्राण है औ तेजका स्थूलभाग अस्थि है औ मध्यमभाग मज्जा है औ अणुभाग वाक् है इति॥ २१॥

जो सर्वभूतोंका समानही त्रिवृत् करण है तो यह तेज है यह जल है यह पृथिवी है ऐसा विशेष कथन क्यों है इस शंकाकों दूरकरते हैं॥

वैशेष्यात्तुतद्वादस्तद्वादः ॥ २२ ॥

इस सूत्रके वैशेष्यात् १ तु २ तद्वादः ३ तद्वादः ४ यह चार पद हैं॥ तुशब्द उक्त शंकाकी निवृत्तिके अर्थ है यद्यपि सर्वभूतोंका त्रिवृत्करण समान है तथापि जहां जिस भूतका विशेषभाग है तहां तिस भागकों लेके विशेष कथन है इहां दो वेर तद्वाद पदका अभ्यास है सो इस विरोधपरिहाराध्यायकी समाप्तिकों द्योतन करता है॥ २२॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्यमुनानाथपूज्यपादशिष्यश्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां द्वितीयाध्यायस्य चतुर्थःपादः ॥ ४ ॥

इति द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः २.

तृतीयोऽध्यायः ३.

प्रथमः पादः।

पूर्वोक्तवागादिउपकरणसहित जीवके संसारगति प्रकारादि दिखानेंके वास्ते इस तृतीय अध्यायका प्रारंभ है तहां प्रथमपादमें वैराग्यके वास्ते पंचाग्निविद्याकों दिखाते हैं मुख्यप्राण इन्द्रिय मन उपासना धर्म अधर्म पूर्वसंस्कार इन सर्वकों लेके जीव है सो पूर्व देहकों त्यागके दूसरे देहकों प्राप्त होताहै तहां संशय है कि उत्तर देहके कारण जो भूत सूक्ष्म तिनकों त्यागके जाताहै वा तिनकों लेके जाताहै अत आह॥

तदनन्तरप्रतिपत्तौरंहतिसंपरिष्वक्तः प्रश्ननिरूपणाभ्याम्॥ १ ॥

इस सूत्रके तदनन्तरप्रतिपत्तौ १ रंहति २ संपरिष्वक्तः ३ प्रश्ननिरूपणाभ्याम् ४ यह चार पद हैं॥ प्रश्नसें औ निरूपणसें यह निश्चय है कि जब जीव पूर्वदेहकों त्यागके उत्तरदेहकों प्राप्त होताहै तब उत्तर देहके बीज जो भूत सूक्ष्म तिनकों लेके जाता है वेदके विषे उपासनाके वास्ते द्यु पर्जन्य पृथिवी पुरुष योषित यह पांच अग्नि कहे हैं जब इन पांच अग्निके विषे आप जलकों होमें तब पंचमी आहुतिमें जैसें पुरुष शब्द वाच्य होतेहैं अर्थात् पुरुषरूप करके परिणामकों प्राप्त होतेहैं तैसें हे श्वेतकेतो तूं जानता है यह श्वेतकेतुके प्रति प्रवाहण राजाका प्रश्न है जब इस प्रश्नका उत्तर श्वेतकेतु नहीं जानताभया तब तिसके पिताके प्रति राजा बोला कि हे गौतम यह द्युलोक अग्नि है इसमें श्रद्धारूप जलकी आहुति है औ यह पर्जन्य अग्नि है इसमें सोमरूप जलकी आहुति है इस लोकमें अग्निहोत्रके विषे श्रद्धा करके दध्यादिरूप जल होमें हुये यजमानके संलग्नहोके स्वर्गलोककों प्राप्त होके सोमरूप दिव्य देह करके

स्थित होते हैं पीछे कर्मके अंतमें पर्जन्यमें होमें जाते हैं पीछे वृष्टिरूप जल पृथिवीमें होमें जाते हैं पीछे अन्नरूप जल पुरुषमें होमें जाते हैं पीछे रेतरूप जल योषित्में होमें हुये पुरुषशब्दवाच्य हो जाते हैं यह निरूपण है ॥ १ ॥

उक्तप्रश्ननिरूपणसैं यह सिद्ध भया कि केवल जलकरके सहित जीवात्मा देहान्तरमें जाता है सर्वभूत सूक्ष्म करके सहित नहीं जाता इस शंकाकों दूर करते हैं ॥

आत्मकत्वात्तुभूयस्त्वात् ॥ २ ॥

इस सूत्रके आत्मकत्वात् १ तु २ भूयस्त्वात् ३ यह तीन पद हैं ॥ तुशब्द शंकानिवृत्तिके अर्थ है त्रिवृत्करण श्रुतिसैं तीन प्रकारके जल जानेंजाते हैं जो तीन प्रकारके जल देहके आरंभक हैं तो तेज पृथिवी यह दो भूत सूक्ष्म ओर भी माननें चाहिये काहेतें यह देह तीन भूतका है। प्रश्न। जो देह तीन भूतका है तो आप पंचमी आहुतिमें पुरुषशब्दवाच्य होतेहैं यह कथन क्यों है। उत्तर। इस देहमें जल बहुत है तिसकी अपेक्षासैं यह कथन है ॥ २ ॥

प्राणगतेश्च ॥ ३ ॥

इस सूत्रके प्राणगतेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ वेदमें श्रवण होता है जब जीवात्मा पूर्व देहकों त्यागके उत्तर देहके प्रति गमन करता है तब जीवके पीछे मुख्यप्राण भी गमन करता है औ मुख्यप्राणके पीछे अन्य प्राण गमन करते हैं औ आश्रयके विना प्राणका गमन होता नहीं सो प्राणगमनके आश्रय जल तेज पृथिवी यह तीन भूतें हैं ॥ ३ ॥

अग्न्यादिगतिश्रुतेरितिचेन्नभाक्तत्वात् ॥ ४ ॥

इस सूत्रके अग्न्यादिगतिश्रुतेः १ इति २ चेत् ३ न ४ भाक्तत्वात् ५ यह पांच पद हैं ॥ अन्यदेहके प्रति जीवके साथ प्राण नहीं जाते हैं

काहेतैं मरणकालमें वागादि सर्व प्राण अपनें अग्न्यादि देवताकों प्राप्त होते हैं यह अग्न्यादिकोंमें गतिकी श्रुति है। इति चेन्न। ऐसें न कहो काहेतैं अग्न्यादिकोंमें गतिकी श्रुति गौण है मुख्य नहीं ॥ ४ ॥

प्रथमेऽश्रवणादितिचेन्नताएवह्युपपत्तेः ॥ ५ ॥

इस सूत्रके प्रथमे १ अश्रवणात् २ इति ३ चेत् ४ न ५ ताः ६ एव ७ हि ८ उपपत्तेः ९ यह नौ पद हैं ॥ पंचमी आहुतिके विषै जल है सो पुरुषशब्द वाच्य नहीं होसकता काहेतैं द्युलोकरूप प्रथम अग्निके विषै श्रद्धाहोमका श्रवण है जलहोमका श्रवण नहीं। इतिचेन्न। ऐसें न कहो काहेतैं प्रथम अग्निमें श्रद्धाशब्दसैं जलहोमका विधान हैं अन्यथा प्रथम अग्निमें श्रद्धाहोमका विधान होनेतैं औ उत्तर च्यार अग्निमें जल होमका विधान होनें तैं वाक्यभेद होके एकवाक्यता न रहेगी ॥ ५ ॥

अश्रुतत्वादितिचेन्नेष्टादिकारिणांप्रतीतेः ॥ ६ ॥

इस सूत्रके अश्रुतत्वात् १ इति २ चेत् ३ न ४ इष्टादिकारिणां ५ प्रतीतेः ६ यह छेह पद हैं ॥ यद्यपि पूर्वोक्त प्रश्न निरूपणसैं यह निश्चय भया कि श्रद्धादि क्रम करके पंचमी आहुतिमें जल पुरुषाकारकों प्राप्त होता है तथापि श्रद्धादिसहित जीव नहीं जाता काहेतैं श्रद्धादिकों करके सहित जीव जाता है ऐसा कही वेदमें श्रवण नहीं। इति चेन्न। ऐसें नकहो काहेतैं जैसें यज्ञ वापी कूपादि करनेंवाले पुरुष धूमादि पितृयाण मार्ग करके चन्द्रलोककों जाते हैं तैसें श्रद्धादि होम करनेंवाले भी जाते हैं यह वार्त्ता शास्त्रप्रसिद्ध है ॥ ६ ॥

इष्टादि कर्मकों करनेंवाले चन्द्रलोकमें जाते हैं यह प्रतिज्ञा ठीक नहीं काहेतैं श्रुति कहती है कि यह चन्द्रमा देवोंका अन्न है तिसकों देवता भक्षण करते हैं जो इष्टादि कर्म करनेंवाले चन्द्रलो-

कर्में जावैंगे तो अन्न होजावैंगे जब तिनकों देवता भक्षण करेंगे तब भोग्यही होजावैंगे तो भोक्ता कहांसैं होवैंगे इस शंकाका उत्तर कहतेहैं॥

भाक्तंवाऽनात्मवित्त्वात्तथाहिदर्शयति ॥ ७ ॥

इस सूत्रके भाक्तं १ वा २ अनात्मवित्त्वात् ३ तथा ४ हि ५ दर्शयति ६ यह छेह पद हैं॥ चन्द्रलोकमें जानेवाले गौण अन्न होते हैं मुख्य अन्न नहीं होते औ जो मुख्य अन्न होवैं तो। स्वर्गकामोयजेत। इत्यादि श्रुतिका उपरोध होवै औ देवता अमृतकों देखके ही तृप्तरहते हैं न खाते हैं न पीते हैं औ वेदमें यह भी कहा है कि इष्टादि कर्म करनेंवाले अनात्म ज्ञानी पशुकी न्याईं देवोंके उपकारक हैं भक्ष्य नहीं ॥ ७ ॥

कृतात्ययेऽनुशयवान्दृष्टस्मृतिभ्यांयथेत-
मनेवञ्च ॥ ८ ॥

इस सूत्रके कृतात्यये १ अनुशयवान् २ दृष्टस्मृतिभ्यां ३ यथा ४ इतम् ५ अनेवं ६ च ७ यह सात पद हैं ॥ इष्टादि कर्म करनेवाले धूमादि मार्गकरके चन्द्रलोकमें जायके विभूतिकों भोगके पीछे कर्मके अंतमें इस लोकमें आते हैं तहां संशय है कि सर्व कर्मफलकों भोगके आते हैं वा कुछ कर्म शेष लेके आते हैं तहां कहते हैं कि जैसें तैल निकाले पीछे भी तैलका भांडा कुछ चिकना रहताहै तैसें कर्मके अंतमें जब पीछे आते हैं तब कुछ कर्म शेष रहता है काहेतें इस लोकमें ब्राह्मणसें आदि-लेके चांडाल पर्यंत योनिके विषे उत्पन्न होते औ उच्च नीच भोगकों भोगतेहुये पुरुष दिखते हैं औ स्मृति भी कहती है कि पुरुष मरके परलोकमें कर्म फलकों भोगके कुछ कर्मशेषकों लेके इस लोकमें आते हैं औ सोपानारोहणअवरोहणकी न्याईं जिस क्रम करके चन्द्रलोकमें जाते हैं तिससैं विपरीत क्रम करके पीछे उतरते हैं ॥ ८ ॥

चरणादितिचेन्नोपलक्षणार्थेतिकार्ष्णाजिनिः ॥ ९ ॥

इस सूत्रके चरणात् १ इति २ चेत् ३ न ४ उपलक्षणार्था ५ इति ६

कार्ष्णाजिनिः ७ यह सात पद हैं ॥ श्रुति कहती है कि रमणीय चरण अर्थात् शुद्ध आचारवाले ब्राह्मणादि योनिकों प्राप्त होते हैं औ कपूयचरण अर्थात् अशुद्ध आचारवाले श्वादियोनिकों प्राप्त होते हैं चरण चारित्र आचारशील इन शब्दोंका एकही अर्थ है जो अच्छे चरणसैं ब्राह्मणादि योनिकों प्राप्त होते हैं औ बुरे चरणसैं श्वादि योनिकों प्राप्त होते हैं तो कर्म शेष मानना निरर्थक है। इतिचेन्न। ऐसैं न कहो काहेतै श्रुतिमें चरण शब्द कर्मशेषकाही उपलक्षण है ऐसैं कार्ष्णाजिनि आचार्य मानता है ॥ ९ ॥

आनर्थक्यमितिचेन्नतदपेक्षत्वात् ॥ १० ॥

इस सूत्रके आनर्थक्यम् १ इति २ चेत् ३ न ४ तदपेक्षत्वात् ५ यह पांच पद हैं ॥ श्रुतिविहित शीलकों त्यागके चरण शब्दकी कर्मशेषमें लक्षणा माननी ठीक नहीं औ जो लक्षणा मानोगे तो श्रुतिप्रतिपादित शील अनर्थक होवैगा। इतिचेन्न। ऐसैं न कहो काहेतैं चरणकी अपेक्षासैंही इष्टादि कर्म होता है औ आचारहीनकों कर्मका अधिकार नहीं है इस अर्थकों स्मृति भी कहती है। आचारहीनं न पुनंति वेदाः। आचारहीन पुरुषकों वेद पवित्र नहीं करते इत्यर्थः ॥ १० ॥

सुकृतदुष्कृतेएवेतितुबादरिः ॥ ११ ॥

इस सूत्रके सुकृतदुष्कृते १ एव २ इति ३ तु ४ बादरिः ५ यह पांच पद हैं ॥ चरणशब्दसैं सुकृत दुष्कृतका ग्रहण है ऐसैं बादरि आचार्य मानता है जो वेदविहित इष्टादि कर्मकों करता है तिसकों लोक कहते हैं कि यह महात्मा पुण्यकर्मकों करता है औ तिससैं विपरीत कर्म करनेवालेकों कहते हैं कि यह निषिद्धकर्मकों करता है ॥ ११ ॥

अनिष्टादिकारिणामपिचश्रुतम् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके अनिष्टादिकारिणाम् १ अपि २ च ३ श्रुतम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो यह कहा कि इष्टादि कर्म करनेवाले चंद्रलोकमें जाते

हैं तहां पूर्वपक्षी कहता है कि अनिष्टादि कर्म करनेंवाले चंद्रलोकमें जाते हैं ऐसा भी श्रवण होता है कौषीतकी शाखामें कहा है कि। ये वै के-चास्माल्लोकात्प्रयन्ति चन्द्रमसमेव ते सर्वे गच्छन्ति। जो कोई इस लोकसैं जाते हैं सो सर्वही चन्द्रमाकों प्राप्त होते हैं इत्यर्थः ॥ १२ ॥

संयमनेत्वनुभूयेतरेषामारोहावरोहौतद्ग-तिदर्शनात् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके संयमने १ तु २ अनुभूय ३ इतरेषाम् ४ आरोहावरोहौ ५ तद्गतिदर्शनात् ६ यह छेह पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है अनिष्ट कर्म करनेवाले चन्द्रलोकमें भोग नहीं भोग सकते इसीसैं चन्द्रलोकमें नहीं जाते किंतु यमलोकमें जायके अपनें अनिष्ट कर्मका फलभोगके पीछे इसी लोकमें आते हैं अपनें अनिष्ट कर्मका फल भोगनेंके वास्तेही तिनका यमलोकमें जाना आनाहै ऐसैंही नचिकेताके प्रति यमराज कहते भये कि हे नचिकेतः जो मूर्ख परलोककी उपायको नहीं जानता है औ वित्तके मोह करके मूढ हुआ प्रमादकों करता है और यही स्त्री पुत्रादिलोक है परलोक नहीं है ऐसें मानता है सो वारंवार मेरे वश होता है इति ॥ १३ ॥

स्मरन्तिच ॥ १४ ॥

इस सूत्रके स्मरन्ति १ च २ यह दो पद हैं ॥ मनुव्यासादि शिष्ट पुरुष हैं सो यमपुरके विषे निन्दित कर्म करनेंवाले पुरुषोंके कर्म-फलका स्मरण करते हैं ॥ १४ ॥

अपिचसप्त ॥ १५ ॥

इस सूत्रके अपि १ च २ सप्त ३ यह तीन पद हैं ॥ अपि निश्चय करके पौराणिक कहते हैं कि पापकारी पुरुषोंके वास्ते रौरवादि सात नरक हैं तिनके विषे पापकारी पुरुष जातेहैं चन्द्रलोकको नहीं जाते ॥ १५ ॥

जो यह कहा कि यमराजकी यातनाकों पापकारी पुरुष भोगते हैं सो कहना विरुद्ध है काहेतें रौरवादि नरकके विषै चित्रगुप्तादि नाना अधिष्ठाताका स्मरण होता है इस शंकाकों दूर करते हैं ॥

तत्रापिचतद्व्यापारादविरोधः ॥ १६ ॥

इस सूत्रके तत्र १ अपि २ च ३ तद्व्यापारात् ४ अविरोधः ५ यह पांच पद हैं ॥ तिन रौरवादि सात नरकके विषै यमराज अधिष्ठाताका व्यापार होनेंतें कोई विरोध नहीं यमराज करके प्रेरित चित्रगुप्तादि अधिष्ठाताका स्मरण होता है ॥ १६ ॥

विद्याकर्मणोरितितुप्रकृतत्वात् ॥ १७ ॥

इस सूत्रके विद्याकर्मणोः १ इति २ तु ३ प्रकृतत्वात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो पंचाग्निविद्यावाले चन्द्रलोकमें जाते हैं तो तिन करके जब चन्द्रलोक पूरित होजायगा तब चन्द्रलोकमें अवकाश न रहेगा तहां कहते हैं कि प्रकरणमें विद्या और इष्टादि कर्म यह दो देवयान पितृयानके साधन कहे हैं औ जिनके यह दोनों नहीं हैं तिनका जायस्व म्रियस्व यह तृतीय मार्ग कहा है इसीस चन्द्रलोक पूरित नहीं होता ॥ १७ ॥

जो यह कहाकि देहलाभके वास्ते सर्वही चन्द्रलोकमें जानें योग्य हैं काहेतें पंचमी आहुतिमें जल पुरुषाकार होता है यह पंचत्व संख्याका नियम है इस आक्षेपका समाधान कहते हैं ॥

नतृतीयेतथोपलब्धेः ॥ १८ ॥

इस सूत्रके न १ तृतीये २ तथा ३ उपलब्धेः ४ यह च्यार पद हैं ॥ तृतीयस्थानमें देहलाभके वास्ते आहुतिकी संख्याके नियम नहीं मानना चाहिये काहेतें आहुति संख्याके नियमके विनाही उक्त प्रकार करके जायस्व म्रियस्व इस तृतीय स्थानकी प्राप्तिका ज्ञान है औ पंचमी

आहुतिमें जल पुरुषाकार होता है यह मनुष्य शरीरके वास्ते संख्याका नियम है कीटादि शरीरके वास्ते नहीं ॥ १८ ॥

स्मर्यतेऽपिचलोके ॥ १९ ॥

इस सूत्रके स्मर्यते १ अपि २ च ३ लोके ४ यह च्यार पद हैं ॥ पंचमी आहुतिमें जल पुरुषाकार होता है यह नियम है औ यह नियम नहीं है कि पंचमी आहुतिके विना जल पुरुषाकार न होवै काहेतें लोकमें स्मरण होता है कि द्रोण धृष्टद्युम्न सीता द्रौपदी इत्यादि सर्व योनिके विनाही उत्पन्न भये हैं ॥ १९ ॥

दर्शनाच्च ॥ २० ॥

इस सूत्रके दर्शनात् १ च२यह दो पद हैं जरायुज अण्डज स्वेदज उद्भिज्ज यह च्यार प्रकारके भूत हैं तिनमें मैथुन धर्मके विनाही स्वेदज उद्भिज्जकी उत्पत्तिका दर्शन होनेतैं आहुति संख्याका अनादर है॥२०॥

इन भूतोंके अण्डज जीवज उद्भिज्ज यह तीन बीज होनेतैं तीन प्रकारके ही भूत हैं च्यार प्रकारके भूतोंकी प्रतिज्ञा क्यों करते हो इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

तृतीयशब्दावरोधःसंशोकजस्य ॥ २१ ॥

इस सूत्रके तृतीयशब्दावरोधः १ संशोकजस्य २ यह दो पद हैं ॥ अण्डज जरायुज उद्भिज्ज यहां तृतीय उद्भिज्ज शब्दकरके संशोकजका ग्रहण है काहेतें जैसें उद्भिज्ज भूमिकों भेदन करके निकलते हैं तैसें संशोकज जलको भेदन करके निकलते हैं इस रीतिसें तुल्यता है संशोकज नाम स्वेदजका है ॥ २१ ॥

साभाव्यापत्तिरुपपत्तेः॥ २२ ॥

इस सूत्रके साभाव्यापत्तिः १ उपपत्तेः २ यह दो पद हैं ॥ इष्टादि कर्म करनेंवाले आकाशादिद्वारा चन्द्रलोकसैं पीछे आते हैं इस अर्थकों

यह श्रुति कहती है । अथैतमेवाध्वानंपुनर्निवर्तन्तेयथेतमाकाशमाका-शाद्वायुंवायुर्भूत्वाधूमोभवतिधूमोभूत्वाऽभ्रंभवत्यभ्रंभूत्वामेघोभवतिमेघो भूत्वाप्रवर्षति । इति ॥ तहां संशय है कि जब चन्द्रलोकसैं पीछे आते हैं तब आकाशादिकोंका स्वरूपही होजाते हैं वा आकाशादिकोंके सदृश होजाते हैं इति । तहां कहते हैं कि आकाशादिकोंके सदृश होजाते हैं औ जो आकाशादिकोंका स्वरूप होवैं तो आकाशको विभु होनेतैं वाय्वादिक्रम करके आनाही न बनेंगा औ श्रुतिका अर्थ यह है कि जिस क्रमसैं जाते हैं तिससैं विपरीत क्रम करके आते हैं कर्मके अंतमें द्रवीभूत देहवाले होते हैं पीछे आकाशको प्राप्त होके आकाशकी सदृश होते हैं पीछे पिण्डीकृत अतिसूक्ष्म लिङ्गदेहसहित वायु करके जहांतहां भ्रमते हुये वायुके समान होतेहैं पीछे धूमकों प्राप्त होके धूमके समान होते हैं पीछे अभ्रकों प्राप्त होके अभ्रके समान होते हैं जो जलकों धारै सो अभ्र कहाता है औ जो जलको वर्षै सो मेघ कहाता है अभ्रसैं मेघको प्राप्त होके मेघके समान होतेहैं पीछे वृष्टिद्वारा पृथ्वीमें प्रवेश करके व्रीहि यवादिरूप होते हैं इति ॥ २२ ॥

नातिचिरेणविशेषात् ॥ २३ ॥

इस सूत्रके न १ अतिचिरेण २ विशेषात् ३ यह तीन पद हैं ॥ चन्द्रलोकसैं पीछे आनेवाले व्रीहि यवादि प्राप्तिसैं पूर्व बहुत बहुत काल आकाशादिकोंके सदृश रहके उत्तर उत्तरके सदृश होते हैं वा अल्प अल्प काल रहके होते हैं तहां कहते हैं कि अल्प अल्प काल आकाशादिकोंके सदृश रहके उत्तर उत्तरके सदृश होते हैं काहेतैं अगाडी वाक्य विशेषमें कहा है कि व्रीहि यवादिकोंसैं दुःख करके निकलना होता है इससैं यही निश्चय भया कि आकाशादिकोंसैं अल्पकालमें ही सुखपूर्वक निकलते हैं ॥ २३ ॥

अन्याधिष्ठितेपूर्ववदभिलापात् ॥ २४ ॥

इस सूत्रके अन्याधिष्ठिते १ पूर्ववत् २ अभिलापात् ३ यह तीन पद हैं॥चन्द्रलोकसैं आनेवाले वृष्टिद्वारा भूमिमें प्रवेश करके व्रीहियवादिभावको प्राप्त होते हैं तहां संशय है कि स्थावर जातिके सुखदुःखकों भोगते हैं वा जीवान्तरके अधीन स्थावर शरीरमें संबंध मात्रको प्राप्त होते हैं तहां कहते हैं कि जैसैं वायुधूमादिकमें संबंध मात्रकों प्राप्त होते हैं तैसैं जीवान्तरके अधीन व्रीहियवादिकोंके विषै संबंध मात्रकों प्राप्त होते हैं सुखदुःखकों नहीं भोगते यह शास्त्रका कथन है ॥ २४ ॥

अशुद्धमितिचेन्नशब्दात् ॥ २५ ॥

इस सूत्रके अशुद्धम् १ इति २ चेत् ३ न ४ शब्दात् ५ यह पांच पद हैं ॥ हिंसाके योगसैं इष्टादि कर्म अशुद्ध है औ अशुद्ध कर्मका फल व्रीहियवादि जन्मभी होसकता है । इति चेन्न । ऐसैं न कहो काहेतैं धर्म अधर्म ज्ञानका हेतु शास्त्र है । अग्नीषोमीयं पशुमालभेत । यह श्रुति यज्ञके विषै हिंसाका विधान करती है इसीसैं इष्टादि कर्म अशुद्ध नहीं किंतु शुद्ध है ॥ २५ ॥

रेतःसिग्योगोऽथ ॥ २६ ॥

इस सूत्रके रेतःसिग्योगः १ अथ २ यह दो पद हैं ॥ व्रीहियवादिभावके अनंतर वीर्यसेचनका विधान है सो वीर्यसेचन यौवनादि अवस्थामें होताहै औ व्रीहियवादि अवस्थामें वीर्यसेचनका अयोग होनेतैं व्रीहियवादिकोंके साथ संबंध मात्र है ॥ २६ ॥

योनेःशरीरम् ॥ २७ ॥

इस सूत्रके योनेः १ शरीरम् २ यह दो पद हैं ॥ योनिमें वीर्यसेचनके अनंतर कर्मफल भोगके वास्ते शरीर उत्पन्न होताहै ॥ २७ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां तृतीयाध्यायस्य प्रथमपादः ॥ १ ॥

तृतीयाध्याये द्वितीयः पादः ।

पूर्व पादके विषे पंचाग्निविद्याको कहके जीवकी संसार गतिका भेद कहा अब तिस जीवकी अवस्थाका भेद कहते हैं ॥

संध्येसृष्टिराहहि ॥ १ ॥

इस सूत्रके संध्ये १ सृष्टिः २ आह ३ हि ४ यह च्यार पद हैं ॥ संध्यनाम स्वप्नका है स्वप्नकी सृष्टि जागरितकी न्याई व्यावहारिक सत्तावाली है वा शुक्ति रजतकी न्याई प्रातिभासिक सत्तवाली है तहां पूर्वपक्षी कहता है कि स्वप्नकी सृष्टि व्यावहारिक सत्तावाली है काहेतें श्रुति कहती है कि । अथरथान्रथयोगान्पथः सृजतेइति । अस्याअर्थः जागरितके अनंतर स्वप्नस्थानमें रथ औ रथके योग्य घोडा औ चलनेंके योग्य मार्ग इन सर्वकों आपही रचता है इति ॥ १ ॥

निर्मातारंचैकेपुत्रादयश्च ॥ २ ॥

इस सूत्रके निर्मातारं १ च २ एके ३ पुत्रादयः ४ च ५ यह पांच पद हैं॥ कोई शाखावाले इस आत्माकों स्वप्नके विषे सर्व कामकों रचनेंवाला मानते हैं । यएषसुप्तेषुजागर्तिकामंकामं पुरुषोनिर्मिमाणः । अस्याअर्थः। जो यह पुरुष है सो जब स्वप्नके विषे सर्व इंद्रिय व्यापारहीन होवैं तब काम कामकों रचताहुआ जागता है इति । इहां काम शब्दसें पुत्रादि विषयका ग्रहण होनेतें स्वप्नकी सृष्टि सत्य है ॥ २ ॥

मायामात्रंतुकात्स्न्र्येनानभिव्यक्तस्वरूपत्वात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके मायामात्रं १ तु २ कात्स्न्र्येन ३ अनभिव्यक्तस्वरूपत्वात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है स्वप्नकी सृष्टि सत्य नहीं किंतु मायामयी है काहेतें स्वप्नके देश काल निमित्त संपत्ति इनमें कोई भी अपनें प्रगट स्वरूपसें सत्य नहीं । नत-

त्ररथानरथयोगानपंथानोभवन्ति। यह श्रुति कहती है कि स्वप्नके विषै न रथ है न रथके योग्य घोडा हैं न चलनेंके योग्य मार्ग हैं इति ॥३॥

सूचकश्चहिश्रुतेराचक्षतेचतद्विदः ॥ ४ ॥

इस सूत्रके सूचकः १ च २ हि ३ श्रुतेः ४ आचक्षते ५ च ६ तद्विदः ७ यह सात पद हैं॥ भविष्यत् साधु असाधु वस्तुका सूचक स्वप्न है ऐसैंही श्रुति कहती है। यदाकर्मसुकाम्येषुस्त्रियंस्वप्नेषुपश्यति ॥ समृद्धिं तत्र जानीयात्तस्मिन्स्वप्ननिदर्शनेइति । पुरुषंकृष्णंकृष्णदंतंपश्यतिसए-नंहन्ति इति च। पुरुष है सो जिस स्वप्नमें काम्यकर्मके विषै स्त्रीकों देखे तिस स्वप्नमें समृद्धि जाननी इति प्रथमश्रुत्यर्थः। औ जो कृष्ण-दांतवाले कृष्ण पुरुषकों देखे तो देखनेंवालेकों हनन करे इति द्विती-यश्रुत्यर्थः। औ स्वप्नाध्यायकों जाननेंवालेभी कहते हैं कि स्वप्नमें कुंज-रके ऊपर चढना शुभकारी है औ खरके ऊपर चढना अशुभकारी है इति। यद्यपि स्वप्नके स्त्रीदर्शनादिसें सूचित वस्तु सत्य है तथापि स्वप्नके स्त्रीदर्शनादिक सत्य नहीं॥ ४ ॥

पराभिध्यानात्तुतिरोहितंततोह्यस्यबन्धविपर्ययौ ॥ ५ ॥

इस सूत्रके पराभिध्यानात् १ तु २ तिरोहितं ३ ततः ४ हि ५ अस्य ६ बंधविपर्ययौ ७ यह सात पद हैं ॥ जो जीव ईश्वरका अंश है तो ईश्वरके समान धर्मवाला होनेंतैं जैसें ईश्वरकी सृष्टि सत्य है तैसें स्वप्नके विषै जीवकी सृष्टिभी सत्य होनी चाहिये यह कहनाभी ठीक नहीं काहेतें अविद्याके व्यवधानसें जीवके सत्यसंकल्पत्वादिधर्म तिरो-हित होरहे हैं जब कोई जीव ईश्वरका ध्यान करे तब ईश्वरकी कृपासें किसी जीवके सत्यसंकल्पत्वादि धर्म प्रगट होते हैं औ ईश्वरके स्वरू-पके अज्ञानतें इसी जीवके बन्ध है औ तिसके ज्ञानसें मोक्ष है ॥ ५ ॥

देहयोगाद्वासोऽपि ॥ ६ ॥

इस सूत्रके देहयोगात् १ वा २ सः ३ अपि ४ यह च्यार पद हैं ॥

जो जीव ईश्वरका अंश है तो तिसके ज्ञान ऐश्वर्यादि धर्म तिरस्कृत न होनें चाहिये यह कहना ठीक है परंतु जीवके ज्ञान ऐश्वर्यादि धर्मका तिरोभाव देह इंद्रिय मन बुद्धि विषयादिकोंके योगसें है इसीसें जीवरचित स्वप्नकी सृष्टि सत्य नहीं ॥ ६ ॥

तदभावोनाडीषुतच्छ्रुतेरात्मनिच ॥ ७ ॥

इस सूत्रके तदभावः १ नाडीषु २ तच्छ्रुतेः ३ आत्मनि ४ च ५ यह पांच पद हैं ॥ पूर्वोक्त रीतिसें स्वप्नावस्थाकी परीक्षा करी अब सुषुप्ति अवस्थाकी परीक्षा करते हैं नाडी प्राण हृदय ब्रह्म यह जीवके सुषुप्ति स्थान हैं ऐसें श्रुति कहती हैं तहां संशय है कि यह स्थान परस्परमें भिन्न हैं वा एकही हैं तहां कहते हैं कि प्राण औ हृदय यह ब्रह्मके नाम हैं औ नाडीद्वारा एक ब्रह्मकोंही स्वप्न दर्शनाऽभावरूप सुषुप्ति स्थानका श्रवण होनेंतें एक ब्रह्मही जीवका सुषुप्ति स्थान है ॥ ७ ॥

अतः प्रबोधोऽस्मात् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके अतः १ प्रबोधः २ अस्मात् ३ यह तीन पद हैं ॥ जिस हेतुसें आत्माही सुषुप्ति स्थान है तिस हेतुसें आत्मासें ही प्रबोध होता है जैसें अग्निके क्षुद्र विस्फुलिङ्ग अग्निसें निकलते हैं तैसें सर्व प्राण आत्मासें ही निकलते हैं ॥ ८ ॥

सएवतुकर्मानुस्मृतिशब्दविधिभ्यः ॥ ९ ॥

इस सूत्रके सः १ एव २ तु ३ कर्मानुस्मृतिशब्दविधिभ्यः ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो सोता है सो ही जागता है वा अन्य जागता है तहां कहते हैं कि जो सोता है सोही जागता है काहेतें जो पैहिलेदिन कर्मका अनुष्ठान कर्त्ता है सो ही दूसरे दिन शेष रहे कर्मका अनुष्ठान कर्त्ता है औ उत्थित पुरुषकों यह स्मरण होताहै कि जो सोया था सोई मै हूं औ दिन दिनके प्रति यह प्रजा ब्रह्म लोककों प्राप्त होवै है इत्यादि शब्दभी तिसीका

उत्थान कहते हैं औ कर्मविद्या विधिसैंभी तिसीका उत्थान जाना जाता है अन्यथा विधि अनर्थक होवैगा ॥ ९ ॥

मुग्धेऽर्द्धसम्पत्तिःपरिशेषात् ॥ १० ॥

इस सूत्रके मुग्धे १ अर्द्धसंपत्तिः २ परिशेषात् ३ यह तीन पद हैं ॥ मुग्ध नाम मूर्च्छितका है तिसकी मूर्छाअवस्था जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति मरण इन सर्वसैं विलक्षण होनेंतैं परिशेषसैं अर्द्ध सम्पत्ति कहाती है सुषुप्तिके सर्व धर्मोंकरके सम्पन्न न होनेंतैं सुषुप्त नहीं कहाता औ मरणके सर्व धर्मोंकरके सम्पन्न न होनेंतैं मृत नहीं कहाता किंतु सुषुप्तिके औ मरणके अर्द्ध अर्द्ध धर्म करके सम्पन्न होनेंतैं अर्द्धसम्पत्तिवाला है॥ १०॥

नस्थानतोऽपिपरस्योभयलिङ्गंसर्वत्रहि ॥ ११ ॥

इस सूत्रके न १ स्थानतः २ अपि ३ परस्य ४ उभयलिङ्गं ५ सर्वत्र ६ हि ७ यह सात पद हैं ॥ सुषुप्तिके विषै जीव जिस ब्रह्मकों प्राप्त होता है तिस ब्रह्मके स्वरूपका निरूपण करते हैं । सर्वकर्मा सर्वकामः। इत्यादि श्रुति ब्रह्मकों सर्वकर्मवाला औ सर्वकामवाला कहती है सो सविशेष ब्रह्मका लिङ्ग है औ । अस्थूलमनणु । इत्यादि श्रुति ब्रह्ममें स्थूलताका औ अणुताका अभाव कहती है सो निर्विशेष ब्रह्मका लिङ्ग है तहां संशय है कि सविशेष निर्विशेष दोनों हीं प्रकारका ब्रह्म प्राप्त होनेंयोग्य है वा एक प्रकारका तहां कहते हैं कि परब्रह्म निर्विशेषही है सोई प्राप्त होनें योग्य है औ स्थान जो पृथिव्यादि उपाधि तिसके योगसैं भी निर्विशेषही रहता है काहेतैं अशब्दम् इत्यादि श्रुति सर्वत्र निर्विशेष ब्रह्मकोंही प्रतिपादन करती हैं ॥ ११ ॥

नभेदादितिचेन्नप्रत्येकमतद्वचनात् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके न १ भेदात् २ इति ३ चेत् ४ न ५ प्रत्येकम् ६ अतद्वचनात् ७ यह सात पद हैं ॥ जो यह कहा कि ब्रह्म सविशेष नहीं है किं तु निर्विशेष है सो कहना ठीक नहीं काहेतैं कोई श्रुति ब्रह्मकों

चतुष्पाद कहती है औ कोई षोडशकल कहती है ऐसैं श्रुतिभेदसैं ब्रह्मका भी सविशेष निर्विशेष भेद प्रतीत होता है । इति चेन्न । ऐसैं न कहो काहेतें जूदे जूदे उपाधिभेदको लेके भी शास्त्र अभेदही कहता है औ जो श्रुति भेदकों कहती है सो उपासनाके वास्ते कहती है तिसका तात्पर्य अभेदमेंही है ॥ १२ ॥

अपिचैवमेके ॥ १३ ॥

इस सूत्रके अपि १ चर एवम् ३ एके ४ यह च्यार पद हैं ॥ अपि निश्चय करके कोई शाखावाले भेददर्शनकी निन्दापूर्वक अभेद दर्शनको कहते हैं । मनसैवेदमाप्तव्यंनेहनानास्तिकिञ्चन ॥ मृत्योःसमृत्युमाप्नोतियइहनानेवपश्यति ॥ इति । अस्या अर्थः । यह ब्रह्म मन करकेही प्राप्त होनें योग्य है औ इसके विषै नाना वस्तु कोई नहीं है औ जो कोई इसके विषै नानाकी न्याई देखता है सो मृत्युके सकाशसैं मृत्युकोही प्राप्त होताहै इति ॥ १३ ॥

श्रुतिसैं तो साकार निराकार दो प्रकारका ब्रह्म प्रतीत होताहै तुम निराकारही कैसैं कहतेहो इस शंकाका उत्तर कहते हैं ॥

अरूपवदेवहितत्प्रधानत्वात् ॥ १४ ॥

इस सूत्रके अरूपवत् १ एव २ हि ३ तत्प्रधानत्वात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ रूपादि आकार करके रहितही ब्रह्म है काहेतें । अस्थूलमनणु । इत्यादि श्रुति निराकारके प्रतिपादनमेंही प्रधान हैं ॥ १४ ॥

जो निराकार ब्रह्म है तो साकार ब्रह्मप्रतिपादक श्रुतिकी क्या गति है इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

प्रकाशवच्चावैयर्थ्यम् ॥ १५ ॥

इस सूत्रके प्रकाशवत् १ चर अवैयर्थ्यम् ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसैं सूर्य चन्द्रमाका तेज आकाशमें स्थित है परंतु अंगुल्यादि उपाधिके

संबंधसैं ऋजु वक्र भान होताहै तैसैं ब्रह्म भी पृथिव्यादि उपाधिके संबंधसैं साकार भान होताहै उपासनाके वास्ते श्रुति साकार ब्रह्मकों कहती है इसीसैं व्यर्थ नहीं ॥ १५ ॥

आहचतन्मात्रम् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके आह १ च २ तन्मात्रम् ३ यह तीन पद हैं जैसैं लवणका पिण्ड बाहिर भीतरसैं एक रस है तैसैं रूपान्तर करके रहित निर्विशेषचैतन्य मात्र ब्रह्म है ऐसैं श्रुति कहती है ॥ १६ ॥

दर्शयतिचाथो अपिस्मर्यते ॥ १७ ॥

इस सूत्रके दर्शयति १ च २ अथो ३ अपि ४ स्मर्यते ५ यह पांच पद हैं ॥ नेतिनेति इत्यादि श्रुति पररूपका निषेध करके निर्विशेष ब्रह्मकों कहती है औ । ज्ञेयंयत्तत्प्रवक्ष्यामियज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ॥ अनादिमत्परंब्रह्मनसत्तन्नासदुच्यते ॥ यह गीतास्मृति भी निर्विशेष ब्रह्म कों कहती है । अस्याअर्थः । हे अर्जुन जो जाननें योग्य वस्तु है सो मैं तेरेकों कहूंगा जिसकों जानके पुरुष मोक्षकों प्राप्त होता है औ पर ब्रह्म है सो अनादि है न सत् कहाता है न असत् कहाता है इति॥१७॥

अतएवचोपमासूर्यकादिवत् ॥ १८ ॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ च ३ उपमा ४ सूर्यकादिवत् ५ यह पांच पद हैं ॥ जिस हेतुसैं ब्रह्म निर्विशेष है तिसी हेतुसैं ब्रह्मकों जल सूर्यादिकोंकी उपमा है जैसैं अनेक जल पात्रोंके विषै अनेक सूर्य भासते हैं तैसैं अनेक शरीरोंके विषै अनेकही आत्मा भासते हैं॥ १८॥

अम्बुवदग्रहणात्तुनतथात्वम् ॥ १९ ॥

इस सूत्रके अंबुवत् १ अग्रहणात् २ तु ३ न ४ तथात्वम् ५ यह पांच पद हैं ॥ जल सूर्यादिकोंकी उपमाके योग्य ब्रह्म नहीं है काहेतैं सूर्य मूर्तिमान् है तिसकी उपाधि जल दूरदेशके विषै ग्रहीत होता है तिसके

विषै सूर्यका प्रतिबिम्ब होना युक्त है औ मूर्तिरहित ब्रह्म सर्वगत है तिसकी उपाधिकों दूरदेशमें न होनेंतैं तिसके विषै ब्रह्मका प्रतिबिम्ब नहीं हो सकता ॥ १९ ॥

वृद्धिह्रासभाक्त्वमन्तर्भावादुभयसामञ्जस्यादेवम् ॥ २० ॥

इस सूत्रके वृद्धिह्रासभाक्त्वम् १ अंतर्भावात् २ उभयसामंजस्यात् ३ एवम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ दृष्टान्त दार्ष्टान्तिकके सर्वअंश सम नहीं होते हैं किंतु विवक्षित अंशकों लेके दृष्टान्त होता है जैसैं जलगत सूर्यका प्रतिबिम्ब है सो जलके बधनेंसैं बधता है औ जलके घटनेंसैं घटता है तैसैं एक परब्रह्म है सो देहादि उपाधिके अंतर्गत होनेंतैं उपाधिके धर्म जो वृद्धि ह्रासादि तिनकों भजता है ऐसैं दृष्टांत दार्ष्टान्तिककों समीचीन होनेंतैं कोई विरोध नहीं ॥ २० ॥

दर्शनाच्च ॥ २१ ॥

इस सूत्रके दर्शनात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ देहादि उपाधिके विषै परब्रह्मका प्रवेश श्रुति कहती है। पुरश्चक्रेद्विपदःपुरश्चक्रेचतुष्पदः। पुरः सपक्षीभूत्वापुरः पुरुष आविशत् । अस्याअर्थः। ईश्वर है सो मनुष्यादि शरीरकों रचके औ पश्वादि शरीरकों रचके चक्षुरादिकोंकी प्रगटतासैं पैहिलें लिङ्गशरीरवाला होके तिन शरीरोंके विषै प्रवेश करता भया प्रवेश करनेंसैं भी पूर्णही है इति ॥ २१ ॥

प्रकृतैतावत्त्वंहिप्रतिषेधतिततोब्रवीतिचभूयः ॥ २२ ॥

इस सूत्रके प्रकृतैतावत्त्वं १ हि २ प्रतिषेधति ३ ततः ४ ब्रवीति ५ च ६ भूयः ७ यह सात पद हैं ॥ प्रकरणके विषै मूर्त्त अमूर्त्त यह दो ब्रह्मके रूप हैं तिनका नेति नेति यह श्रुति निषेध कहती है तिस निषेधके पीछे । अन्यत्परमस्ति । यह श्रुति कहती है कि त्त अमूर्त्त इन दोनोंसैं परे ब्रह्म है ॥ २२ ॥

तदव्यक्तमाहहि ॥ २३ ॥

इस सूत्रके तत् १ अव्यक्तम् २ आह ३ हि ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो सर्व प्रपंचसें परब्रह्म न्यारा है तो नेत्रादिकोंसें गृहीत क्यों नहीं होता तहां कहते हैं कि परब्रह्म अव्यक्त है नेत्रादि इंद्रियका विषय नहीं ऐसेंही श्रुति कहती। नचक्षुषागृह्यते नापि वाचाइति। परब्रह्म न चक्षुकरके गृहीत होता है औ न वाणी करके गृहीत होता है अर्थात् कोई भी इंद्रिय करके गृहीत नहीं है ॥ २३ ॥

अपिसंराधनेप्रत्यक्षानुमानाभ्याम् ॥ २४ ॥

इस सूत्रके अपि१ संराधने२ प्रत्यक्षानुमानाभ्याम् ३ यह तीन पद हैं श्रुति स्मृतिसें यह निश्चय है कि संराधन कालके विषै अव्यक्त ब्रह्मकों योगी देखते हैं संराधन नाम भक्ति ध्यान प्रणिधानादि अनुष्ठानका है ॥ २४ ॥

जो संराध्य संराधक भाव मानोंगे तो पर अपर आत्माका भेद मानना होवैगा इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

प्रकाशादिवच्चावैशेष्यंप्रकाशश्चकर्मण्यभ्यासात् ॥२५॥

इस सूत्रके प्रकाशादिवत् १ च २ अवैशेष्यं ३ प्रकाशः ४ च ५ कर्माणि ६ अभ्यासात् ७ यह सात पद हैं ॥ जैसें प्रकाशादिक हैं सो उपाधिके विषै भेदकों प्राप्त होतेहैं स्वतः भेदवाले नहीं हैं तैसें चिदात्माभी ध्यानादि कर्मरूप उपाधिके विषै भेदकों प्राप्त होताहै स्वतः नहीं काहेतें तत्त्वमसि इस महावाक्यके अभ्याससें ब्रह्म एकरसही प्रतीत होताहै ॥ २५ ॥

अतोऽनन्तेनतथाहिलिङ्गम् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके अतः १ अनन्तेन २ तथा ३ हि ४ लिङ्गम् ५ यह पांच पद हैं ॥ अभेदकों स्वाभाविक होनेतें औ भेदकों अविद्याकृत

होनेतैं विद्यासैं अविद्याकों दूर करके जीव है सो अनन्त प्राज्ञात्माके साथ एकताकों प्राप्त होता है ऐसैंही श्रुति कहती है । ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति । अस्याअर्थः । ब्रह्मकों जाननेंवाला ब्रह्मही होता है इति॥२६॥

उभयव्यपदेशात्त्वहिकुण्डलवत् ॥ २७ ॥

इस सूत्रके उभयव्यपदेशात् १ तु २ अहिकुण्डलवत् ३ यह तीन पद हैं ॥ कहीं ध्यातृ ध्यातव्यरूप करके औ कहीं द्रष्टृ द्रष्टव्य रूप करके जीवका औ प्राज्ञका भेद कहा है जो अभेदही मानोगे तो भेद-कथन निरर्थक होवैगा यह कहना ठीक नहीं काहेतें जैसें सर्प एकही होताहै परंतु कुण्डलित्व वक्राकारत्व दीर्घदण्डाकारत्व रूप करके तिसका भेद है तैसैंही एक ब्रह्मके विषै उपाधि अनुपाधिकों लेके भेद अभेदका कथन है ॥ २७ ॥

प्रकाशाश्रयवद्वातेजस्त्वात् ॥ २८ ॥

इस सूत्रके प्रकाशाश्रयवत् १ वा २ तेजस्त्वात् ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसें प्रकाश औ प्रकाशका आश्रय सूर्य इन दोनोंको तेज होनेंतें अत्यंत भिन्न नहीं हैं परंतु लोक इनकों भिन्न कहते हैं तैसें प्रकरणमेंभी जानना चाहिये ॥ २८ ॥

पूर्ववद्वा ॥ २९ ॥

इस सूत्रके पूर्ववत् १ वा २ यह दो पद हैं ॥ प्रकाशादिवच्चावैशेष्यम् । इस सूत्रमें जो कहा है कि प्रकाशादिकोंकी न्यांई ब्रह्म एकरस है सो वेदान्तसिद्धान्त कहा है औ बन्ध अविद्याकृत है तिसकी विद्यासैं निवृत्ति है ॥ २९ ॥

प्रतिषेधाच्च ॥ ३०

इस सूत्रके प्रतिषेधात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ परमात्मासैं अन्य चेतनका निषेधभी शास्त्र कहता है । नान्योऽतोऽस्तिद्रष्टा । यह श्रुति कहती है कि परमात्मासैं अन्य कोई द्रष्टा नहीं है ॥ ३० ॥

परमतःसेतून्मानसम्बन्धभेदव्यपदेशेभ्यः ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके परम् १ अतः २ सेतून्मानसम्बन्धभेदव्यपदेशेभ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ यह पूर्वपक्षसूत्र है जो सर्व प्रपंचसैं रहित ब्रह्म कहा तिसतैं परे औरभी तत्त्व वस्तु है काहेतैं सेतु १ उन्मान २ सम्बंध ३ भेद ४ इनका कथन होनेतैं । अथ य आत्मा स सेतुर्विधृतिः । यह श्रुति कहती है कि जो आत्मा है सो सर्वको धारण करनेंवाला सेतु है इसतैं यही निश्चय भया कि आत्मरूप सेतुसैं परे औरभी तत्व वस्तु है औ । तदेतत् ब्रह्म चतुष्पात् । यह श्रुति कहती है कि वह ब्रह्म च्यारपादवाला है जो च्यारपाद करके परिमित ब्रह्म है तो तिसतैं अन्य वस्तुभी है औ । सतासौम्यतदासम्पन्नोभवति । यह श्रुति कहती है कि हे सौम्य यह जीव सुषुप्ति कालमें सत् ब्रह्मके साथ सम्बन्धको प्राप्त होताहै औ । अथयएषोऽक्षिणिपुरुषः । इत्यादि श्रुति आक्षिस्थ पुरुषका औ आदित्यमण्डलस्थ पुरुषका भेद कहती हैं इन सर्वसैं यही जाना गया कि परब्रह्मसैं परे कोई तत्त्व वस्तु है ॥ ३१ ॥

सामान्यात्तु ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके सामान्यात् १ तु २ यह दो पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है ब्रह्मसैं अन्य कोई तत्त्ववस्तु है यह कहना प्रमाण करके शून्य है औ सेतुके कथन करकेभी ब्रह्मसैं भिन्न कोई वस्तुकी सिद्धि नहीं होसकती काहेतैं लौकिकसेतुकी समानतासैं श्रुति आत्माको सेतु कहती है औ यह नहीं कहती कि आत्मासैं अन्य कोई तत्त्व वस्तु है ॥ ३२ ॥

बुद्ध्यर्थःपादवत् ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके बुद्ध्यर्थः १ पादवत् २ यह दो पद हैं ॥ जो यह कहा कि उन्मानका कथन होनेतैं ब्रह्मसैं भिन्न कोई वस्तु है सो कहना

ठीक नहीं काहेतें जैसें ध्यानके वास्ते वाक् प्राण चक्षु श्रोत्र यह मनके च्यार पाद हैं तैसें। बुद्ध्यर्थः । उपासनाके वास्ते ब्रह्मके च्यार पाद हैं ३३

स्थानविशेषात्प्रकाशादिवत् ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके स्थानविशेषात् १ प्रकाशादिवत् २ यह दो पद हैं ॥ जैसें सूर्यका प्रकाश एकही है परंतु उपाधिके योगसैं विशेष कहाता है औ उपाधिके वियोगसैं महाप्रकाशके साथ सम्बन्धवाला कहाता है औ उपाधिके भेदसैं भिन्न कहाता है तैसें एकही आत्मा जाग्रदादि अवस्थामें बुद्ध्यादि उपाधिके योगसैं विशेष विज्ञानवाला कहाता है औ सुषुप्तिमें उपाधिकी शान्ति होनेतें परमात्माके साथ सम्बन्धवाला कहाता है औ उपाधिके भेदसैं भिन्न कहाता है ॥ ३४ ॥

उपपत्तेश्च ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके उपपत्तेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ अपने स्वरूपसैं ही ब्रह्मकें साथ भेदनिवृत्तिरूप सम्बन्ध जीवका है मुख्य सम्बन्ध नहीं काहेतें श्रुति करके एक ब्रह्मका कथन होनेतें वस्तुद्वयका अभावहै॥३५॥

तथान्यप्रतिषेधात् ॥ ३६ ॥

इस सूत्रके तथा १ अन्यप्रतिषेधात् २ यह दो पद हैं ॥ नेह नानास्ति किञ्चन । यह श्रुति ब्रह्मसैं भिन्नवस्तुका प्रतिषेध करती है इससैं यही निश्चय भया कि परब्रह्मसैं परे कोई तत्त्व वस्तु नहीं है ॥ ३६ ॥

अनेनसर्वगतत्वमायामशब्दादिभ्यः ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके अनेन १ सर्वगतत्वम् २ आयामशब्दादिभ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ इस सेत्वादिकथनके निषेधसैं सर्वगत आत्मा सिद्ध भया । प्रश्न । तुम आत्माकों सर्वगत कैसें जानतेहो। उत्तर । आयाम शब्दसैं जानते हैं । प्रश्न । आयामशब्द किसको कहते हो । उत्तर । व्याप्तिवाचक शब्द आयामशब्द है जैसें । ज्यायान् दिवोज्यायानाकाशात् ।

यह ब्रह्मकों व्यापक कहनेवाला आयामशब्द है । अस्यार्थः परमात्मा द्युलोकसैं बडा है औ आकाशसैं बडा है अर्थात् सर्वगत है॥३७॥

फलमतउपपत्तेः ॥ ३८ ॥

इस सूत्रके फलम् १अतः २ उपपत्तेः३ यह तीन पद हैं ॥ शुभ अशुभ व्यामिश्र यह तीन प्रकारके कर्म हैं तिनका सुख दुःख व्यामिश्र यह तीन ही प्रकारके फल हैं तिन फलोंको देव नारकीय मनुष्यादिक भोगते हैं तिन फलोंकों भुगानेंवाला कर्म है वा ईश्वर है तहां कहते हैं कि फलकों भुगानेंवाला ईश्वर है काहेतें सर्वेश्वर सर्वज्ञ चेतनके विना जड कर्मके विषै फल भुगानेंकी योग्यता नहीं ॥ ३८॥

श्रुतत्वाच्च ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके श्रुतत्वात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ सवाएषमहानज आत्माऽन्नादोवसुदानः । यह श्रुति कहती है कि सो यह महान् अज आत्मा है सो सर्वकों अन्न देता है औ धन देता है इति ॥ ३९ ॥

धर्मजैमिनिरतएव ॥ ४० ॥

इस सूत्रके धर्म १ जैमिनिः २ अतः ३ एव ४ यह च्यार पद हैं ॥ स्वर्गकामोयजेत । इत्यादि श्रुतिसैं धर्महि फलका दाता है ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है ॥ ४० ॥

पूर्वंतुबादरायणोहेतुव्यपदेशात् ॥ ४१ ॥

इस सूत्रके पूर्वं १ तु २ बादरायणः ३ हेतुव्यपदेशात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ केवल कर्महि फलका दाता है इस पक्षकी निवृत्तिके अर्थ तुशब्द है पूर्वोक्त ईश्वरही फलका दाता है ऐसैं बादरायण आचार्य मानता है काहेतें सर्ववेदान्तके विषै ईश्वरही जगत्का हेतु कहा है॥४१॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां तृतीयाध्यायस्य द्वितीयः पादः ॥ २ ॥

तृतीयाध्याये तृतीयःपादः ।

पूर्वपादके विषे विज्ञेय ब्रह्मका तत्त्व कहा अब विचार करते हैं कि सर्व वेदान्तके विषे विज्ञानका भेद है वा नहीं इस संशयको दूर करते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

सर्ववेदान्तप्रत्ययंचोदनाद्यविशेषात् ॥ १ ॥

इस सूत्रके सर्ववेदान्तप्रत्ययं १ चोदनाद्यविशेषात् २ यह दो पद हैं ॥ सर्ववेदान्तके विषे एकही विज्ञान है काहेतें चोदनादिकोंकी अविशेषता होनेतें चोदना नाम प्रेरणाका है वा विधायकशब्दका नाम चोदना है जैसें एकही अग्निहोत्रके विषे शाखाभेद है परंतु जुहुयात् यह चोदना शब्द एकही है तैसें वाजसनेयी शाखामें औ छान्दोग्यके विषे । ज्येष्ठश्चश्रेष्ठश्च । इत्यादि ज्येष्ठत्वादिगुणविशिष्ट प्राणविद्य एक है तैसें पंचाग्निविद्या भी एक है ॥ १ ॥

भेदान्नेतिचेन्नैकस्यामपि ॥ २ ॥

इस सूत्रके भेदात् १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ एकस्याम् ६ अपि ७ यह सात पद हैं ॥ वाजसनेयी शाखामें पंचाग्निविद्याकी स्तुति करके छठा अग्नि और माना है औ छान्दोग्यमें पंचाग्निविद्याही मानी है ऐसें गुण भेद होनेतें सर्व वेदान्तके विषे एक विद्या नहीं इति चेन्न । ऐसें न कहो काहेतें एक विद्याके विषे भी गुणभेदका संभव होनेतें एकही विद्या है ॥ २ ॥

स्वाध्यायस्यतथात्वेनसमाचारेऽधिका-
राच्चसववच्चतन्नियमः ॥ ३ ॥

इस सूत्रके स्वाध्यायस्य १ तथात्वेन २ समाचारे ३ अधिकारात् ४ च ५ सववत् ६ च ७ तन्नियमः ८ यह आठ पद हैं ॥ जो ऐसें कहते

हैं कि अथर्ववेदके विषै विद्याके प्रति शिरोव्रतादि धर्मकी अपेक्षा है औ दूसरे वेदमें नहीं है इसीसें विद्याका भेद है सो कहना ठीक नहीं काहेतें शिरोव्रतादि अध्ययनका धर्म है विद्याका धर्म नहीं औ अध्ययन धर्म करके ही वेदव्रतोपदेश ग्रंथके विषै आथर्वणिक कहते हैं कि शिरोव्रतादिरहित पुरुष इसका अध्ययन न करे जैसें एक ऋषिसंज्ञक अग्निमें सौर्यादि सत होम करे यह नियम भी अथर्वमें है परंतु शिरोव्रतादि-धर्मविद्याका है यह नियम नहीं ॥ ३ ॥

दर्शयतिच ॥ ४ ॥

इस सूत्रके दर्शयति १ च २ यह दो पद हैं ॥ एकही विद्याकों वेद कहता है । सर्वे वेदायत्पदमामनन्ति । अस्या अर्थः । जिस ब्रह्मस्वरूपको सर्व वेद कहते हैं इति ॥ ४ ॥

उपसंहारोऽर्थाभेदाद्विधिशेषवत्समानेच ॥ ५ ॥

इस सूत्रके उपसंहारः १ अर्थाभेदात् २ विधिशेषवत् ३ समाने ४ च ५ यह पांच पद हैं ॥ उक्त प्रकारसें सर्व वेदान्तके विषै एकही विद्या सिद्ध भई औ जो शाखान्तरमें विद्याके गुण कहे हैं तिनका समानविद्यामें उपसंहार करना अर्थात् जिस शाखामें नहीं हैं तिस शाखामें शाखान्तरसें इकट्ठा करना काहेतें तिनके अर्थका अभेद है जैसें विधिके शेष अग्निहोत्रादि धर्मोंका एकविधिमें उपसंहार होता है तैसें शाखान्तरस्थ गुणोंका समानविद्यामें उपसंहार जानना ॥ ५ ॥

अन्यथात्वंशब्दादितिचेन्नाविशेषात् ॥ ६ ॥

इस सूत्रके अन्यथात्वम् १ शब्दात् २ इति ३ चेत् ४ न ५ अविशेषात् ६ यह छेह पद हैं ॥ वाजसनेयी शाखामें श्रवण होता है कि सात्त्विक वृत्तिवाले देव कहतेभये कि यज्ञके विषै उद्गीथ करके राजसतामसवृत्तिवाले असुरोंकों जीतेंगे पीछे वागादिक सर्व प्राणोंकों कहा कि तुम हमारे मध्यमें उद्गान करो जब वागादिक उद्गान करने लगे तब

अनृतादि दोष करके ग्रस्त होतेभये पीछे मुख्यप्राणकों कहाकि। त्वंनउद्गाय। तूं हमारे मध्यमें उद्गानकर जब मुख्यप्राण उद्गान करनेलगा तब असुर नष्ट होतेभये इति। औ छान्दोग्यके विषै भी श्रवण होता है कि। तमुद्गीथमुपासांचक्रिरे। जब वागादिक सर्व प्राण दोष करके ग्रस्त होतेभये तब मुख्यप्राण उद्गान करता भया पीछे असुर नष्ट होगये तब तिस उद्गीथरूप मुख्यप्राणकी देवता उपासना करतेभये इति। इन दोनों स्थलोंमें प्राणविद्या कही है तहां संशय है कि यह विद्या एक है वा नहीं पूर्वोक्त न्यायसें प्राणविद्या एक है यह पूर्वपक्षीका मत है। सिद्धान्ती। प्राणविद्या एक नहीं काहेतें वाजसनेयी शाखामें। त्वंनउद्गाय। इसवाक्य करके प्राणकों कर्ता माना है औ छान्दोग्यमें। तमुद्गीथमुपासांचक्रिरे। इस वाक्य करके प्राणकों कर्म माना है ऐसें उपास्य कर्ता कर्मका भेद होनेतें विद्याका भेद है। पूर्वपक्षी। कर्ता कर्मरूप विशेषता करके विद्याका भेद नहीं होसकता काहेतें बहुत स्थलमें प्राणविद्याकी अविशेषता प्रतीत होती है इसीसें प्राणविद्या एक है॥ ६॥

नवाप्रकरणभेदात्परोवरीयस्त्वादिवत्॥ ७॥

इस सूत्रके न १ वा २ प्रकरणभेदात् ३ परोवरीयस्त्वादिवत् ४ यह च्यार पद हैं॥ यह सिद्धांत सूत्र है जैसें प्रकरणका भेद होनेतें आदित्यादिगतहिरण्यश्मश्रुत्वादिगुणविशिष्ट उद्गीथकी उपासनासें। परोवरीयस्त्वादि। अर्थात् परमश्रेष्ठत्वादिगुणविशिष्ट उद्गीथकी उपासनाका भेद है तैसें प्रकरणका भेद होनेतें प्राणविद्याका भेद है॥ ७॥

संज्ञातश्चेत्तदुक्तमस्तितुतदपि॥ ८॥

इस सूत्रके संज्ञातः १ चेत् २ तत् ३ उक्तम् ४ अस्ति ५ तु ६ तत् ७ अपि ८ यह आठ पद हैं॥ वाजसनेयीशाखामें औ छान्दोग्यमें उद्गीथविद्या ऐसी एक संज्ञा होनेतें एकही विद्या है यह कहना भी

ठीक नहीं काहेतें । नवा प्रकरणभेदात् परोवरीयस्त्वादिवत् । इस पूर्वसूत्रमें जो कह आये हैं सोई ठीक है औ एकसंज्ञा यह कहना भी श्रुतिके अक्षरोंसें बाह्य है श्रुतिमें तो उद्गीथ इतनाहीं पद है ॥ ८ ॥

व्याप्तेश्चसमञ्जसम् ॥ ९ ॥

इस सूत्रके व्याप्तेः १ च २ समंजसम् ३ यह तीन पद हैं ॥ ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत । अर्थः ओम् यह अक्षर उद्गीथ है ऐसें उपासना करनी इति । इस वाक्यमें अक्षरशब्दका औ उद्गीथशब्दका सामानाधिकरण्य होनेतें अध्यास अपवाद एकत्व विशेषण यह च्यार पक्ष प्रतीत होतेहैं बुद्धिपूर्वक अभेदके आरोपका नाम अध्यास है बाधका नाम अपवाद है वास्तव अभेदका नाम एकत्व है व्यावर्त्तकका नाम विशेषण है तहां संशय है कि इन च्यार पक्षमें कौनसे पक्षका ग्रहण करना ठीक है तहां कहते हैं कि विशेषणपक्षका ग्रहण करना ठीक है काहेतें इस उपासनामें सर्ववेदव्याप्य ओङ्कार प्राप्त भया तिसका निरास करके ओङ्कारके विषै प्राणदृष्टि विधानके वास्ते अक्षरका उद्गीथ विशेषण है ऐसें हीं मानना ठीक है ॥ ९ ॥

सर्वाभेदादन्यत्रेमे ॥ १० ॥

इस सूत्रके सर्वाभेदात् १ अन्यत्र २ इमे ३ यह तीन पद हैं ॥ वाजसनेयीशाखामें औ छान्दोग्यमें प्राणका संवाद है तहां प्राणकों श्रेष्ठ मानके उपास्य माना है तिसके विषै वागादिकोंके वसिष्ठत्वादि गुणोंका समर्पण किया है वाणीका वसिष्ठत्व गुण है औ चक्षुका प्रतिष्ठा गुण है काहे तें वाणीवाला सुखपूर्वक बस्ता है औ चक्षुवालेकी सुखपूर्वक पादप्रतिष्ठा होती है औ कौषीतकी शाखामें प्राणसंवादके विषै वसिष्ठत्वादिगुणका श्रवण है नहीं तहां संशय है कि वाजसनेयी शाखासें वसिष्ठत्वादिगुणोंका आकर्षण करना वा नहीं तहां कहते हैं कि आकर्षण करना काहेतें,सर्वशाखामें प्राणविज्ञान एकही है ॥ १० ॥

आनन्दादयः प्रधानस्य ॥ ११ ॥

इस सूत्रके आनन्दादयः १ प्रधानस्य २ यह दो पद हैं ॥ जो श्रुति ब्रह्मके स्वरूपको कहती है तिनके विषे आनन्दरूपत्व विज्ञानघनत्व सर्वगतत्वादि ब्रह्मके धर्म कहे हैं तहां संशय है कि जिस श्रुतिमें जो धर्म कहा है सो वहांही जानना वा सारे धर्म सारेही जाननें तहां कहते हैं कि सारे धर्म सारेही जाननें काहेतें सर्वश्रुतियोंमें एकही ब्रह्म प्रधान है तिसका भेद नहीं ॥ ११ ॥

तैत्तिरीय उपनिषद्में प्रियशिरस्त्व मोदप्रमोदादि ब्रह्मके धर्म कहे हैं सो भी सारे ही जाननें चाहिये इस शंकाका उत्तर कहते हैं ॥

प्रियशिरस्त्वाद्यप्राप्तिरुपचयापचयौहिभेदे ॥ १२ ॥

इस सूत्रके प्रियशिरस्त्वाद्यप्राप्तिः १ उपचयापचयौ २ हि ३ भेदे ४ यह च्यार पद हैं ॥ प्रियशिरस्त्वादि धर्मोंकी सारे प्राप्ति नहीं है काहेतें पुत्रादि दर्शन सुखका नाम प्रिय है पुत्रकी वार्त्तासें मोद होता है यह सर्व कोशके धर्म हैं ब्रह्मके नहीं काहेतें परस्परकी अपेक्षासें औ भोगनेंवालेकी अपेक्षासें इन धर्मोंकी वृद्धि औ हानि होती है औ हानि वृद्धिभेदके विना होवें नहीं औ ब्रह्म भेदरहित है ॥ १२ ॥

इतरेत्वर्थसामान्यात् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके इतरे १ तु २ अर्थसामान्यात् ३ यह तीन पद हैं ॥ ज्ञान आनन्दादि धर्म सारेही जाननें चाहिये काहेतें इन धर्मों करके प्रतिपाद्य धर्मि ब्रह्म सारे एकही है ॥ १३ ॥

आध्यानायप्रयोजनाभावात् ॥ १४ ॥

इस सूत्रके आध्यानाय १ प्रयोजनाभावात् २ यह दो पद हैं ॥ इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः । इत्यादि श्रुतिवाक्य कठवल्लीके विषे श्रवण होता है तहां संशय है कि तिस तिसकी अपेक्षासें

अर्थादिक परे कहे हैं वा इन सर्वकी अपेक्षासैं पुरुषही परे कहा है तहां कहते हैं कि इन सर्वकी अपेक्षासैं पुरुषही परे कहा है काहेतैं इन द्वारा पुरुषका दर्शन होना यही इनका प्रयोजन है और कोई प्रयोजन नहीं औ ब्रह्मकों परे कहनेका प्रयोजन मोक्षकी सिद्धि है ॥ १४ ॥

आत्मशब्दाच्च ॥ १५ ॥

इस सूत्रके आत्मशब्दात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ पुरुषज्ञानके वास्तेही इन्द्रिय अर्थादिकोंका प्रवाह माना है काहेतैं। एष सर्वेषु भूतेषु गूढोऽऽत्मा न प्रकाशते। इत्यादि श्रुतिमें पुरुषके विषै आत्मशब्दका प्रयोग होनेतैं इन्द्रिय अर्थादिक सर्व अनात्मा है औ श्रुतिका अर्थ यह है कि सर्वभूतोंके विषै आत्मा गूढ है इसीसैं प्रकाशता नहीं है इति ॥ १५ ॥

आत्मगृहीतिरितरवदुत्तरात् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके आत्मगृहीतिः १ इतरवत् २ उत्तरात् ३ यह तीन पद हैं ॥ ऐतरेय उपनिषद्में कहा है कि इस सृष्टिसैं पैहिलैं एक आत्माहीं रहा और कुछ नहीं था सो आत्मा इन लोकोंको रचता भया इति तहां संशय है कि आत्मशब्दसैं परमात्माका ग्रहण है वा अन्य किसीका ग्रहण है तहां कहते हैं कि परमात्माका ग्रहण है काहेतैं जैसैं इतर सृष्टि वाक्योंमें परमात्माका ग्रहण करते हैं तैसैं इहांभी करना चाहिये ॥ १६ ॥

अन्वयादितिचेत्स्यादवधारणात् ॥ १७ ॥

इस सूत्रके अन्वयात् १ इति २ चेत् ३ स्यात् ४ अवधारणात् ५ यह पांच पद हैं ॥ सृष्टिवाक्यका प्रजापतिके विषै अन्वय होनेतैं परमात्माका ग्रहण नहीं होसकता ऐसैं कहै तो ठीक नहीं काहेतैं जो परमात्माका ग्रहण न होगा तो सृष्टिसैं पैहिले एकही आत्मा रहा ऐसा निश्चयभी न होगा इसीसैं परमात्माका ग्रहण करना ठीक है ॥ १७ ॥

कार्याख्यानादपूर्वम् ॥ १८ ॥

इस सूत्रके कार्याख्यानात् १ अपूर्वम् २ यह दो पद हैं ॥ छान्दोग्यमें औ वाजसनेयी शाखामें प्राणसंवादके विषे श्वादिपर्यन्त प्राणका अन्न कहके पीछे कहा है कि जल प्राणका वस्त्र है ऐसें उपासक पुरुष प्राणकी अनग्नताका चिन्तन करे औ तिसके पीछे छान्दोग्यमें कहा है कि भोजनसें पैहिलें औ पीछे आचमन करना यह प्राणकों आच्छादन करनेंके वास्ते आचमन विधि है इति तहां संशय है कि यह दोनोंहीं माननें चाहिये वा आचमनविधि मानना चाहिये वा अनग्नताचिन्तन मानना चाहिये इति तहां कहते हैं कि ध्यानके वास्ते अनग्नताचिन्तनहीं मानना ठीक है काहेतें शुद्धिके वास्ते कार्यरूपसें आचमन नित्यही प्राप्त है तिसकी विधि नहीं है ॥ १८ ॥

समानएवंचाभेदात् ॥ १९ ॥

इस सूत्रके समानः १ एवम् २ च ३ अभेदात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ वाजसनेयी शाखामें अग्निरहस्यके विषै शाण्डिल्यविद्या है तहां मनोमयत्व प्राणशरीरत्व भारूपत्वादि आत्माके गुण कहे हैं औ तिसी शाखामें कहा है कि आत्मा सर्वका अधिपति है सर्वका प्रशास्ता है इति तहां संशय है कि यह विद्या एक है औ मनोमयत्वादि गुणका उपसंहार है वा दो विद्या हैं गुणका अनुपसंहार है तहां कहते हैं कि जैसें कहीं भिन्न शाखामें एक विद्या औ गुणका उपसहार होता है तैसें इहां भी एक शाखामें एकही विद्या औ गुणका उपसंहार है काहेतें मनोमयत्वादि गुणवाला एक ब्रह्मही उपास्य है ॥ १९ ॥

सम्बन्धादेवमन्यत्रापि ॥ २० ॥

इस सूत्रके सम्बन्धात् १ एवम् २ अन्यत्र ३ अपि ४ यह च्यार पद हैं॥ बृहदारण्यकमें कहा है कि इस मण्डलके विषे औ दक्षिण नेत्रके विषे आदित्य पुरुष है औ पीछे दो उपनिषद् कहे हैं एक तो यह कहा कि

अहर इस नामवाला मण्डलस्थ पुरुष अधिदैवत है औ दूसरा यह कहा कि अहम् इस नामवाला नेत्रस्थ पुरुष अध्यात्म है तहां संशय है कि अविभाग करके यह दोनों उपनिषद् दोनोंही जगह मानने वा विभाग करके एक अधिदैवत औ दूसरा अध्यात्म मानना इति तहां पूर्वपक्षी कहता है कि जैसें शाण्डिल्यविद्यामें एकविद्या औ गुणका उपसंहार माना है तैसें इहां भी एकविद्या औ अधिदैवतत्वादि गुणका उपसंहार मानना चाहिये ॥ २० ॥

नवाविशेषात् ॥२१ ॥

इस सूत्रके न १ वा २ विशेषात् ३ यह तीन पद हैं॥ यह सिद्धांत सूत्र है इन दोनों उपनिषदोंकी दोनों जगह प्राप्ति नहीं है काहेतें मण्डलस्थ पुरुषकी अहर इस नामसें उपासना कही है औ नेत्रस्थ पुरुषकी अहम् इस नामसें उपासना कही है ऐसें स्थानविशेष होनेतें दोनों उपनिषद् भिन्न हैं एक नहीं ॥ २१ ॥

दर्शयतिच ॥ २२ ॥

इस सूत्रके दर्शयति १ च २ यह दो पद हैं ॥ मण्डलस्थ पुरुष औ नेत्रस्थ पुरुषरूप स्थानके भेदसें भिन्न धर्मोंका अतिदेशके विना परस्परमें उपसंहार नहीं होसकता इसीसें । तस्यैतस्य तदेवरूपं यदमुष्य रूपम् । इत्यादि श्रुतिरूप अतिदेश करके आदित्य पुरुषगतरूपादि धर्मोंका नेत्रस्थ पुरुषके विषे उपसंहार माना है ।श्रुत्यर्थः । जो इस मण्डलस्थ पुरुषका रूप है सोई नेत्रस्थ पुरुषका रूप है इति ॥२२॥

सम्भृतिद्युव्याप्त्यपिचातः ॥ २३ ॥

इस सूत्रके संभृतिद्युव्याप्ती १ अपि २ च ३ अतः ४ यह च्यार पद हैं॥ आकाशादिकोंको उत्पन्न करनेंवाला औ धारण करनेंवाला जो ब्रह्मका पराक्रम तिसका नाम सम्भृति है औ स्वर्गादिकोंके साथ ब्रह्मकी व्याप्तिका नाम द्युव्याप्ति है सो यह संभृति औ द्युव्याप्ति ब्रह्मकी विभूति

वेदमें कही है औ तिसी वेदमें शाण्डिल्यविद्यासें आदिलेके ब्रह्मविद्या कही है तहां संशय है कि ब्रह्मविद्याके विषै ब्रह्मविभूतिका उपसंहार करना वा नहीं तहां कहते हैं कि नहीं करना काहेतें शाण्डिल्यविद्यादिकोंका हृदयादि स्थान कहे हैं तिनके विषै ब्रह्मविभूतिकी प्राप्ति नहीं होसकती ॥ २३ ॥

पुरुषविद्यायामिवचेतरेषामनाम्नानात् ॥ २४ ॥

इस सूत्रके पुरुषविद्यायाम् १ इव २ च ३ इतरेषाम् ४ अनाम्नानात् ५ यह पांच पद हैं ॥ छान्दोग्यके विषै पुरुषकों यज्ञरूपकरके वर्णन किया है तिसकी आयुका तीन विभाग करके तीन सवन कहे हैं तिस पुरुषके चौविसवर्षपर्यंत प्रातःकालका सवन है औ तिसके आगे चवालिसवर्ष पर्यंत मध्यंदिनका सवन है औ तिसके आगे अडतालिसवर्ष पर्यंत सायंकालका सवन है ऐसें एक सो सोलवर्ष पर्यंत पुरुषका जीवनरूप फल कहा है औ तैत्तिरीयके विषै भी पुरुषकों यज्ञरूप कहा है तिस विद्वान् यज्ञपुरुषका आत्मा यजमान है श्रद्धा पत्नी है इति तहां संशय है कि छान्दोग्यमें पुरुषयज्ञके जो धर्म कहे हैं तिनका तैत्तिरीयमें उपसंहार करना वा नहीं तहां कहते हैं कि नहीं करना काहेतें छान्दोग्यमें जो पुरुषयज्ञ कहा है तिसतैंविलक्षण तैत्तिरीयमें कहा है इन दोनोंकी तुल्यता नहीं ॥ २४ ॥

वेधाद्यर्थभेदात् ॥ २५ ॥

इस सूत्रके वेधाद्यर्थभेदात् १ यह एकही समस्त पद है ॥ अथर्ववेदके विषै उपनिषद्के प्रारम्भमें प्रविध्यादि मंत्र कहे हैं। सर्वंप्रविध्यहृदयंप्रविध्यधमनीः प्रवृज्यशिरोऽभिप्रवृज्यत्रिधाविपृक्तः इति। अर्थः। अभिचारकर्त्ता पुरुष देवताकी प्रार्थना कर्त्ता है कि हे देवते मेरे शत्रुके सर्व अंगोंको विदीर्ण कर विशेष करके हृदयकों विदीर्ण कर नाड़ीकों तोड शिरका नाश कर ऐसें तीन प्रकारसें मेरा शत्रु नष्ट होवै इति। तहां

संशय है कि इन प्रविध्यादि मंत्रोंका उपनिषद् विद्याके विषै उपसंहार करना वा नहीं तहां कहते हैं कि नहीं करना काहेतें इन मंत्रोंके हृदयवेधादि अर्थ भिन्न हैं तिनका उपनिषद् विद्याके साथ सम्बन्ध नहीं॥२५॥

हानौतूपायनशब्दशेषत्वात्कुशाच्छन्दः स्तुत्युपगानवत्तदुक्तम् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके हानौ १ तु २ उपायनशब्दशेषत्वात् ३ कुशाच्छन्दःस्तुत्युपगानवत् ४ तत् ५ उक्तम् ६ यह छेह पद हैं॥ विद्वान् अपनें पुण्यपापकों त्यागके शुद्ध होके परब्रह्मकों प्राप्त होता है ऐसें अथर्ववेदमें पुण्यपापका हान कहा है हाननाम त्यागका है औ विद्वान्के जो प्रिय हैं सो तिसके पुण्यकों ग्रहण करते हैं अप्रिय हैं सो पापकों ग्रहण करते हैं ऐसें कौषीतकी शाखामें पुण्यपापका उपायन कहा है उपायन नाम ग्रहणका है तहां संशय है कि अथर्वमें हानका श्रवण है उपायनका नहीं तहां उपायनका सन्निपात करना वा नहीं तहां कहते हैं कि करना काहेतें हानशब्दका शेष उपायनशब्द है ऐसें कौषीतकीरहस्यमें कहा है जैसें उद्गाता अपने स्तोत्र गणनेके वास्ते काष्ठकी । कुशा । शलाका अपने समीप रखता है सो कुशा कहीं अविशेष करके वनस्पतिमात्रकी कही है परंतु कहीं विशेष करके उदुम्बरकी कही है तहां उदुम्बरकीही ग्रहण करनी औ जैसें नव अक्षरका आसुरछन्द है तिसतें अन्य देवछन्द है तिनका अविशेष करके पौर्वापर्यके प्रसंगमें देवछन्द पूर्व है ऐसें पैङ्गी वाक्यसें विशेष ग्रहण है औ जैसें षोडशीकर्मका अंगभूतस्तोत्र पढना ऐसें अविशेषकालकी प्रहरमें सूर्योदयमें पढना ऐसें विशेषकालका ग्रहण है औ जैसें अविशेष करके सर्व ऋत्विककों उपगानकी प्राप्तिमें अध्वर्युसें भिन्न ऋत्विक् उपगान करें यह विशेष ग्रहण है तैसें प्रकरणमें भी जानना चाहिये ॥ २६ ॥

साम्परायेकर्तव्याभावात्तथाह्यन्ये ॥ २७ ॥

इस सूत्रके साम्पराये १ कर्तव्याभावात् २ तथा ३ हि ४ अन्ये ५ यह पांच पद हैं ॥ कौषीतकी शाखावाले कहते हैं कि जब विद्वान् मरके देवयानमार्ग करके ब्रह्मलोकको जाता है तब मार्गके मध्यमें विरजानाम नदी आती है तिसको मन करके ही तरता है औ उहांही पुण्य पापको दूर करता है इति तहां संशय है कि विद्वान्के पुण्यपाप विरजामें दूर होते हैं वा देह त्यागसें पहिलेंही दूर होते हैं इति तहां कहते हैं कि पहिलेंही दूर होते हैं काहेतें मृत विद्वान्को मार्गके विषे पुण्यपापसें कुछ कर्तव्य नहीं ऐसेंहीं अन्य शाखावाले कहते हैं ॥ २७ ॥

छन्दतउभयाविरोधात् ॥ २८ ॥

इस सूत्रके छन्दतः १ उभयाविरोधात् २ यह दो पद हैं ॥ मार्गके मध्यमें विद्वान्के पुण्य पापका नाश मानना सर्वथा असंगत है काहेतें पुण्यपापके नाशक जो यमनियमादि साधन तिनका इच्छापूर्वक अनुष्ठान देहके पडे पीछे नहीं हो सकता औ देहपातके पूर्वही विद्वान्के पुण्यपापका नाश होता है ऐसें ताण्डीश्रुति औ शाट्यायनी श्रुति कहती हैं तिनके साथ विरोध होवैगा औ जो देहपातसें पूर्वही पुण्यपापका नाश मानों तो विरोध नहीं ॥ २८ ॥

गतेरर्थवत्त्वमुभयथाऽन्यथाहिविरोधः ॥ २९ ॥

इस सूत्रके गतेः १ अर्थवत्त्वम् २ उभयथा ३ अन्यथा ४ हि ५ विरोधः ६ यह छेह पद हैं ॥ सगुण विद्याके विषे पुण्यपापके हानकी सन्निधिमें देवयानमार्गका श्रवण है औ निर्गुण विद्याके विषै नहीं है तहां संशय है कि सगुण निर्गुण दोनोंही विद्यामें हान तो है परंतु देवयान मार्गका उपसंहार दोनों विद्यामें है वा कहीं है कहीं नहीं है इति तहां कहते हैं कि सगुणमें है निर्गुणमें नहीं ऐसा माननेसेंही देवयान

मार्ग अर्थवाला होसकता है अन्यथा जो श्रुति पुण्यपापके त्यागपूर्वक विद्वान्की परब्रह्मके साथ एकता कहती है तिसके साथ विरोध होवैगा काहेतें निर्गुण विद्यामें देवयानमार्गकी अपेक्षा नहीं ॥ २९ ॥

उपपन्नस्तल्लक्षणार्थोपलब्धेर्लोकवत् ॥ ३० ॥

इस सूत्रके उपपन्नः १ तल्लक्षणार्थोपलब्धेः २ लोकवत् ३ यह तीन पद हैं ॥ सगुणविद्यामें देवयानमार्ग है औ निर्गुणमें नहीं यही मानना ठीक है काहेतें पर्यंकविद्याके विषै कहा है कि सगुणका उपासक देवयानमार्ग करके ब्रह्मलोककों जाता है औ ब्रह्माके साथ पर्यंकपर बैठके संवाद करता है औ दिव्य गंधादिकोंको भोगता है इति औ निर्गुणका उपासक कहीं जाता नहीं इसीसें देवयानमार्गकी अपेक्षा नहीं औ इस लोकमें भी यह वार्त्ता प्रसिद्ध है कि किसी ग्राम जानेंवालेकों मार्गकी अपेक्षा होती है दूसरेकों नहीं ॥ ३० ॥

अनियमः सर्वासामविरोधः शब्दानुमानाभ्याम् ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके अनियमः १ सर्वासाम् २ अविरोधः ३ शब्दानुमानाभ्याम् ४ यह चार पद हैं ॥ सगुणविद्यामें भी पर्यंकविद्या पंचाग्निविद्या उपकोसलविद्या दहरविद्या इनके विषै देवयानमार्गका श्रवण है औ मधुविद्या शाण्डिल्यविद्या षोडशकलविद्या वैश्वानरविद्याके विषै नहीं है तहां संशय है कि जिस विद्यामें देवयानमार्ग कहा है तिसीमें तिसकों जानना यह नियम है वा अनियमसे सर्व सगुण विद्याके विषै जानना इति तहां कहते हैं कि सर्वही सगुणविद्या ब्रह्मलोककों प्राप्तकरनेंवाली हैं तिन सर्वके विषै ही देवयानमार्ग जानना ऐसैंही श्रुति स्मृति कहती हैं इसीसें कोई विरोध नहीं ॥ ३१ ॥

सगुणविद्याका ब्रह्मलोक फल कहा औ निर्गुण विद्याका मुक्ति फल कहा सो ठीक नहीं काहेतें इतिहास पुराणादिकोंके विषै तत्त्वज्ञानीके जन्मका श्रवण है जैसें अपान्तरतमाः नाम वेदाचार्य विष्णुकी

आज्ञासैं कलि द्वापरकी सन्धिमें कृष्णद्वैपायन होता भया औ ब्रह्माका मानसपुत्र वसिष्ठ निमिराजाके शापसैं पूर्वदेहको त्यागके ब्रह्माकी आज्ञासैं मित्रावरुणके सकाशसैं उत्पन्न होताभया ऐसैं भृगु सनत्कुमार दक्ष नारदादिकोंके जन्मका भी श्रवण है इस शंकाका समाधान कहते हैं ३१

यावदधिकारमवस्थितिराधिकारिकाणाम् ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके यावदधिकारम् १ अवस्थितिः २ आधिकारिकाणाम् ३ यह तीन पद हैं ॥ लोकस्थितिका हेतु जो वेदप्रवर्त्तनादिक अधिकार है तिनके विषे परमेश्वर करके अपान्तरतम वसिष्ठ भृगु नारदादिक नियुक्त हैं इसीसैं जितनेंकाल अधिकार है उतनेकाल वसिष्ठादिकोंकी स्थिति रहेगी ॥ ३२ ॥

अक्षरधियांत्ववरोधःसामान्यतद्भावाभ्यामौपसदवत्तदुक्तम् ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके अक्षरधियां १ तु २ अवरोधः ३ सामान्यतद्भावाभ्याम् ४ औपसदवत् ५ तत् ६ उक्तम् ७ यह सात पद हैं ॥ अक्षरब्रह्म न स्थूल है न अणु है न ह्रस्व है न दीर्घ है ऐसैं वाजसनेयी शाखामें अक्षरब्रह्मके विषे स्थूलतादि द्वैतका निषेध किया है तहां संशय है कि जिस शाखामें स्थूलतादिद्वैतकी निषेधबुद्धि होती है तहांही तिस बुद्धिकों जाननी चाहिये वा सारे ही सर्वनिषेध बुद्धिका उपसंहार करना तहां कहते हैं कि सारे सर्व निषेध बुद्धिका उपसंहार करना काहेतें सारे ही अद्वय ब्रह्मका प्रतिपादन समान है जैसें उपसद कर्मके विषे उद्गाताके वेदमें स्थित पुरोडाश प्रदानमंत्रोंका अध्वर्युके साथ संबंध होता है तैसें इहां भी सर्वनिषेधबुद्धिका अक्षरब्रह्मके साथ संबंध है ॥ ३३ ॥

इयदामननात् ॥ ३४ ॥

इस सूत्रका इयदामननात् १ यह एकही समस्त पद है॥अथर्व वेदमें

अध्यात्मअधिकारके विषै । द्वासुपर्णा सयुजासखाया । इत्यादिमंत्र कहा है औ कठवल्लीके विषै । ऋतंपिबन्तौ सुकृतस्य लोके । इत्यादि मंत्र कहा है तहां संशय है कि यह विद्या एक है वा नाना हैं तहां कहते हैं कि एक हैं काहेतें इन दोनों मंत्रोंमें इयत्ता करके परिच्छिन्न द्वित्वसंख्यावाला वेद्यरूप एकही है परिच्छिन्न परिमाणका नाम इयत्ता है ॥ ३४ ॥

अन्तरा भूतग्रामवत्स्वात्मनः ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके अन्तरा १ भूतग्रामवत् २ स्वात्मनः ३ यह तीन पद हैं ॥ वाजसनेयी शाखामें याज्ञवल्क्यके प्रति उषस्ति ब्राह्मणका प्रश्न है कि हे याज्ञवल्क्य जो साक्षात् अपरोक्ष ब्रह्म है औ जो सर्वके अन्तर आत्मा है सो मेरेप्रति कहो इति । औ यही प्रश्न कहोल ब्राह्मणका है तहां संशय है कि इन दोनों ब्राह्मणोंमें एकविद्या है वा नाना हैं तहां कहते हैं कि एक है काहेतें जैसें श्रुति कहती है कि एक देव सर्वभूतोंके विषै गूढ है सर्वव्यापी है सर्वका अन्तर आत्मा है इति तैसें इहांभी दोनोंको सर्वान्तरत्वकी अनुपपत्ति होनेतें एकही अपना आत्मा सर्वान्तरात्मा है इसीसें विद्या एक है ॥ ३५ ॥

अन्यथाभेदानुपपत्तिरितिचेन्नोपदेशान्तरवत् ॥ ३६ ॥

इस सूत्रके अन्यथा १ भेदानुपपत्तिः २ इति ३ चेत् ४ न ५ उपदेशान्तरवत् ६ यह छेह पद हैं॥ जो दोनों ब्राह्मणोंमें एकही विद्या है तो प्रश्नका भेद न होना चाहिये अर्थात् एकही प्रश्न होना चाहिये । इति चेन्न । ऐसें न कहा काहेतें जैसें श्वेतकेतुके प्रति नौवेर तत्त्वमसि महावाक्यका उपदेश है परंतु विद्या एक है तैसें इहां भी प्रश्न दो हैं परंतु विद्या एकही है ॥ ३६ ॥

व्यतिहारोविशिंषन्तिहीतरवत् ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके व्यतिहारः १ विशिंषन्ति २ हि ३ इतरवत् ४

यह चार पद हैं ॥ इहां जीव ईश्वरके विशेषण विशेष्यभावका नाम व्यातिहार है ऐतरेय उपनिषद्में कहा है कि जो मैं हों सो यह ईश्वर है औ जो यह ईश्वर है सो मैं हों इति तहां संशय है कि इहां व्यातिहार करके उभयरूप मति करनी वा एकरूप मति करनी तहां कहते हैं कि व्यतिहार करके उभयरूप मति करनी काहेतें जैसें ध्यानके वास्ते ईश्वरके सर्वात्मत्वादि गुण कहे हैं तैसेंहीं ध्यानके वास्ते व्यतिहार कहा है ऐसें ओर जगह भी व्यतिहारका श्रवण होता है कि तूं है सो मैं हों औ मैं हों सो तूं है इति ॥ ३७ ॥

सैवहिसत्त्यादयः ॥ ३८ ॥

इस सूत्रके सा १ एव २ हि ३ सत्त्यादयः ४ यह चार पद हैं॥वाजसनेयीशाखामें सबसें पहिलें उत्पन्न होनेवाले सत्यब्रह्म हिरण्यगर्भकी जो कोई उपासना करे सो अच्छे लोकको प्राप्त होता है ऐसें नामाऽक्षरकी उपासना कही है सत्य इसनाममें स १ त् २ त्य ३ यह तीन अक्षर हैं औ तिसके अनन्तर । तद्यत्तत्सत्यम् । इत्यादि श्रुतिमें कहा है कि जो यह मंडलके विषै औ दक्षिण नेत्रके विषै पुरुष है सो सत्य है इति तहां संशय है कि यह सत्यविद्या दो हैं वा एक है तहां कहते हैं कि एक है काहेतें तद्यत् तत् इन पदों करके पूर्वोक्त सत्यादिगुणविशिष्ट ब्रह्मकाही आकर्षण किया है ॥३८

कामादीतरत्रतत्रचायतनादिभ्यः ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके कामादि १ इतरत्र २ तत्र ३ च ४ आयतनादिभ्यः ५ यह पांच पद हैं ॥ छान्दोग्यमें हृदयरूप ब्रह्मपुरके विषै अन्तराकाशरूप आत्माकों कहके तिसके सत्यकामत्व सत्यसंकल्पत्वादिगुण कहे हैं औ वाजसनेयीशाखामें हृदयाकाशके विषै आत्माकों कहके तिसके सर्ववशित्वादिगुण कहे हैं तहां संशय है कि यह विद्या एक औ सत्यकामत्वादिगुणोंका परस्परमें योग है वा नहीं तहां कहते हैं कि

विद्या एक है औ सत्यकामत्वादिगुणका वाजसनेयीशाखामें योग करना औ सर्ववशित्वादि गुणका छान्दोग्यमें योग करना काहेतें दोनों स्थलोंमें हृदयस्थान समान है औ तिसमें जाननें योग्य ईश्वर भी समान है ॥ ३९ ॥

आदरादलोपः ॥ ४० ॥

इस सूत्रके आदरात् १ अलोपः २ यह दो पद हैं ॥ छान्दोग्यमें वैश्वानरविद्यामें कहा है कि जो भोजनके वास्ते पैहिलें स्थालीमें वा पत्तलादिकोंमें अन्न प्राप्त होवै तिसका प्राणाग्निमें होम करना प्रथम आहुति प्राणायस्वाहा इस मंत्रसें होमनी ऐसें पांच आहुति होमनी इति तहां संशय है कि भोजनका लोप होनेंतें प्राणाग्निहोत्रका लोप होता है वा नहीं तहां पूर्वपक्षी कहता है कि नहीं होता काहेतें वैश्वानरविद्याके विषे जाबाल श्रुति प्राणाग्निहोत्रका आदर कहती है भोजनका लोप होवे तो भी प्रतिनिधि न्यायसें जल करके वा अन्य किसी अविरुद्धद्रव्य करके प्राणाग्निहोत्रका अनुष्ठान करना ॥ ४० ॥

उपस्थितेऽतस्तद्वचनात् ॥ ४१ ॥

इस सूत्रके उपस्थिते १ अतः २ तद्वचनात् ३ यह तीन पद हैं ॥ सिद्धान्ती कहता है कि जो अन्न भोजनके वास्ते प्रथम प्राप्त होवै तिस अन्नसें प्राणाग्निहोत्र करना काहेतें श्रुतिने यही नियम किया है जो अन्न भोजनके वास्ते प्रथम प्राप्त होवै तिसीको होमना इति इस नियमसें यह भी जानागया कि भोजनका लोप होनेंतें प्राणाग्निहोत्रका भी लोप है ॥ ४१ ॥

तन्निर्धारणानियमस्तद्दृष्टेः पृथग्घ्यप्रतिबन्धःफलम् ॥ ४२ ॥

इस सूत्रके तन्निर्धारणानियमः १ तद्दृष्टेः २ पृथक् ३ हि ४ अप्रतिबन्धः ५ फलम् ६ यह छेह पद हैं॥ ओं इस अक्षरकी उद्गीथरूप करके

उपासना करनी इत्यादि विज्ञान कर्मांगके आश्रित हैं तहां संशय है कि यह विज्ञान कर्मके विषे नित्य हैं वा अनित्य हैं तहां कहते हैं कि अनित्य हैं काहेतें तिनके निर्धारणका नियम नहीं औ श्रुति भी कहती है कि जो ओं इस अक्षरको रसतमत्वादिरूप करके जानता है औ जो नहीं जानता है सो दोनोंहीं पुरुष कर्म करते हैं औ दोनोंकेही पृथक् कर्मके फलकी सिद्धिका अप्रतिवन्ध है जो जानता है तिसको अधिक फल होता है औ जो नहीं जानता है तिसको न्यूनफल होता है ॥ ४२ ॥

प्रदानवदेवतदुक्तम् ॥ ४३ ॥

इस सूत्रके प्रदानवत् १ एव २ तत् ३ उक्तम् ४ यह च्यार पद हैं ॥ वाजसनेयीशाखामें वागादि सर्वके विषै अध्यात्मरूप प्राणको श्रेष्ठ कहाहै औ छान्दोग्यमें अग्न्यादिसर्वके विषै अधिदैवरूप वायुकों श्रेष्ठ कहा है तहां संशय है कि, प्राणकों औ वायुकों भिन्न जानना वा अभिन्न जानना तहां कहते हैं कि, भिन्न जानना काहेतें जैसें इंद्रदेवता एकही है परंतु राज १अधिराज २ स्वराज ३ इन गुणोंके भेदसें तिसका भेद है औ तिसके अर्थ पुरोडाश प्रदानका भी भेद है तैसें इहां भी ध्यानके वास्ते अध्यात्म अधिदैवका विभाग होनें तें प्राणका औ वायुका भेद है ॥ ४३ ॥

लिङ्गभूयस्त्वात्तद्धि बलीयस्तदपि ॥ ४४ ॥

इस सूत्रके लिङ्गभूयस्त्वात् १ तत् २ हि ३ बलीयः ४ तत् ५ अपि६ यह छेह पद हैं॥ अग्निरहस्य ब्राह्मणके विषै वाजसनेयी कहते हैं कि, मनुष्यकी सो वर्षकी आयु है तिसके अन्तर्गत छत्तीसहजार अहो- रात्र हैं तिन करके अविच्छिन्न छत्तीसहजार मनकी वृत्ति हैं यद्यपि मनकी वृत्ति बहुत हैं तथापि छत्तीसहजारकीही गणना करते हैं तिन अपनी वृत्तियोंकों मन है सो अग्निरूप करके देखताभया ऐसेंहीं वाग-

दिक अपनी अपनी वृत्तियोंको अग्निरूप करके देखतेभये इति तहां संशय है कि यह वृत्ति यज्ञका अंग हैं वा स्वतंत्र केवल विद्यारूप हैं तहां कहते हैं कि केवल विद्यारूप हैं काहेतें इस अग्निरहस्य ब्राह्मणके विषे बहुतसे लिङ्ग केवल विद्याकोंहीं कहते हैं औ प्रकरणसैं लिङ्ग बलवान् होता है ऐसैं पूर्वकांडके विषै जैमिनि आचार्यने कहा है॥४४॥

पूर्वविकल्पःप्रकरणात्स्यात् क्रियामानसवत् ॥ ४५ ॥

इस सूत्रके पूर्वविकल्पः १ प्रकरणात २ स्यात् ३ क्रियामानसवत् ४ यह च्यार पद हैं॥ पूर्वपक्षी कहता है कि यह मनोवृत्तिरूप अग्नि हैं सो केवल विद्यारूप नहींहैं किंतु इनके पूर्व क्रियारूप अग्निका प्रकरण होनेतैं तिसीके विकल्पविशेषका उपदेश है औ जो यह कहा कि प्रकारणसैं लिङ्ग बलवान् होता है सो कहना ठीक है परंतु इहां लिङ्ग बलवान् नहीं है औ जैसैं द्वादशरात्र कर्मके विषै दशमें दिन मानसग्रहकी कल्पना करते हैं तिस मानसग्रहके पूर्वक्रियाका प्रकरण होनेतैं मानसग्रह भी क्रियाका शेष है तैसैं इहां भी जानना चाहिये ॥ ४५ ॥

अतिदेशाच्च ॥ ४६ ॥

इस सूत्रके अतिदेशात् १ च २ यह दो पद हैं॥ यह मनोवृत्तिरूप छत्तीसहजार अग्नि हैं तिनके विषै एक एक अग्नि क्रिया अग्निके सदृश है इस अतिदेशसैं यही निश्चय भया कि यह मनोवृत्तिरूप अग्नि क्रियाका अंग है ॥ ४६ ॥

विद्यैवतुनिर्धारणात् ॥ ४७ ॥

इस सूत्रके विद्या १ एव २ तु ३ निर्धारणात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृत्तिके अर्थ है सिद्धान्ती कहता है कि यह मनोवृत्तिरूप अग्नि स्वतंत्र केवल विद्यारूप हैं क्रियाका अंग नहीं ऐसा श्रुति करके निर्धारण है ॥ ४७ ॥

दर्शनाच्च ॥ ४८ ॥

इस सूत्रके दर्शनात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ इन मनोवृत्तिरूप अग्नियोंकी स्वतंत्रताका बोधक लिङ्ग भी दीखता है सो लिङ्गभूयस्त्वात् तद्धिबलीयस्तदपि इस सूत्रके विषे दिखाया है ॥ ४८ ॥

प्रकरणकी सामर्थ्यसैं स्वतंत्रपक्षका बाध होनेंतैं मनोवृत्तिरूप अग्नि क्रियाके अंग हैं इस शंकाका उत्तर कहते हैं सूत्रकार ॥

श्रुत्यादिबलीयस्त्वाच्च न बाधः ॥ ४९ ॥

इस सूत्रके श्रुत्यादिबलीयस्त्वात् १ च २ न ३ बाधः ४ यह च्यार पद हैं ॥ प्रकरणकी सामर्थ्यसैं स्वतंत्रपक्षका बाध नहीं हो सकता काहेतैं स्वतंत्रपक्षकों कहनेंवाले श्रुति लिङ्ग वाक्य यह तीनों प्रकरणसैं बलवान् हैं ॥ ४९ ॥

अनुबन्धादिभ्यः प्रज्ञान्तरपृथक्त्व-
वत्दृष्टश्चतदुक्तम् ॥ ५० ॥

इस सूत्रके अनुबन्धादिभ्यः १ प्रज्ञान्तरपृथक्त्ववत् २ दृष्टः ३ च ४ तत् ५ उक्तम् ६ यह छेह पद हैं ॥ अनुबन्धादिकोंसैं प्रकरणकों बाधके मनोवृत्तिरूप अग्नि स्वतंत्र हैं संपत्के वास्ते जो उपासना तिस उपासनाके वास्ते मनोवृत्तिके विषे क्रियाके अंगकों जोडनेंका नाम अनुबन्ध है ऐसैंहीं श्रुति कहती है कि अग्निका आधान इष्टकाका चयन पात्रका ग्रहण इत्यादि जो यज्ञके कर्म हैं सो सर्व मनोमय करना इति औ जैसैं शाण्डिल्यविद्यादिरूप प्रज्ञान्तर क्रियासैं भिन्न हैं तैसैं मनोवृत्तिरूप अग्नि भी क्रियासैं भिन्न हैं क्रियाका अंग नहीं ऐसैंहीं पूर्वकांडकी श्रुतिमें दीखता है ॥ ५० ॥

नसामान्यादप्युपलब्धेर्मृत्युवन्नहिलोकापत्तिः ॥ ५१ ॥

इस सूत्रके न १ सामान्यात् २ अपि ३ उपलब्धेः ४ मृत्युवत् ५

न ६ हि ७ लोकापत्तिः ८ यह आठ पद हैं॥ जो यह कहा कि जैसें द्वादशरात्र कर्मके विषै दशमें दिन मानसग्रहकी कल्पना करते हैं सो मानसग्रह क्रियाका अंग है तैसें मनोवृत्तिरूप अग्निभी क्रियाका अंग है सो कहना ठीक नहीं काहेतें पूर्वोक्त श्रुत्यादिरूप हेतुसें मनोवृत्तिरूप अग्निकी केवल विद्यारूपसें उपलब्धि है औ जैसें वेदमें आदित्यकों औ अग्निकों मृत्यु कहे हैं यद्यपि इन दोनोंके विषै मृत्यु शब्दका प्रयोग समान है तथापि यह दोनों अत्यंत सम नहीं औ यह भी कहा है कि यह लोक अग्नि है तिसका आदित्य इंधन है परंतु इंधनकी समानतासें इस लोककों अग्निभावकी प्राप्ति नहीं तैसें मानसग्रहकी यत्किंचित् समानतासें मनोवृत्तिरूप अग्नि क्रियाके अंग नहीं ॥ ५१ ॥

परेणचशब्दस्यताद्विध्यंभूयस्त्वात्त्वनुबन्धः ॥ ५२ ॥

इस सूत्रके परेण १ च २ शब्दस्य ३ ताद्विध्यं ४ भूयस्त्वात् ५ तु ६ अनुबन्धः ७ यह सात पद हैं ॥ पूर्व उत्तर ब्राह्मणोंके विषै स्वतंत्र विद्याका विधान होनेतें मध्यब्राह्मणके विषैभी स्वतंत्रविद्याका विधानहीं शब्दका प्रयोजन है । प्रश्न । जो मनोवृत्तिरूप अग्नि क्रियाका अंग नहीं तो क्रिया अग्निके साथ तिनका पाठ क्यों है । उत्तर । विद्यामें अग्निके बहुत अवयवोंका संपादन करना इसीसें क्रिया अग्निके साथ तिनका अनुबन्ध है क्रियाका अंग मानके नहीं ॥ ५२ ॥

एकआत्मनःशरीरेभावात् ॥ ५३ ॥

इस सूत्रके एके १ आत्मनः २ शरीरे ३ भावात् ४ यह च्यार पद हैं॥ बन्धमोक्षकी सिद्धिके वास्ते देहसें पृथक् आत्माके सद्भावका विचार करते हैं देहात्मवादी लोकायतिक चार्वाक कहते हैं कि देहसें न्यारा आत्मा नहीं है काहेतें प्राण चेष्टा चेतनत्व स्मृत्यादिक आत्माके धर्म हैं सो देहके होतेही होते हैं औ देहके न होते नहीं होते हैं इसीसें देहके धर्म हैं औ देहका नाम ही आत्मा है और कोई आत्मा नहीं ॥ ५३ ॥

व्यतिरेकस्तद्भावाभावित्वान्नतूपलब्धिवत् ॥ ५४ ॥

इस सूत्रके व्यतिरेकः १ तद्भावाभावित्वात् २ न ३ तु ४ उपलब्धिवत् ५ यह पांच पद हैं ॥ सिद्धान्ती कहता है कि देह आत्मा नहीं है किंतु देहसैं आत्मा जुदा है काहेतैं देहके धर्म रूपादिक मृतदेहके विषै भी रहते हैं औ तिनका दूसरे पुरुषकों ज्ञान होता है औ आत्माके धर्म प्राण चेष्टादिक मृतदेहके विषै नहीं रहते हैं औ न तिनका दूसरे पुरुषकों ज्ञान होता है ॥ ५४ ॥

अङ्गावबद्धास्तुनशाखासुहिप्रतिवेदम्॥ ५५ ॥

इस सूत्रके अङ्गावबद्धाः १ तु २ न ३ शाखासु ४ हि ५ प्रतिवेदम् ६ यह छेह पद हैं ॥ उद्गीथाऽवयव ओंकारमें प्राण दृष्टि करनी उकथाख्य शस्त्रमें पृथिवी दृष्टि करनी इष्टकाचित अग्निमें लोक दृष्टि करनी ऐसैं उद्गीथादि कर्मोंके अंगके आश्रित उपासना कही है तहां संशय है कि जिस वेदकी शाखामें जो उपासना कही है सो उहांहीं जाननी वा सर्व उपासना सर्वशाखामें जाननी तहां कहते हैं कि जो उपासना जिस शाखामें कही है सो वहांहीं नहीं जाननी किंतु सर्व उपासना सर्वशाखामें जाननी काहेतैं उद्गीथादि श्रुति सर्वत्र समान हैं ॥ ५५ ॥

मन्त्रादिवद्वाऽविरोधः॥ ५६ ॥

इस सूत्रके मंत्रादिवत् १ वा २ अविरोधः ३ यह तीन पद हैं ॥ अथवा मंत्रादिकोंकी न्याईं अविरोध है जैसैं अन्यशाखागत जो मंत्र कर्मगुण तिनका शाखान्तरमें उपसंहार होता है तैसैं अन्यशाखागत उद्गीथादि कर्ममें शाखान्तरगत उपासनाका उपसंहार जानना चाहिये ॥ ५६ ॥

भूम्नःक्रतुवज्ज्यायस्त्वंतथाहिदर्शयति॥ ५७ ॥

इस सूत्रके भूम्नः १ क्रतुवत् २ ज्यायस्त्वं ३ तथा ४ हि ५ दर्शयति ६

यह छेह पद हैं॥ कैकेय देशके अश्वपति नाम राजाके समीप प्राचीनशालको आदिलेके छः ऋषि विद्याके वास्ते जातभये तिस आख्यायिकामें व्यस्त समस्त वैश्वानरकी उपासनाका श्रवणहै द्युलोकादि प्रत्येक अवयवके विषे वैश्वानरकी उपासना व्यस्तउपासना है औ सर्व अवयवके विषे समस्तउपासना है तहां संशय है कि व्यस्त समस्त दोनों उपासना करनी वा समस्तही करनी तहां कहते हैं कि जैसें दर्श पूर्णमासादियज्ञमें सर्व अंगसहित प्रधान एकही प्रयोग श्रेष्ठ है तैसें भूमा वैश्वानरकी समस्तउपासनाही श्रेष्ठ है ऐसैंही श्रुति कहती है ॥ ५७ ॥

नानाशब्दादिभेदात् ॥ ५८ ॥

इस सूत्रका नानाशब्दादिभेदात् १ यह एकही समस्त पद है ॥ जो यह कहा कि वैश्वानरकी समस्त उपासना श्रेष्ठहै तहां ऐसी बुद्धि होती है कि औरभी जो भिन्नभिन्न श्रुतिके विषे ईश्वर प्राणादिकोंकी उपासना कही हैं सो समस्तही श्रेष्ठ हैं काहेतें यद्यपि उपासनाकी प्रतिपादक श्रुति अनेक हैं तथापि उपासनाके योग्य ईश्वर एक है औ प्राणभी एक है तहां कहते हैं कि उपास्यका अभेद है परंतु उपासनाका भेद है काहेतें नाना शब्दका भेद होनेतें कर्मका भेद है औ कर्मका भेद होनेतें उपासनाका भेद है ॥ ५८ ॥

विकल्पोऽविशिष्टफलत्वात् ॥ ५९ ॥

इस सूत्रके विकल्पः १ अविशिष्टफलत्वात् २ यह दो पद हैं॥ विद्याका स्वरूप कहके अब अनुष्ठान प्रकार कहते हैं जो यह विद्या कही हैं तिनका समुच्चय जानना वा समुच्चय विकल्प दोनों जाननें वा विकल्पही जानना एक विद्यामें दूसरी विद्याको मिलानेका नाम समुच्चय है औ नहीं मिलानेका नाम विकल्प है तहां कहते हैं कि विकल्पही जानना काहेतें यह जो अहंग्रह विद्या हैं तिनका उपास्य ईश्वरादिकों

का साक्षात्काररूप फल एकही है जहां एकविद्यासें साक्षात्कार होवै तहां दूसरी निरर्थक है ॥ ५९ ॥

काम्यास्तुयथाकामंसमुच्चीयेरन्नवापूर्वहेत्वभावात् ६० ॥

इस सूत्रके काम्याः १ तु २ यथाकामं ३ समुच्चीयेरन् ४ न ५ वा ६ पूर्वहेत्वभावात् ७ यह सात पद हैं ॥ यह वायु दिशाका वत्स है ऐसें जो पुरुष उपासना करता है सो पुत्रमरणनिमित्त रोदनको नहीं पाताहै इत्यादि काम्यविद्या कही हैं तिनका समुच्चय उपासक अपनी इच्छासें करे वा नहीं करे इसमें कोई पूर्व हेतु नहीं कहा है॥ ६० ॥

अङ्गेषुयथाश्रयभावः ॥ ६१ ॥

इस सूत्रके अङ्गेषु १ यथाश्रयभावः २ यह दो पद हैं॥ वेदत्रयके विषै कर्मके अङ्ग जो उद्गीथादि तिनके आश्रित जो उपासना तिनका समुच्चय करना वा नहीं तहां पूर्वपक्षी कहता है कि जैसें क्रतुके अनुष्ठानमें तदाश्रित अंगोंके समुच्चयका नियम है तैसें अंगोंके अनुष्ठानमें तदाश्रित उपासनाक समुच्चयकाभी नियम है ॥ ६१ ॥

शिष्टेश्च ॥ ६२ ॥

इस सूत्रक शिष्टेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ जैसें वेदत्रयमें कर्मके अंग स्तोत्रादिकोंका विधान है औ समुच्चय है तैसें अंगाश्रित उपासनाका भी विधान है औ समुच्चय है ॥ ६२ ॥

समाहारात् ॥ ६३ ॥

इस सूत्रका समाहारात् १ यह एकही पद है ॥ ऋग्वेदीयोंके जो प्रणव है सोई सामवेदीयोंके उद्गीथ है छान्दोग्यमें प्रणव उद्गीथका एकही ध्यान कहा है जब उद्गाता स्वरादिउच्चारणके प्रमादसें अपने उद्गीथकों सदोष देखता है तब होताके कर्मसें तिसका अनुसमाहार करता है अर्थात् तिसको अनुसमाहार करके निर्दोष करता है काहेतें

उद्गीथ प्रणवका ध्यान एक है यह समाहार भी उपासनाके समुच्चयमें हेतु है ॥ ६३ ॥

गुणसाधारण्यश्रुतेश्च ॥ ६४ ॥

इस सूत्रके गुणसाधारण्यश्रुतेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ विद्याका गुणभूत ओंकार वेदत्रयके विषै साधारण है औ ओंकार करकेही वेद त्रयका कर्म प्रवर्त्त होता ह औ ओंकारके आश्रित जो उपासना हैं तिनका समुच्चय है ॥ ६४ ॥

नवातत्सहभावाश्रुतेः ॥ ६५ ॥

इस सूत्रके न १ वा २ तत्सहभावाश्रुतेः ३ यह तीन पद हैं ॥ सिद्धान्ती कहता है कि अंगाश्रित उपासनाके समुच्चयका नियम नहीं है काहेतें जैसें वेदत्रयविहित स्तोत्रादि अंगोंके सहभावका श्रवण है तैसें अंगाश्रित उपासनाके सहभावका श्रवण नहीं है ॥ ६५ ॥

दर्शनाच्च ॥ ६६ ॥

इस सूत्रके दर्शनात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ उपासनाके समुच्चयका नियम नहीं काहेतें श्रुति कहती है कि यज्ञके विषै ऋग्वेदादिविहित अंगका लोप होवै तो व्याहृतिहोम प्रायश्चित्तादि विज्ञानवाला ब्रह्मा है सो यज्ञ यजमान ऋत्विज इन सर्वकी रक्षा करे इति जो उपासनाका समुच्चय होवै तो सर्वही सर्वविज्ञानवाले होवैं तब ब्रह्मा किसकी रक्षा करे उपासककी इच्छासें समुच्चय वा विकल्प है एकका नियम नहीं ॥ ६६ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां तृतीयाध्यायस्य तृतीयःपादः ॥ ३ ॥

तृतीयाध्याये चतुर्थः पादः।

पुरुषार्थोऽतःशब्दादितिबादरायणः ॥ १ ॥

इस सूत्रके पुरुषार्थः १ अतः २ शब्दात् ३ इति ४ बादरायणः ५ यह पांच पद हैं ॥ आत्मज्ञान अधिकारीद्वारा कर्मके विषे प्रवेश करता है वा स्वतंत्र पुरुषार्थकों सिद्ध करता है तहां सिद्धान्ती कहता है कि वेदान्तविहित स्वतंत्र आत्मज्ञानसैं पुरुषार्थकी सिद्धि होती है ऐसैं बादरायण आचार्य मानता है काहेतैं। तरतिशोकमात्मवित्। इत्यादि श्रुति केवल आत्मज्ञानकों पुरुषार्थका हेतु कहती हैं ॥ १ ॥

शेषत्वात्पुरुषार्थवादोयथाऽन्येष्वितिजैमिनिः ॥ २ ॥

इस सूत्रके शेषत्वात् १ पुरुषार्थवादः २ यथा ३ अन्येषु ४ इति ५ जैमिनिः ६ यह छेह पद हैं ॥ आत्माकों कर्त्ता होनेंत कर्मका शेष है औ तिसका ज्ञानभी व्रीहिप्रोक्षणादिकोंकी न्याईं विषयद्वारा कर्मके साथ सम्बन्धको प्राप्त होता है औ जैसैं। यस्यपर्णमयीजुहूर्भवतिनसपापंश्लोकंशृणोति ॥ यह अर्थवाद है तैसैं पुरुषार्थवाद भी अर्थवाद है ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है। जिसके पर्णमयी जुहू होती है सो पापरूपी श्लोक अर्थात् अपकीर्तिकों नहीं सुनता है इति श्रुत्यर्थः ॥ २ ॥

आचारदर्शनात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रका आचारदर्शनात् १ यह एकही समस्त पद है ॥ जनक अश्वपति उद्दालक व्यास याज्ञवल्क्य इनकों आदिलेके ब्रह्मवेत्ता गृहस्थाश्रममें रहके यज्ञादिकर्मकों करते भये इससैं यही निश्चय भया कि केवल ज्ञानसैं पुरुषार्थकी सिद्धि नहीं होसकती ॥ ३ ॥

तच्छ्रुतेः ॥ ४ ॥

इस सूत्रका तच्छ्रुतेः १ यह एकही पद है ॥ श्रुति कहती है

विद्याकरके श्रद्धाकरके जो कर्म होता है सो वीर्यवत्तर होता है इससैं यही जाना गया कि केवल विद्या पुरुषार्थका हेतु नहीं किंतु विद्या कर्मका शेष है ॥ ४ ॥

समन्वारम्भणात् ॥ ५ ॥

इस सूत्रका समन्वारम्भणात् १ यह एकही पद है ॥ फलके आरम्भमें विद्या कर्म इन दोनोंके सहभावका श्रवण होनेतें विद्या स्वतंत्र नहीं है श्रुति कहती है कि जब पुरुष परलोकको जाता है तब विद्या कर्म यह दोनों तिसके संगही जाते हैं ॥ ५ ॥

तद्वतोविधानात् ॥ ६ ॥

इस सूत्रके तद्वतः १ विधानात् २ यह दो पद हैं ॥ श्रुति कहती है कि जो आचार्यकुलमें वेदका अध्ययन करे गुरुकी शुश्रुषा करे पीछे व्रतका विसर्जन करके दाराकों ग्रहण करे कुटुंबमें स्थितरहे पवित्रदेशमें वेदका अध्ययन करताहुआ वेदविहितकर्मकों यथाशक्ति करे सो ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है इससैं भी यही जानागया कि सर्व वेदार्थके ज्ञानवाले पुरुषकों कर्मका अधिकार है स्वतंत्र विद्याफलका हेतु नहीं है ॥ ६ ॥

नियमाच्च ॥ ७ ॥

इस सूत्रके नियमात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ केवल विद्या फलका हेतु नहीं है किंतु विद्या कर्मका शेष है काहेतें । कुर्वन्नेवेह कर्माणि । इत्यादि श्रुति नियम करती है कि विहितकर्मको करताहुआ सौ वर्ष जीवनेकी इच्छा करे ॥ ७ ॥

अधिकोपदेशात्तुबादरायणस्यैवंतद्दर्शनात् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके अधिकोपदेशात् १ तु २ बादरायणस्य ३ एवं ४ तद्दर्शनात् ५ यह पांच पद हैं ॥ तुशब्द पूर्वपक्षकी निवृ-

त्तिके अर्थ है जो यह कहा कि कर्मका शेष हानत पुरुषार्थवाद अर्थवाद है सो कहना ठीक नहीं काहेतैं संसारी जीवात्मासैं अधिक असंसारी ईश्वरात्माका वेदान्तमें उपदेश है औ ईश्वरात्माका ज्ञान कर्मका प्रवर्तक नहीं किंतु कर्मका उच्छेदक है औ। यःसर्वज्ञःसर्ववित्। इत्यादि श्रुति जीवात्मासैं ईश्वरात्माकों अधिक कहती है इसीसैं। पुरुषार्थोऽतः शब्दात्। यह बादरायण आचार्यका मत ही समीचीन है ॥ ८ ॥

तुल्यंतुदर्शनम् ॥ ९ ॥

इस सूत्रके तुल्यं १ तु २ दर्शनम् ३ यह तीन पद हैं ॥ जो यह कहा कि आचारदर्शनसैं विद्या कर्मका शेष है सो कहना समीचीन नहीं है काहेतैं विद्या कर्मका शेष नहीं है इस अर्थमें भी आचार दर्शन तुल्य है श्रुति कहती है कि ब्राह्मण हैं सो पुत्रेषणा वित्तैषण लोकैषणासैं दूर होके भिक्षाटन करतेभये इति औ याज्ञवल्क्यादिकोंके सन्यासका श्रवण होनेतैं विद्या कर्मका शेष नहीं है ॥ ९ ॥

असार्वत्रिकी ॥ १० ॥

इस सूत्रका असार्वत्रिकी १ यह एकही पद है ॥ जो श्रुति विद्या करके करे कर्मकों वीर्यवत्तर कहती है तिस श्रुतिका सर्व विद्याके साथ सम्बन्ध नहीं है किंतु प्रकृत उद्गीथविद्याके साथ ही तिसका सम्बन्ध है ॥ १० ॥

विभागःशतवत् ॥ ११ ॥

इस सूत्रके विभागः १ शतवत् २ यह दो पद हैं ॥ जो यह कहा कि जब पुरुष परलोककों जाता है तब विद्या कर्म यह दोनों तिसके संगही जाते हैं सो कहना ठीक नहीं काहेतैं इहां विभाग जानना चाहिये जैसैं किसीनें कहा कि इन दो पुरुषोंकों सो

रुपैये देओ तब पचास एककों औ पचास दूसरेकों देतेहैं तैसें इहां भी इच्छावाले संसारीपुरुषके संग कर्म जाता है औ इच्छारहित मुमुक्षुपुरुषके संग विद्या जाती है ऐसें जानना चाहिये ॥ ११॥

अध्ययनमात्रवतः ॥ १२ ॥

इस सूत्रका अध्ययनमात्रवतः १ यह एकही पद है ॥ जो यह कहा कि आचार्यकुलमें वेदका अध्ययन करके पीछे गृहस्थाश्रममें रहके कर्मकों करे सो कहना अध्ययनमात्रवाले पुरुषके प्रति है औ जिस पुरुषकों वेदके अर्थका ज्ञान है तिसके प्रति नहीं है ॥ १२ ॥

नाविशेषात् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके न १ अविशेषात् २ यह दो पद हैं ॥ कुर्वन्नेवेह कर्माणि। इत्यादिनियम श्रवणके विषै विशेष करके विद्वान्कों कर्म करनेका नियम नहीं किंतु अविशेष करके नियमका विधान है ॥ १३ ॥

स्तुतयेऽनुमतिर्वा ॥ १४ ॥

इस सूत्रके स्तुतये १ अनुमतिः २ वा ३ यह तीन पद हैं ॥ कुर्वन्नेवेहकर्माणि इहां और भी विशेष कहते हैं यद्यपि प्रकरणके सामर्थ्यसें विद्वान्का कर्मके साथ सम्बन्ध है तथापि यह विद्याकी स्तुतिके वास्ते कर्मका अनुज्ञान कहा है ॥ १४॥

कामकारेणचैके ॥ १५ ॥

इस सूत्रके कामकारेण १ च २ एके ३ यह तीन पद हैं ॥ प्रत्यक्ष है विद्याका फल जिनके ऐसे कोई विद्वान् फलान्तरके साधन प्रजादिकोंके विषै प्रयोजनका अभाव कहते हैं औ कहते हैं कि अपनी इच्छासें कर्म प्रजादिकोंका त्याग करना चाहिये ॥ १५ ॥

उपमर्दञ्च ॥ १६ ॥

इस सूत्रके उपमर्द १ च २ यह दो पद हैं ॥ कर्माधिकारका हेतु औ क्रियाकारकका फलरूप औ अविद्याका कार्य जो सर्वप्रपंच तिसके स्वरूपका उपमर्द विद्याके सामर्थ्यसैं होता है ऐसैं श्रुति कहती है इससैं यही निश्चय भया कि विद्या स्वतंत्र है कर्मका शेष नहीं ॥ १६ ॥

ऊर्ध्वरेतःसुचशब्देहि ॥ १७ ॥

इस सूत्रके ऊर्ध्वरेतःसु १ च २ शब्दे ३ हि ४ यह च्यार पद हैं ॥ ऊर्ध्वरेत आश्रममें विद्याका ग्रहण है परंतु तहां विद्याकर्मका अंग नहीं काहेतैं ऊर्द्धरेता अग्निहोत्रादि वैदिक कर्मकों नहीं करते हैं । शंका। ऊर्द्धरेताके आश्रमका वेदमें श्रवण नहीं है । समाधान। वैदिकशब्दोंमें ऊर्द्धरेताके आश्रमका श्रवण है कि, अरण्यमें श्रद्धा तपका सेवना औ इस आत्मलोककी इच्छा करके संन्यास धारना औ ब्रह्मचर्यसैं हीं संन्यास धारना यह तीन धर्मके स्कन्ध हैं इति॥१७॥

परामर्शंजैमिनिरचोदनाचापवदतिहि ॥ १८॥

इस सूत्रके परामर्श १ जैमिनिः २ अचोदना ३ च ४ अपवदति ५ हि ६ यह छेह पद हैं ।। त्रयोधर्मस्कन्धा इत्यादि शब्दों सें ऊर्द्धरेताके आश्रमकी सिद्धि नहीं होसकती काहेतैं इन शब्दोंके विषै पूर्व सिद्ध आश्रमोंका परामर्श है विधि नहीं ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है इहां सिद्धवस्तुके कथनका नाम परामर्श है औ इहां कोई चोद-नावाचक शब्द भी नहीं है औ आश्रमान्तरका निषेध भी श्रुति कहती है ॥ १८॥

अनुष्ठेयंबादरायणःसाम्यश्रुतेः ॥ १९ ॥

इस सूत्रके अनुष्ठेयं१ बादरायणः २ साम्यश्रुतेः३ यह तीन पद हैं।।

आश्रमान्तरका अनुष्ठान करना ऐसें बादरायण आचार्य मानता है काहेतें गार्हस्थ्यके परामर्शकी श्रुतिके समानहीं आश्रमान्तरके परामर्शकी त्रयोधर्मस्कन्धा इत्यादि श्रुति है जैसें इहां अन्यश्रुतिविहित गार्हस्थ्यका परामर्श करते हो तैसेंहीं अन्य श्रुतिविहित आश्रमान्तरका त्रयोधर्मस्कन्धा इहां परामर्श करना चाहिये ॥ १९ ॥

विधिर्वाधारणवत् ॥ २० ॥

इस सूत्रके विधिः १ वा २ धारणवत् ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसें महापितृयज्ञके विषे अधस्तात् समिधं धारयन् इत्यादि वाक्यकरके हविषके नीचे समिधका धारण करनेंसेंहीं अधस्तात् इत्यादि वाक्योंको एकवाक्यताकी प्रतीति होती है परंतु अपूर्व होनेंतें ऊपर भी समिधधारणका विधान है तैसें इहां भी परामर्शमात्र नहीं है किंतु आश्रमान्तरकी विधि है इसीसें विद्या स्वतंत्र है कर्मका शेष नहीं ॥ २० ॥

स्तुतिमात्रमुपादानादितिचेन्नापूर्वत्वात् ॥ २१ ॥

इस सूत्रके स्तुतिमात्रम् १ उपादानात् २ इति ३ चेत् ४ न ५ अपूर्वत्वात् ६ यह छेह पद हैं ॥ पृथिवी जल औषधि पुरुष वाक् ऋक् साम इन सर्वसें ओंकाररूप उद्गीथ श्रेष्ठ है औ परब्रह्मकी प्रतीक होनेंतें उपासनाके योग्य है ऐसें श्रुति कहती है तहां संशय हैं कि यह श्रुति उद्गीथादिकोंकी स्तुतिके अर्थ हैं वा उपासनाविधिके अर्थ हैं तहां पूर्वपक्षी कहता है कि कर्मके अंग उद्गीथादिकोंको लेके श्रवण होनेंतें स्तुतिके अर्थ हैं सो कहना ठीक नहीं काहेतें इन श्रुतियोंका स्तुतिमात्र प्रयोजन नहीं है किंतु अपूर्व प्रयोजन है सो अपूर्व उपासना विधिके अर्थ होनेंतेंही सिद्ध होता है ॥ २१ ॥

भावशब्दाच्च ॥ २२ ॥

इस सूत्रके भावशब्दात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ उद्गीथमुपा-

सीत इत्यादि विधिशब्दोंका स्पष्ट श्रवण होनेंतें उद्गीथादि श्रुति उपासना विधिके अर्थ हैं स्तुतिमात्रके अर्थ नहीं हैं ॥ २२ ॥

पारिप्लवार्थाइतिचेन्नविशेषितत्वात् ॥ २३ ॥

इस सूत्रके पारिप्लवार्थाः १ इति २ चेत् ३ न ४ विशेषितत्वात् ५ यह पांच पद हैं ॥ वेदान्तके विषे आख्यानश्रुति कहती हैं कि याज्ञवल्क्यके मैत्रेयी कात्यायनी यह दो भार्या होती भई दिवोदासका पुत्र प्रतर्दन इंद्रके प्रियधाम स्वर्गकों जाताभया जानश्रुति राजा बहुदायी होता भया इति तहां संशय है कि यह श्रुति पारिप्लव प्रयोगके अर्थ हैं वा सन्निहित विद्याकी प्राप्तिके अर्थ हैं इति अश्वमेधयज्ञमें पुत्र अमात्यादिसहित राजाके अर्थ नाना विद्याके आख्यानका कथन करनेंका नाम पारिप्लवप्रयोग है तहां पूर्वपक्षी कहताहै कि आख्यानका कथन होनें तें यह श्रुति पारिप्लवप्रयोगके अर्थ हैं सो कहना ठीक नहीं काहेतें जो श्रुति पारिप्लवप्रयोगके अर्थ हैं तिनके विषे मनुर्वैवस्वतो राजा यमोवैवस्वतः वरुण आदित्य इत्यादि विशेषणोंका श्रवण है औ इहां इन विशेषणोंका श्रवण है नहीं इसीसें सन्निहितविद्याकी प्राप्तिके अर्थ हैं ॥ २३ ॥

तथाचैकवाक्यतोपबन्धात् ॥ २४ ॥

इस सूत्रके तथा १ च २ एकवाक्यतोपबन्धात् ३ यह तीन पद हैं ॥ सन्निहितविद्याके साथ एकवाक्यताका सम्बन्ध होनेंतें आख्यानसन्निहितविद्याके प्रतिपादक हैं मैत्रेयी ब्राह्मणके विषे आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः इस विद्याके साथ आख्यानकी एकवाक्यता है औ प्रतर्दनके आख्यानकी प्राणोऽस्मि प्रज्ञात्मा इस विद्याके साथ एकवाक्यता है ऐसें और भी जानलेना ॥ २४ ॥

अतएवचाग्नीन्धनाद्यनपेक्षा ॥ २५ ॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ च ३ अग्नीन्धनाद्यनपेक्षा ४ यह चार

पद हैं ॥ विद्याको पुरुषार्थका हेतु होनेतैं अपने फलकी सिद्धिके वास्ते आश्रमके कर्म अग्नि इन्धनादिकोंकी अपेक्षा नहीं करती ॥ २५ ॥

सर्वापेक्षाचयज्ञादिश्रुतेरश्ववत् ॥ २६ ॥

इस सूत्रके सर्वापेक्षा १ च २ यज्ञादिश्रुतेः ३ अश्ववत् ४ यह च्यार पद हैं ॥ विद्याकों आश्रमक कर्मकी सर्वथा अपेक्षा नहीं है वा कोई अपेक्षा है तहां कहते हैं कि जैसैं अश्वकों हलके जुतनेंकी योग्यता नहीं है औ रथके जुतनेंकी योग्यता है तैसैं विद्याको अपनें फलकी सिद्धिके वास्ते कोई कर्मकी अपेक्षा नहीं है औ अपनी सिद्धिके वास्ते सर्वकर्मकी अपेक्षा है काहेतैं यज्ञादि श्रुति कहती है कि ब्राह्मण हैं सो वेदानुवचन करके यज्ञ करके दान करके तप करके तिस ब्रह्मकों जानते हैं ॥ २६ ॥

शमदमाद्युपेतःस्यात्तथापितुतद्विधेस्तद-
ङ्गतयातेषामवश्यानुष्ठेयत्वात् ॥ २७ ॥

इस सूत्रके शमदमाद्युपेतः १ स्यात् २ तथा ३ अपि ४ तु ५ तद्विधेः ६ तदङ्गतया ७ तेषाम् ७ अवश्यानुष्ठेयत्वात् ९ यह नौ पद हैं ॥ विधिका अभाव होनेतैं विद्याके साधन यज्ञादिक नहीं हैं औ यज्ञेन विविदिषन्ति यह श्रुति विद्याकी स्तुति करती है ऐसैं कोई कहे तो विद्याकी इच्छावाला शम दमादिकोंका ग्रहण करे काहेतैं शमदमादिक विद्याके साधन कहे हैं तिनका अनुष्ठान अवश्य करना चाहिये औ गीतास्मृतिमें यज्ञादिक विद्याके साधन कहे हैं तिनका अनुष्ठान भी करना चाहिये यज्ञादिक बहिरंग साधन हैं और शमादिक अन्तरंग साधन हैं ॥ २७ ॥

सर्वान्नानुमतिश्चप्राणात्ययेतद्दर्शनात् ॥ २८ ॥

इस सूत्रके सर्वान्नानुमतिः १ च २ प्राणात्यये ३ तद्दर्शनात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ छान्दोग्यमें औ वाजसनेयीशाखामें प्राणसंवादके

विषे श्रवण होताहै कि जो प्राणकों जानता है तिसके सर्व अन्न भक्ष्य हैं तहां संशय है कि यह सर्व अन्नका अनुज्ञान है सो शमादिकोंकी न्याई विद्याका अंग है वा विद्याकी स्तुतिके अर्थ है तहां कहते हैं कि विद्याकी स्तुतिके अर्थ है काहेतें प्राणनाशक आपत्कालके विना अभक्ष्य भक्षण करना योग्य नहीं औ इस अर्थके विषे चाक्रायण ऋषिकी आख्यायिका है सो ऐसें है कि एकसमें कुरुक्षेत्रके विषै दुर्भिक्ष होताभया तब चाक्रायण ऋषि अपनी भार्या करके सहित देशांतरमें भ्रमता हुआ इभ्य ग्राममें वसताभया तहां हस्तिके ऊपर चढनेवाले महावतके उच्छिष्ट माष खाताभया जब महावत जलपान देने लगा तब ऋषि बोला कि तेरा उच्छिष्ट जल मेरे पीनें योग्य नहीं जब महावत बोला कि यह माष क्या उच्छिष्ट नहीं थे तब ऋषि बोला कि हां उच्छिष्ट थे परंतु यह मै नहीं खाता तो मेरे प्राण नहीं रहते औ जल तडागादिकोंके विषै बहुत है तहां जलपान करांगा इति इस आख्यायिकासैं भी यही निश्चय भया कि आपत्कालके विना अभक्ष्यका भक्षण नहीं करना ॥ २८ ॥

अबाधाच्च ॥ २९ ॥

इस सूत्रके अबाधात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ जो अभक्ष्यभक्षण न करे तो। आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः। आहारकी शुद्धि होनेतें अन्तःकरणकी शुद्धि होती है इत्यादि भक्ष्यअभक्ष्यके विभागकों कहनेंवाले शास्त्रका भी बाध न होवै ॥ २९ ॥

अपिचस्मर्यते ॥ ३० ॥

इस सूत्रके अपि १ च २ स्मर्यते ३ यह तीन पद हैं॥ स्मृति कहती है कि आपत्कालके विषै विद्वान् वा अविद्वान् जहां तहां सर्व अन्न भक्षण करे तो भी जैसें कमलका पत्र जलसैं लिपायमान नहीं होता है

तैसें पापसें लिपायमान नहीं होता है परंतु ब्राह्मण कोई भी कालके विषै सुरापान न करे ॥ ३० ॥

शब्दश्चातोऽकामकारे ॥ ३१ ॥

इस सूत्रके शब्दः १ च २ अतः ३ अकामकारे ४ यह च्यार पद हैं ॥ ब्राह्मण अपनी इच्छासें सुरापान न करे ऐसा शब्द भी कठसंहिताके विषै है औ जो ब्राह्मण सुरापान करे तो मरणांतप्रायश्चित्तके विना शुद्ध नहीं होवै ॥ ३१ ॥

विहितत्वाच्चाश्रमकर्मापि ॥ ३२ ॥

इस सूत्रके विहितत्वात् १ च २ आश्रमकर्म ३ अपि ४ यह च्यार पद हैं ॥ पूर्व यह कहा कि आश्रमके कर्म विद्याके साधन हैं तहां संशय है कि जो पुरुष मुमुक्षु नहीं है औ आश्रमम निष्ठ है तिसकरके यह कर्म अनुष्ठेय हैं वा नहीं तहां कहते हैं कि अनुष्ठेय हैं काहेतें जितने जीवे उतनें अग्निहोत्र करे ऐसें श्रुति नित्यकर्मका विधान करती है ३२

सहकारित्वेनच ॥ ३३ ॥

इस सूत्रके सहकारित्वेन १ च २ यह दो पद हैं ॥ जो ऐसें कहै कि अमुमुक्षु पुरुष आश्रमके कर्मका अनुष्ठान करेगा तो यह कर्म विद्याके साधन न रहेंगे सो कहना ठीक नहीं काहेतें श्रुति करके विहित होनेतें आश्रमके कर्म विद्याके सहकारी हैं ॥ ३३ ॥

सर्वथापितएवोभयलिङ्गात् ॥ ३४ ॥

इस सूत्रके सर्वथा १ अपि २ ते ३ एव ४ उभयलिङ्गात् ५ यह पांच पद हैं ॥ सर्वप्रकार करके आश्रमधर्मपक्षमें औ विद्या सहकारी पक्षमें तिन अग्निहोत्रादिधर्मोंका अनुष्ठान करना काहेतें इन दोनोंको विधान करनेंवाले श्रुति स्मृतिरूप हेतु हैं ॥ ३४ ॥

अनभिभवञ्चदर्शयति ॥ ३५ ॥

इस सूत्रके अनभिभवं १ च २ दर्शयति ३ यह तीन पद हैं ॥ जो पुरुष ब्रह्मचर्यादि साधन करके संपन्न हैं तिसका रागद्वेषादि क्लेश करके तिरस्कार नहीं होता ऐसैं श्रुति कहती है इससैं यही सिद्धभया कि आश्रमके कर्म विद्याके सहकारी हैं ॥ ३५ ॥

अन्तराचापितुतद्दृष्टेः ॥ ३६ ॥

इस सूत्रके अन्तरा १ च२अपि ३ तु ४ तद्दृष्टेः५ यह पांच पद हैं॥ जो द्रव्यादिसंपत् करके हीन हैं औ आश्रम करके हीन हैं ऐसे मध्यवर्त्ती पुरुषोंकों विद्याका अधिकार है वा नहीं तहां कहते हैं कि विद्याका अधिकार है काहेतें आश्रमहीन रैक्क गार्गीको आदि लेके ब्रह्मवेत्ता भये हैं ऐसैं श्रुति कहती है ॥ ३६ ॥

अपिचस्मर्यते ॥ ३७ ॥

इस सूत्रके अपि १ च २ स्मर्यते ३ यह तीन पद हैं ॥ संवर्त्तादिक नग्नचर्याकों धारण करतभये औ किसी भी आश्रमका कर्म नहीं करते भये परंतु तिनको इतिहास स्मृतिमें महायोगी कहे हैं ॥ ३७ ॥

विशेषानुग्रहश्च ॥ ३८ ॥

इस सूत्रके विशेषानुग्रहः १ च २ यह दो पद हैं ॥ यद्यपि रैक्क गार्गी संवर्त्तादिक किसी आश्रमके कर्मकों नहीं करतेथे तथापि पुरुषमात्रके संबंधि जप उपवास देवताऽऽराधनादिधर्मविशेष करके तिनके ऊपर विद्याका अनुग्रह होताभया ॥ ३८ ॥

अतस्त्वितरज्ज्यायोलिङ्गाच्च ॥ ३९ ॥

इस सूत्रके अतः १ तु २ इतरत् ३ ज्यायः ४ लिङ्गात्५ च ६ यह छेह पद हैं ॥ इस मध्यवर्तीसैं आश्रमवर्त्ती श्रेष्ठ है काहेतें श्रुति कहती है कि अपने आश्रम विहित कर्मकों करनेवाला ज्ञानमार्ग करके

ब्रह्मकों प्राप्त होताहै औ स्मृति भी कहती है कि द्विज एक दिन भी अनाश्रमी न रहे औ जो संवत्सरपर्यंत अनाश्रमी रहे तो एक कृच्छ्र-चान्द्रायणव्रत करनेसैं शुद्ध होवै ॥ ३९ ॥

तद्भूतस्यनातद्भावोजैमिनेरपिनियमा-
त्तद्रूपाभावेभ्यः ॥ ४० ॥

इस सूत्रके तद्भूतस्य१ न २ अतद्भावः ३ जैमिनेः ४ अपि ५नियमात् ६ तद्रूपाभावेभ्यः ७ यह सात पद हैं ॥ जो पूर्व यह कहा कि ऊर्द्ध्वरेताके आश्रम हैं तहां संशय है कि जो जिस आश्रमकों प्राप्त होता है तिसका तिस आश्रमसैं पतन होता है वा नहीं तहां कहते हैं कि जो ऊर्द्ध्वरेतोभावकों प्राप्त भया है तिसका पतन नहीं होता काहेतैं आचार्यकी आज्ञासैं च्यारों आश्रमों में सैं कोइसे एक आश्रममें शरीरपातपर्यंत यथाविधि रहे यह नियम पतनके अभावकों कहता है औ ब्रह्मचर्यके अनंतर गृही होवै वा संन्यासी होवै इत्यादि वचन पतनके अभावकों कहते हैं यह जैमिनि औ बादरायणका एकही प्रामाणिक मत है॥४०॥

नचाधिकारिकमपिपतनानुमानात्तदयोगात् ॥४१ ॥

इस सूत्रके न १ च २ अधिकारिकम् ३ अपि ४ पतनानुमानात् ५ तदयोगात्६यह छेह पद हैं ॥जो नैष्ठिक ब्रह्मचारी प्रमादसैं योनिके विषै वीर्यका सेचन करे तो तिसका प्रायश्चित्त है वा नहीं है तहां पूर्वपक्षी कहता है कि नहीं है काहेतैं शास्त्र कहता है कि जो नैष्ठिक धर्मकों प्राप्त होके पतित होवै तो तिस आत्महापुरुषकी शुद्धिके वास्ते कोइ प्रायश्चित्त नहीं है इति ॥ ४१ ॥

उपपूर्वमपित्वेकेभावमशनवत्तदुक्तम् ॥ ४२ ॥

इस सूत्रके उपपूर्वम् १ अपि २ तु३ एके ४ भावम् ५ अशनवत्६ तत्७ उक्तम्८यह आठ पद हैं ॥ सिद्धान्ती कहता है कि गुरुदारादि-

कोंके विना अन्ययोनिके विषै जो ब्रह्मचारीके वीर्यका त्याग है सो महापातक नहीं किंतु उपपातक है ऐसें कोई आचार्य मानते हैं औ तिसका प्रायश्चित्त भी मानते हैं जैसें मांसभक्षण करनेसें ब्रह्मचारीके व्रतका लोप होता है औ पीछे संस्कार करनेसै तिसकी शुद्धि होती है तैसें इहां भी जानलेना ॥ ४२ ॥

बहिस्तूभयथापिस्मृतेराचाराच्च ॥ ४३ ॥

इस सूत्रके बहिः १ तु २ उभयथा ३ अपि ४ स्मृतेः ५ आचारात् ६ च ७ यह सात पद हैं ॥ जो ऊर्द्धरेताका अपने आश्रमसें पतन है सो महापातक है वा उपपातक है दोनों ही प्रकारसें शिष्टलोग तिनकों पंक्तिके बाहिर करें ऐसें स्मृति कहती है औ यज्ञ अध्ययन विवाहादि कार्य तिनके साथ न करे यह शिष्टोंका आचार है ॥ ४३ ॥

स्वामिनःफलश्रुतेरित्यात्रेयः ॥ ४४ ॥

इस सूत्रके स्वामिनः १ फलश्रुतेः २ इति ३ आत्रेयः ४ यह चार पद हैं ॥ यज्ञादि कर्मके अंगोंकी उपासनाके विषै संशय है कि यह उपासना यजमानका कर्म है वा ऋत्विक्का कर्म है तहां पूर्वपक्षी कहता है कि यजमानका कर्म है काहेतें उपासनाके फलका श्रवण कर्त्ताके विषै होता है ऐसें आत्रेय आचार्य मानता है ॥ ४४ ॥

आर्त्विज्यमित्यौडुलोमिस्तस्मैहिप रिक्रीयते ॥ ४५ ॥

इस सूत्रके आर्त्विज्यम् १ इति २ औडुलोमिः ३ तस्मै ४ हि ५ परिक्रीयते ६ यह छेह पद हैं ॥ सिद्धान्ती कहता है कि यज्ञादिकर्मके अंगोंकी उपासना यजमानका कर्म नहीं है किन्तु ऋत्विक्का कर्म है ऐसें औडुलोमि आचार्य मानता है काहेतें अंगसहित कर्मके वास्तेही यजमान ऋत्विक्का ग्रहण करता है ॥ ४६ ॥

श्रुतेश्च ॥ ४६ ॥

इस सूत्रके श्रुतेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ श्रुति कहती है कि यज्ञके विषै जो कोई आशीर्वाद ऋत्विक् कहता है सो यजमानके वास्ते कहता है इति इससैं यही निश्चय भया कि उपासना ऋत्विक्का कर्म है औ जिसका फल यजमानकों होता है ॥ ४६ ॥

सहकार्यन्तरविधिःपक्षेणतृतीयंतद्वतो विध्यादिवत् ॥ ४७ ॥

इस सूत्रके सहकार्यन्तरविधिः १ पक्षेण २ तृतीयं ३ तद्वतः ४ विध्यादिवत् ५ यह पांच पद हैं ॥ बृहदारण्यमें श्रवण होता है कि, जो ब्राह्मण पाण्डित्यकों प्राप्त होके बाल्यकों प्राप्त होता है औ बाल्यकों प्राप्त होके मौनकों प्राप्त होता है सो ब्रह्मकों प्राप्त होता है इति इहां पाण्डित्य बाल्य मौन यह क्रमसैं श्रवण मनन निदिध्यासनका नाम जानना तहां संशय है कि मौनकी विधि है वा नहीं तहां कहते हैं कि मौनकों विद्याका सहकारी होनें तैं विद्यावाले सन्यासीकों पाण्डित्य बाल्यकी अपेक्षासैं इस तृतीय मौनका विधान है । प्रश्न । मौनविधिका क्या प्रयोजन है । उत्तर । जैसैं दर्शपूर्णमास विधिके विषै सहकारी होनें तैं अग्नि आधानादि अङ्गका विधान है तैसैं जिस पक्षमें भेद दर्श- नकी प्रबलतासैं ब्रह्मकी प्राप्ति न होवै तिस पक्षमें मौनका विधान है ॥ ४७ ॥

जो बाल्यादिविशिष्टसन्यासही अनुष्ठेय है तो छान्दोग्यमें गृहीका उपसंहार क्यों किया है इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

कृत्स्नभावात्तु गृहिणोपसंहारः ॥ ४८ ॥

इस सूत्रके कृत्स्नभावात् १ तु २ गृहिणा ३ उपसंहारः ४ यह च्यार पद हैं ॥ कृत्स्नभाव गृहीके प्रति विशेष है अर्थात् बहुत परिश्रम

करके सिद्ध होनेंवाले यज्ञादिकर्मका उपदेश गृहीके प्रति होनेतैं गृहीक उपसंहार किया है औ अन्य आश्रममें अहिंसा इन्द्रियसंयमादि धर्म कहे हैं॥ ४८ ॥

मौनवदितरेषामप्युपदेशात् ॥ ४९ ॥

इस सूत्रके मौनवत् १ इतरेषाम् २ अपि ३ उपदेशात् ४ यह चार पद हैं ॥ जैसें। मौन संन्यास औ गार्हस्थ्य यह दो आश्रम श्रुति करके विहित हैं तैसें वानप्रस्थ औ गुरुकुलमें वास यह दो आश्रम भी श्रुति करके विहित हैं ॥ ४९ ॥

अनाविष्कुर्वन्नन्वयात् ॥ ५० ॥

इस सूत्रके अनाविष्कुर्वन् १ अन्वयात् २ यह दो पद हैं ॥ पूर्व यह कहा कि ब्राह्मण पाण्डित्यकों प्राप्त होके बाल्यकों प्राप्त होवै तहां संशय है कि पुरुषकी प्रथम अवस्थाका नाम भी बाल्य है जैसें बालक जहां तहां मूत्रपुरीष करता है औ भक्ष्याभक्ष्य करता है ऐसा बाल्य लेना चाहिये वा दंभ दर्प प्ररूढ इन्द्रियादिकों सें रहित होना ऐसा बाल्य लेना चाहिये तहां कहते हैं कि ज्ञान अध्ययन धार्मिकत्वादिकोंसें अपनें आत्माको प्रगट न करै औ दंभ दर्प प्ररूढइन्द्रियत्वादिकोंसें रहित रहे ऐसा बाल्य विवक्षित है ॥ ५० ॥

ऐहिकमप्यप्रस्तुतप्रतिबन्धेतद्दर्शनात् ॥ ५१ ॥

इस सूत्रके ऐहिकम् १ अपि २ अप्रस्तुतप्रातिबन्धे ३ तद्दर्शनात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ सर्वापेक्षाचयज्ञादिश्रुतेः इस सूत्रको आदि लेके विद्याके साधन कहे तहां संशय है कि इन साधनोंसें इसी जन्ममें विद्याकी उत्पत्ति होती है वा जन्मान्तरमें होती है तहां कहते हैं कि जो इस जन्ममें कोई प्रतिबन्धक न होवै तो इसी जन्ममें विद्याकी उत्पत्ति होवै औ जो प्रतिबन्धक होवै तो जन्मान्तरमें होवै ऐसें श्रुति स्मृति कहती हैं ॥ ५१ ॥

एवंमुक्तिफलानियमस्तदवस्थावधृते-
स्तदवस्थावधृतेः ॥ ५२ ॥

इस सूत्रके एवं १ मुक्तिफलानियमः २ तदवस्थावधृतेः ३ तदवस्थावधृतेः ४ यह चार पद हैं ॥ मुक्तिफलके विषे कोई विशेष नियम नहीं है काहेतें सर्व वेदान्तके विषे एक ब्रह्मस्वरूप मुक्तिअवस्थाका अवधारण है औ इस सूत्रमें तदवस्थावधृतेः इस पदका दो वेर अभ्यास है सो इस साधनाध्यायकी समाप्तिकों द्योतन करता है ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्यंयमुनानाथपूज्यपादशिष्यश्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां तृतीयाध्यायस्य चतुर्थःपादः ॥ ४ ॥

इति तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ३.

चतुर्थोऽध्यायः ४.

प्रथमः पादः ।

आवृत्तिरसकृदुपदेशात् ॥ १ ॥

इस सूत्रके आवृत्तिः १ असकृत् २ उपदेशात् ३ यह तीन पद हैं ॥ तृतीय अध्यायके विषै साधनका विचार किया अब चतुर्थ अध्यायके विषै प्रथम साधनविशेषका विचार करके फलका विचार करते हैं । आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्यासितव्यः । अस्या अर्थः । याज्ञवल्क्य कहताभया कि अरे मैत्रेयि आत्मा श्रवण करनें योग्य है मनन करनें योग्य है निदिध्यासन करनें योग्य है जाननें योग्य है इति । तहां संशय है कि श्रवणमननादिकोंका एकवेर अनुष्ठान करना वा वारंवार करना तहां कहते हैं कि वारंवार करना काहेतें श्रोतव्यो मंतव्य इत्यादि वारंवार उपदेश है ॥ १ ॥

लिङ्गाच्च ॥ २ ॥

इस सूत्रके लिङ्गात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ उद्गीथादिलिङ्गसें भी श्रवणादिकोंकी आवृत्ति जाननी जैसें उद्गीथकी ध्यानकी आवृत्ति कहीहै तैसें श्रवण मनन निदिध्यासनकी भी आवृत्ति कही है ॥ २ ॥

आत्मेतितूपगच्छन्तिग्राहयन्तिच ॥ ३ ॥

इस सूत्रके आत्मा १ इति २ तु ३ उपगच्छन्ति ४ ग्राहयन्ति ५ च ६ यह छेह पद हैं ॥ ध्यानकालके विषै अहंब्रह्म ऐसा ध्यान करना वा मेरेसैं अन्य मेरा स्वामी ईश्वर है ऐसा ध्यान करना तहां कहतेहैं कि अहं ब्रह्म ऐसा ध्यान करना काहेतें परमेश्वर प्रक्रियाके विषैं जाबाल आत्मरूप करकेही ईश्वरका अंगीकार करतेहैं औ तत्त्वमसि अहंब्रह्मास्मि इत्यादि महावाक्यभी जीवात्मा परमात्माकी एकताकों ग्रहण करातेहैं ॥ ३ ॥

नप्रतीकेनहिसः ॥ ४ ॥

इस सूत्रके न १ प्रतीकेन २ हि ३ सः ४ यह च्यार पद हैं ॥ जैसें अहंग्रह उपासनाके विषै आत्मबुद्धि करतेहैं तैसें मनो ब्रह्मेत्युपासीत आकाशो ब्रह्म इत्यादि प्रतीक उपासनाके विषै आत्मबुद्धि करनी वा नहीं करनी तहां कहतेहैं कि नहीं करनी काहेतें यह मन आकाशादिक ब्रह्मके विकार हैं तिनकी आत्माके साथ एकता बनें नहीं ॥ ४ ॥

ब्रह्मदृष्टिरुत्कर्षात् ॥ ५ ॥

इस सूत्रके ब्रह्मदृष्टिः १ उत्कर्षात् २ यह दो पद हैं॥ तिन उदाहरणोंके विषै औरभी संशय है कि मन आकाश आदित्य इत्यादिकोंकी दृष्टि ब्रह्मके विषै करनी वा ब्रह्मकी दृष्टि इनके विषै करनी तहां कहतेहैं कि ब्रह्मकी दृष्टि इनके विषै करनी काहेतें उत्कृष्टकी दृष्टि निकृष्टके विषै होती है जैसें लोकमें कदाचित् राजाकी दृष्टि दासमें करतेहैं परंतु दासकी दृष्टि राजाके विषै नहीं करते तैसें इहांभी जानना चाहिये ॥ ५ ॥

आदित्यादिमतयश्चाङ्ग उपपत्तेः ॥ ६ ॥

इस सूत्रके आदित्यादिमतयः १ च २ अङ्गे ३ उपपत्तेः ४ यह च्यार पद हैं । यएवासौतपतितमुद्गीथमुपासीत । जो यह आदित्य तपता है तिसकी उद्गीथरूप करके उपासना करनी इत्यादि कर्मके अंगकी उपासना है तहां संशय है कि आदित्यादिकोंके विषै उद्गीथादिकोंकी मति करनी वा उद्गीथादिकोंके विषै आदित्यादिकोंकी मति करनी तहां कहते हैं कि उद्गीथादिकोंके विषै आदित्यादिकोंकी मति करनी काहेतैं जब आदित्यादिमति करके उद्गीथादिक संस्क्रियमाण होते हैं तब कर्मकी समृद्धि होती है ॥ ६ ॥

आसीनः सम्भवात् ॥ ७ ॥

इस सूत्रके आसीनः १ सम्भवात् २ यह दो पद हैं ॥ कर्मका अनुष्ठान बैठके करते हैं औ उठके भी करते हैं इसीसें कर्म औ कर्मके अंगकी उपासनामें बैठनेंका नियम नहीं परंतु और उपासनामें बैठनेंका नियम है वा नहीं तहां कहते हैं कि बैठनेंका नियम है काहेतें समान प्रत्ययके प्रवाहका नाम उपासना है सो बैठनेसैंहीं ठीक होता है उठनेंमें चलनेमें सोनेंमें चित्तविक्षेप निद्रादिक हो जाते हैं ॥ ७ ॥

ध्यानाच्च ॥ ८ ॥

इस सूत्रके ध्यानात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ जो यह समान प्रत्ययका प्रवाह करणरूप उपासना है सो ध्यायति धातुका अर्थ है जैसें लोकमें बको ध्यायति यह प्रयोग होता है तैसें स्थितदृष्टिपूर्वक एक विषयमें जो चित्तकों लगाता है तिसके विषै ध्यायति ऐसा प्रयोग होता है ॥ ८ ॥

अचलत्वञ्चापेक्ष्य ॥ ९ ॥

इस सूत्रके अचलत्वं १ च २ अपेक्ष्य ३ यह तीन पद हैं ॥ ध्यायती-

वपृथिवी इहां पृथिवीके विषै अचलताकी अपेक्षासैं ध्यायति प्रयाग होता है ॥ ९ ॥

स्मरन्तिच ॥ १० ॥

इस सूत्रके स्मरन्ति १ च २ यह दो पद हैं ॥ शुचौदेशेप्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः । इत्यादि वाक्यों करके शिष्ट पुरुष स्मरण करते हैं कि आसन उपासनाका अंग है इसीसैं योगशास्त्रके विषै पद्मादिक आसन कहे हैं ॥ १० ॥

यत्रैकाग्रतातत्राविशेषात् ॥ ११ ॥

इस सूत्रके यत्र १ एकाग्रता २ तत्र ३ अविशेषात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ उपासनाके विषै दिशा देश कालका नियम है वा नहीं तहां कहते हैं कि मनकी एकाग्रता नियम है और कोई विशेष नियम नहीं जिस दिशा देश कालमें मनकी एकाग्रता सुखपूर्वक होवै तिस दिशा देश कालके विषै उपासना करनी ॥ ११ ॥

आप्रायणात्तत्रापिहिदृष्टम् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके आप्रायणात् १ तत्र २ अपि ३ हि ४ दृष्टम् ५यह पांच पद हैं ॥ पूर्व यह कहा कि सर्व उपासनाके विषै आवृत्ति करनी तहां संशय है कि अहंग्रह उपासनाके विषै किंचित्काल आवृत्ति करनी वा मरणपर्यंत करनी तहां कहते हैं कि मरणपर्यंत करनी काहेतें । प्रयाणकाले मनसाऽचलेन । इत्यादि स्मृति मरणपर्यंत ही आवृत्तिकों कहती है ॥ १२ ॥

तदधिगमउत्तरपूर्वाघयोरश्लेषविनाशौतद्व्यपदेशात् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके तदधिगमे १ उत्तरपूर्वाघयोः २ अश्लेषविनाशौ ३ तद्व्यपदेशात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ अब ब्रह्मविद्याके फलका विचार

करते हैं कि ब्रह्मविद्याकी प्राप्ति होनेतैं पापकर्मका क्षय होता है वा नहीं तहां कहते हैं कि ब्रह्मविद्याकी प्राप्ति होनेतैं आगामी पापका संबंध नहीं होता है औ संचित पापका नाश होता है काहेतैं श्रुति कहती है कि । यथा पुष्करपलाशआपोनाश्लिष्यंतएवमेवंविदि पापकर्मनश्लिष्यते । अस्य अर्थः । जैसें कमलपत्रके विषै जल स्पर्श नहीं करते तैसें ब्रह्मवेत्ताके विषै पापकर्म स्पर्श नहीं करते इति ॥ १३ ॥

इतरस्याप्येवमसंश्लेषःपातेतु ॥ १४ ॥

इस सूत्रके इतरस्य १ अपि २ एवम् ३ असंश्लेषः ४ पाते ५ तु ६ यह छेह पद हैं॥ जैसें विद्वान्के विषै पापकर्मका असंबंध विनाश हैं तैसें पुण्यकर्मकाभी असंबंध विनाश जानना काहेतैं पापकी न्याई पुण्यभी मुक्तिका प्रतिबंधक है ऐसें पापपुण्यका संबंध न होनेतैं शरीरपातके अनंतर अवश्य विद्वान्की मुक्ति होती है ॥ १४ ॥

अनारब्धकार्येएवतुपूर्वेतदवधेः ॥ १५ ॥

इस सूत्रके अनारब्धकार्ये १ एव २ तु ३ पूर्वे ४ तदवधेः ५ यह पांच पद हैं । जो यह कहा कि ज्ञानसें पुण्यपापका नाश होता है तहां संशय है कि सर्व पुण्यपापका नाश होता है वा जिस पुण्यपापनें अपने फलका आरम्भ न किया है तिसका होता है तहां कहते हैं कि जिस पूर्वजन्मके वा इस जन्मके कर्मनें फलका आरम्भ नहीं किया है तिसका ज्ञानसें नाश होता है सर्वका नहीं काहेतैं जिस कर्मनें फलका आरम्भ किया है तिसकी शरीरपातपर्यत अवधि है ॥ १५ ॥

अग्निहोत्रादितुतत्कार्यायैवतद्दर्शनात् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके अग्निहोत्रादि १ तु २ तत्कार्याय ३ एव ४ तद्दर्शनात् ५ यह पांच पद हैं ॥ जो अग्निहोत्रादि नित्यकर्म हैं सो ज्ञानका जो कार्य है तिसी कार्यके अर्थ हैं काहेतैं श्रुति कहती है कि ब्राह्मण हैं सो

वेदानुवचन करके यज्ञ करके दान करके तिस परमात्माकों जानते हैं ॥ १६ ॥

अतोऽन्यापिह्येकेषामुभयोः ॥ १७ ॥

इस सूत्रके अतः १ अन्या २ अपि३ हि ४ एकेषाम्५उभयोः६यह छेह पद हैं। इस अग्निहोत्रादि नित्यकर्मसैं औरभी श्रेष्ठ कर्म है तिसकों काम्यकर्म कहते हैं तिसकों लेके कोई शाखावाले कहते हैं कि तिस ज्ञानीके पुत्र दायकों लेते हैं सुहृद् साधु कर्मकों लेते हैं द्वेषी पापकर्मको लेते हैं इति यह काम्यकर्म विद्याका विरोधी है ऐसैं जैमिनि औ बादरायण आचार्य मानते हैं ॥ १७ ॥

यदेवविद्ययेतिहि ॥ १८ ॥

इस सूत्रके यत् १ एव २ विद्यया ३ इति ४ हि ५ यह पांच पद हैं ॥ केवल अग्निहोत्रादि कर्म आत्मविद्याका हेतु हैं वा अपनें अङ्गकी उपासना करके सहित हेतु हैं तहां कहते हैं कि दोनों हीं प्रकारका कर्म आत्मविद्याका हेतु है औ ज्ञानकी उत्पत्तिसैं पूर्व मुमुक्षुपुरुषक करने योग्य है ॥ १८ ॥

भोगेनत्वितरेक्षपयित्वासम्पद्यते ॥ १९ ॥

इस सूत्रके भोगेन १ तु २ इतरे ३ क्षपयित्वा ४ संपद्यते ५ यह पांच पद हैं। जिस पुण्यपापने फलका आरम्भ नहीं किया है तिसका विद्याके सामर्थ्यसैं क्षय होता है ऐसैं पूर्व कहा है औ जिसने फलका आरम्भ किया है तिसका भोगसैं क्षय करके ब्रह्मकों प्राप्त होता है ॥१९॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां चतुर्थाध्यायस्य प्रथमः पादः ॥ १ ॥

चतुर्थाध्याये द्वितीयः पादः ।

वाङ्मनसिदर्शनाच्छब्दाच्च ॥ १ ॥

इस सूत्रके वाक् १ मनसि २ दर्शनात् ३ शब्दात् ४ च ५ यह पांच पद हैं । अपर विद्याके विषै देवयानमार्ग कहनेंकों प्रथम उत्क्रान्तिक्रम कहते हैं श्रुति कहती है कि म्रियमाण पुरुषकी वाक् मनमें लीन होती है मन प्राणमें लीन होता है प्राण तेजमें लीन होता है तेज परदेवतामें लीन होता है इति तहां संशय है कि अपनें स्वरूपसें वाक् मनमें लीन होती है वा वाक्की वृत्ति लीन होती है तहां कहते हैं कि वाक्की वृत्ति लीन होती है काहेतें विद्यमान मनोवृत्तिके विषै वाक्की वृत्तिका उपसंहार दिखताहै औ जो श्रुतिमें वाङ्मनसिसम्पद्यते यह शब्द है सो वाक् औ वृत्तिके अभेदके उपचारकों लेके है ॥ १ ॥

अतएवचसर्वाण्यनु ॥ २ ॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ च ३ सर्वाणि ४ अनु ५ यह पांच पद हैं ॥ वाग्वृत्तिकी न्याईं चक्षुरादिकोंकी वृत्तिभी मनके विषै लीन होती हैं वृत्तिद्वारा सर्व इन्द्रिय मनके पीछे वर्त्तते हैं ॥ २ ॥

तन्मनःप्राणउत्तरात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके तत् १ मनः २ प्राणे ३ उत्तरात् ४ यह च्यार पद हैं ॥ लीन भईहै बाह्य इन्द्रियोंकी वृत्ति जिसमें ऐसा मन है सो अपनी वृत्तिद्वारा प्राणमें लीन होताहै काहेतें उत्तरवाक्यमें कहा है कि जो पुरुष सोता है औ मरता है तिसके मनकी वृत्ति प्राणवृत्तिमें लीन होती है ॥ ३ ॥

सोऽध्यक्षेतदुपगमादिभ्यः ॥ ४ ॥

इस सूत्रके सः १ अध्यक्षे २ तदुपगमादिभ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ प्राण तेजमें लीन होता है वा देह इन्द्रियादि पंजरके स्वामी जीवमें लीन होता है तहां कहते हैं कि सो प्राण अविद्या कर्म वास-

नादि उपाधिवाले जीवमें लीन होताहै काहेतें श्रुति कहती है कि अन्त-कालमें सर्व प्राण जीवके सन्मुख होते हैं ॥ ४ ॥

भूतेष्वतःश्रुतेः ॥ ५ ॥

इस सूत्रके भूतेषु १ अतः २ श्रुतेः ३ यह तीन पद हैं ॥ जो प्राणका जीवमें लय होताहै तो । प्राणस्तेजसि । यह श्रुति तेजमें प्राणका लय क्यों कहती है तहां कहते हैं कि इस श्रुतिका यह अर्थ जानना चाहिये कि प्राण करके संयुक्त जीव है सो देहके कारण जो तेज सहित सूक्ष्म भूत है तिनके विषै स्थित होताहै ॥ ५ ॥

जो यह कहा कि तेजसहित सूक्ष्मभूतोंके विषै प्राणसंयुक्त जीव स्थित होता है सो कहना ठीक नहीं काहेतें । प्राणस्तेजसि । इस श्रुतिके विषै एक तेजमात्रकाही श्रवण है ॥ इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

नैकस्मिन्दर्शयतोहि ॥ ६ ॥

इस सूत्रके न १ एकस्मिन् २ दर्शयतः ३ हि ४ यह च्यार पद हैं ॥ शरीरान्तरकी प्राप्तिकालमें एक तेजके विषैही जीव स्थित नहीं होता है काहेतें कार्यरूपशरीर अनेक भूतोंका है ऐसें श्रुति स्मृति कहती हैं ॥ ६ ॥

समानाचासृत्युपक्रमादमृतत्वञ्चानुपोष्य ॥ ७ ॥

इस सूत्रके समाना १ च २ आसृत्युपक्रमात् ३ अमृतत्वं ४ च ५ अनुपोष्य ६ यह छेह पद हैं ॥ विद्वान् अविद्वान्की उत्क्रान्ति समान है वा विशेष है तहां कहते हैं कि अर्चिरादि मार्गकी प्राप्तिसें पर्व । वाङ्-मनसिसम्पद्यते इत्यादि उत्क्रान्ति दोनोंकी समान है विद्वान् मस्तककी नाड़ीद्वारा अर्चिरादि मार्गकों प्राप्त होता है औ अविद्वान् नहीं होता है इतना विशेष है काहेतें विद्वान् अपर विद्याके सामर्थ्यसें अविद्यादिक सर्व क्लेशकों दग्ध करके अमृतकों प्राप्त होता है परन्तु यह अमृत आपेक्षिक है मुख्य नहीं ॥ ७ ॥

तदापीतेःसंसारव्यपदेशात् ॥ ८ ॥

इस सूत्रके तत् १ आपीतेः २ संसारव्यपदेशात् ३ यह तीन पद हैं ॥ जो श्रुति कहती है कि तेज परदेवतामें लीन होता है तिसका यह तात्पर्य है कि जीव प्राण इन्द्रिय भूतान्तर इन सर्व करके सहित तेज परदेवतामें लीन होता है तहां संशय है कि तेज अपने स्वरूपसैं ही लीन होता है वा सुषुप्ति प्रलयकी न्याईं बीज रूप करके बना रहता है तहां कहते हैं कि श्रुति स्मृतिमें पुनः संसारका कथन होनेतैं जितनें सम्यक् ज्ञान न होवै उतनें बीजरूप करके बनाही रहता है ॥ ८ ॥

सूक्ष्मंप्रमाणतश्चतथोपलब्धेः ॥ ९ ॥

इस सूत्रके सूक्ष्मं १ प्रमाणतः २ च ३ तथा ४ उपलब्धेः ५ यह पांच पद हैं ॥ इस शरीरसैं निकलनेंवाले जीवका आश्रय औ अन्य भूतोंकरके सहित जो तेज है सो सूक्ष्म परिमाणवाला है काहेतैं जब तेज इस शरीरसैं निकलता है तब सूक्ष्मनाडीद्वारा निकलता है इसीसैं समीप बैठे पुरुषकों दिखता नहीं ॥ ९ ॥

नोपमर्देनातः ॥ १० ॥

इस सूत्रके न १ उपमर्दन २ अतः ३ यह तीन पद हैं ॥ सूक्ष्म होनेतैं जब दाहादि निमित्तसैं स्थूल शरीरका उपमर्दन होता है तब सूक्ष्मशरीरका उपमर्दन नहीं होता ॥ १० ॥

अस्यैवचोपपत्तेरेषऊष्मा ॥ ११ ॥

इस सूत्रके अस्य १ एव २ च ३ उपपत्तेः ४ एषः ५ ऊष्मा ६ यह छेह पद हैं ॥ जीवत् शरीरके विषै स्पर्श करनेंसैं जो ऊष्मा जाना जाता है सो ऊष्मा सूक्ष्मशरीरका है इसीसैं मृतशरीरके विषै शरीरके रूपादि गुण विद्यमान भी हैं परंतु ऊष्माका ज्ञान नहीं होता ॥ ११ ॥

प्रतिषेधादितिचेन्नशारीरात् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके प्रतिषेधात् १ इति २ चेत् ३ न ४ शारीरात्५ यह पांच पद हैं ॥ इस पादके सातवें सूत्रमें अनुपोष्य यह पद है तिस करके सूचित भयाकि दग्ध होगये हैं सर्व क्लेश जिसके ऐसे परब्रह्मवेत्ताकी उत्क्रान्ति नहीं होती है इति तहां किसी कारणसैं उत्क्रान्तिकी आशंका करके श्रुति प्रतिषेध करती है कि परब्रह्मवेत्ताके शरीरसैं प्राणोंकी उत्क्रान्ति नहीं होती है किंतु परब्रह्मवेत्ता ब्रह्मरूप होके ब्रह्मकोंहीं प्राप्त होता है इति तहां पूर्वपक्षी कहता है कि यह प्राणकी उत्क्रान्तिका प्रतिषेध शारीरात्मासैं है शरीरसैं नहीं अर्थात् जीवके साथहि प्राण रहता है ॥ १२ ॥

स्पष्टोह्येकेषाम् ॥ १३ ॥

इस सूत्रके स्पष्टः १ हि २ एकेषां ३ यह तीन पद हैं ॥ परब्रह्म वेत्ताकी प्राणसहितही इस देहसैं उत्क्रान्ति होती है औ प्राणकी उत्क्रान्तिका प्रतिषेध है सो देहीकों लेके है देहकों लके नहीं यह पूर्वपक्षीका कहना ठीक नहीं काहेतें कोई शाखावालोंके प्राणकी उत्क्रान्तिका प्रतिषेध देहकों लेके स्पष्टही भान होता है अर्थात् ज्ञानीके प्राणकी उत्क्रान्ति इस देहसैं होतीही नहीं ॥ १३ ॥

स्मर्यतेच ॥ १४ ॥

इस सूत्रके स्मर्यंते १ च २ यह दो पद हैं ॥ ब्रह्मवेत्ताकी गति औ उत्क्रान्तिके अभावका महाभारतमें स्मरण होता है। सर्वभूतात्मभूतस्य सम्यग्भूतानि पश्यतः ॥ देवाअपिमार्गेमुह्यन्त्यपदस्यपदैषिणः। इति। अस्यार्थः। जो सर्व भूतोंका आत्मभूत है औ सर्व भूतोंकों आत्मभाव-करके देखता है औ प्राप्य स्वर्गादि पद करके रहित है ऐस ज्ञानीके

पदकी इच्छा करनेंवाले देव हैं सो भी तिसके मार्गके विषै मोहकों प्राप्त होते हैं अर्थात् तिसके मार्गकों नहीं जानते हैं ॥ १४ ॥

तानिपरेतथाह्याह ॥ १५ ॥

इस सूत्रके तानि १ परे २ तथा ३ हि ४ आह ५ यह पांच पद हैं॥ परब्रह्मवेत्ताके प्राणशब्दवाच्य श्रोत्रादिक इन्द्रिय हैं सो तिस परमात्माके विषै लीन होते हैं तैसैंही श्रुति कहती है कि जैसैं नदी समुद्रकों प्राप्त होके समुद्रमेंही लीन होती हैं तैसैं सारे ब्रह्म देखनेंवालेकी प्राण श्रद्धादिक षोडशकला हैं सो ज्ञेयपुरुषकों प्राप्त होके पुरुषके विषैही लीन होती हैं ॥ १५ ॥

अविभागोवचनात् ॥ १६ ॥

इस सूत्रके अविभागः १ वचनात् २ यह दो पद हैं ॥ विद्वान्की प्राण श्रद्धादि षोडश कलाका लय है सो अविद्वान्की न्याईं पुनर्जन्मका हेतु है वा नहीं तहां कहते हैं कि पुनर्जन्मका हेतु नहीं है काहेतें जैसैं समुद्रमें लीन होये पीछे नदीके नाम रूप नहीं रहते हैं सर्व समुद्रही कहाता है तैसैं जब षोडश कलाका लय होता है तब पुरुष अकल अमृतही कहाता है ॥ १६ ॥

तदोकोऽग्रज्वलनंतत्प्रकाशितद्वारोविद्यासामर्थ्या-त्तच्छेषगत्यनुस्मृतियोगाच्चहार्दानुगृहीतः शताधिकया ॥ १७ ॥

इस सूत्रके तदोकोऽग्रज्वलनं १ तत्प्रकाशितद्वारः २ विद्यासामर्थ्यात् ३ तच्छेषगत्यनुस्मृतियोगात् ४ च ५ हार्दानुगृहीतः ६ शताधिकया ७ यह सात पद हैं ॥ प्रसंगसैं प्राप्त भई परविद्याका विचार करके अब अपरविद्याका विचार करते हैं मरणकालमें उपसंहृत होगई हैं वागादि सर्व इन्द्रिय जिसकी ऐसे जीवात्माका हृदय स्थान है तिस हृदयका अग्र

जो नाडीयोंका मुख तिसका ज्वलन जो भावि फलका स्फुरणरूप प्रद्योतन तिस प्रद्योतन करके जब जीवात्मा निकलता है यद्यपि तब चक्षुसैं वा मूर्धासैं वा और किसी शरीरके द्वारसैं निकलताहै यद्यपि हृद्याग्र प्रद्योतन औ तिस करके प्रकाशित चक्षुरादि द्वार विद्वान् अविद्वान्के समान हैं तथापि विद्वान् विद्याके सामर्थ्यसैं मूर्धस्थानसैंही निकलता है औ अविद्वान् चक्षुरादि स्थानसैं निकलताहै औ विद्याकी शेष जो मूर्धामें होनेंवाली सुषम्नाख्यनाडीद्वारा गति तिसका जो अनुस्मरण तिसके योगसैं औ हृदयमें स्थित जो उपास्य ब्रह्म तिसके अनुग्रहसैं ब्रह्मभावकों प्राप्त भया विद्वान् है सो सौं नाडीसैं अधिक सुषुम्नाख्य नाडीद्वारा निकलता है औ अविद्वान् दूसरी नाडीद्वारा निकलताहै १७

रश्म्यनुसारी ॥ १८ ॥

इस सूत्रका रश्म्यनुसारी १ यह एकही पद है ॥ प्रारब्ध कर्मके अंतमें विद्वान्का उत्क्रमण होता है सो नाडी संबंधि रश्मीके अनुसार होता है तहां संशय है कि दिनके विषै वा रात्रिके विषै जो विद्वान् मरता है सो रश्मीके अनुसारी होता है वा दिनके विषै मरनेंवालाही होता है तहां कहते हैं कि दिनमें मरे वा रात्रिमें मरे रश्मीके अनुसारी ही होता है यह नियम है ॥ १८ ॥

निशिनेतिचेन्नसम्बन्धस्ययावद्देहभावित्वात् दर्शयतिच ॥ १९ ॥

इस सूत्रके निशि १ न २ इति ३ चेत् ४ न ५ सम्बन्धस्य ६ यावद्देहभावित्वात् ७ दर्शयति ८ च ९ यह नौ पद हैं ॥ नाडी औ रश्मिका संबंध दिनमें ही रहता है इसीसैं जो दिनमें मरता है सो रश्मिके अनुसारी होता है औ जो रात्रिमें मरता है सो रश्मिके अनुसारी नहीं होता है यह कहना ठीक नहीं काहेतें नाडी औ रश्मिका

संबंध देहकी स्थितिपर्यंत बनाही रहता है औ श्रुति भी कहती है कि आदित्यसैं निकली रश्मि नाडीके साथ संबद्ध रहती हैं ॥ १९ ॥

अतश्चायनेऽपिदक्षिणे ॥ २० ॥

इस सूत्रके अतः १ च २ अयने ३ अपि ४ दक्षिणे ५ यह पांच पद हैं ॥ विद्याके फलकों नित्य होनेंतैं जो विद्वान् दक्षिणायनमें मरता है सो भी विद्याके फलकों प्राप्त होता है औ जो भीष्मनें उत्तरायणकी प्रतीक्षा करी है सो अपने पिताके वरसैं प्राप्त भया जो इच्छा पूर्वक मृत्यु तिसकी प्रसिद्धिक वास्ते करी है औ अज्ञानीका मरण उत्तरायणमें श्रेष्ठ है ॥ २० ॥

गीतास्मृतिमें अनावृत्तिके वास्ते अहरादिकाल कहा है तुम रात्रिमें वा दक्षिणायनमें मरनेवालेकी अनावृत्ति कैसैं कहते हो। इस शंकाका समाधान कहते हैं ।

योगिनःप्रतिचस्मर्यतेस्मार्तेचैते ॥ २१ ॥

इस सूत्रके योगिनः १ प्रति २ च ३ स्मर्यते ४ स्मार्ते ५ च ६ एते ७ यह सात पद हैं ॥ जो अनावृत्तिके वास्ते अहरादिकालका स्मरण है सो योगीके प्रति है योग औ सांख्य स्मार्त्त हैं श्रौत नहीं इसीसैं स्मार्त्त अहरादिकालका श्रौत विज्ञानके विषे उपयोग नहीं ॥ २१ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां चतुर्थाध्यायस्य द्वितीयःपादः ॥ २ ॥

चतुर्थाध्याये तृतीयः पादः ।

अर्चिरादिनातत्प्रथितेः ॥ १ ॥

इस सूत्रके अर्चिरादिना १ तत्प्रथितेः २ यह दो पद हैं ॥ पूर्व यह कहा है कि आसृतिके उपक्रमसैं पैहिलें विद्वान् औ अविद्वान्की उत्क्रान्ति समान है औ सृतिनाम मार्गका है इति अब सृतिका विचार

करते हैं कि अनेकश्रुतियोंके विषै अनेकसृति दिखती हैं एक सृति नाडीरश्मिके संबंधसैं कही है औ दुसरी अर्चिरादि सृति कही है औ तिसरी देवयानसैं अग्निलोकको प्राप्त करनेंवाली कही है औ चोथी इस लोकसैं मरे पीछे वायुलोकको प्राप्त करनेंवाली कही है औ पंचमी सूर्यद्वार करके कही है तहां संशय है कि यह सृति परस्पर भिन्न हैं वा अभिन्न हैं तहां कहते हैं कि अभिन्न हैं काहेतें तिस सृतिकों प्रसिद्ध होनेंतें सर्व विद्वान् अर्चिरादि मार्ग करकेही जाते हैं विशेषणके भेदसैं सृतिका भेद है वास्तव भेद नहीं ॥ १ ॥

वायुमब्दादविशेषविशेषाभ्याम् ॥ २ ॥

इस सूत्रके वायुम् १ अब्दात् २ अविशेषविशेषाभ्याम् ३ यह तीन पद हैं ॥ अब सृतिका क्रम कहते हैं कि विद्वान् उत्क्रान्तिके अनन्तर अर्चिकों प्राप्त होता है इहां अर्चि नाम अग्निका है अर्चिसैं अहकों प्राप्त होता है अहसैं शुक्लपक्षकों प्राप्त होता है शुक्लपक्षसैं उत्तरायणकों प्राप्त होता है उत्तरायणसैं संवत्सरकों प्राप्त होता है संवत्सरसैं आदित्यकों प्राप्त होता है ऐसैं श्रुति कहती है परंतु इहां ऐसैं जानना चाहिये कि संवत्सरसैं वायुकों प्राप्त होके आदित्यकों प्राप्त होता है काहेतें। सवायुलोकम् । इस श्रुतिके विषै अविशेष करके वायुका पाठमात्रही है परंतु अन्य श्रुति विशेष करके कहती है कि इस लोकसैं प्राप्त भये उपासककों वायु अपनें आत्मामें रथचक्रके छिद्रके तुल्य छिद्र देता है तिस छिद्रद्वारा आदित्यकों प्राप्त होता है इति ॥ २ ॥

तडितोऽधिवरुणः सम्बन्धात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके तडितः १ अधिवरुणः २ संबंधात् ३ यह तीन पद हैं ॥ आदित्यसैं चंद्रमाकों प्राप्त होताहै चंद्रमासैं बिजलीकों प्राप्त होताहै इहां बिजलीके उपरि वरुणका संबंध जानना अर्थात् बिजलीसैं वरुणकों

प्राप्त होताहै इसी क्रमसें इंद्रलोक प्रजापतिलोक ब्रह्मलोककी प्राप्ति जाननी ॥ ३ ॥

आतिवाहिकस्तल्लिङ्गात् ॥ ४ ॥

इस सूत्रके आतिवाहिकः १ तल्लिङ्गात् २ यह दो पद हैं ॥ तिन अर्चिरादिकोंके विषै संशय है कि यह मार्गके चिन्ह हैं वा भोगभूमि हैं वा आतिवाहिक हैं तहां कहते हैं कि आतिवाहिक हैं काहेतें श्रुति कहती है कि जो ब्रह्मलोककों जाता है तिसकों अमानव पुरुष लेजाता है सो अमानव पुरुष अर्चिरादिक हैं गमन करनेंवालेकों जो गमन करावै तिसका नाम आतिवाहिक है ॥ ४ ॥

उभयव्यामोहात्तत्सिद्धेः ॥ ५ ॥

इस सूत्रके उभयव्यामोहात् १ तत्सिद्धेः २ यह दो पद हैं ॥ अर्चिरादि मार्ग जानेवाले स्वतंत्र नहीं रहते हैं काहेतें देहके वियोगसें तिनके सर्व इंद्रिय संकुचित होजाते हैं औ अचेतन अर्चिरादिक भी स्वतंत्र नहीं हैं इसीसें अर्चिरादिकोंके अभिमानी देवता तिनकों लेजाते हैं ॥ ५ ॥

वैद्युतेनैव ततस्तच्छ्रुतेः ॥ ६ ॥

इस सूत्रके वैद्युतेन १ एव २ ततः ३ तच्छ्रुतेः ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो अमानव पुरुष बिजलीके लोकमें लेके आया है सोई बिजलीके लोकसें उपरि वरुणादिलोकद्वारा ब्रह्मलोकमें ले जाता है औ श्रुति भी कहती है कि ब्रह्मलोकमें जानेवालेकों अमानवपुरुष लेजाताहै औ वरुणादिक अप्रतिबंधक होनेतें सहायक हैं ॥ ६ ॥

कार्यं बादरिरस्य गत्युपपत्तेः ॥ ७ ॥

इस सूत्रके कार्यं १ बादरिः २ अस्य ३ गत्युपपत्तेः ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो अर्चिरादिमार्ग जाते हैं सो कार्यरूप अपरब्रह्मकों प्राप्त होते हैं

वा मुख्यपरब्रह्मको प्राप्त होतेहैं तहां कहतेहैं कि कार्यरूप सगुण अपरब्रह्मको प्राप्त होतेहैं ऐसें बादरि आचार्य मानताहै काहेतें कार्य ब्रह्मको एक देशमें होनेतें गंतव्यत्वका संभव है औ अकार्यब्रह्मको सर्वगत होनेतें गंतव्यत्वका सभव नहीं ॥ ७ ॥

विशेषितत्वाच्च ॥ ८ ॥

इस सूत्रके विशेषितत्वात् १ च २ यह दो पद हैं ते तेषुब्रह्मलोकेषुपराः परावतोवसन्ति ॥ इस श्रुतिमें बहु वचन लोकशब्द आधारमें सप्तमी इत्यादि विशेषणों करके कार्यब्रह्मको विशेषित होनेतें कार्यब्रह्महीं गमनका विषय है अवस्थाभेदसें कार्यब्रह्मके विषे ही बहुवचनका संभव है औ श्रुतिका अर्थ यह है कि उपासक हैं सो ब्रह्मलोकके विषे दीर्घ आयुवाले हिरण्यगर्भके दीर्घ संवत्सरपर्यंत वसते हैं ॥ ८ ॥

कार्यके विषे ब्रह्मशब्दका प्रयोग नहीं होसकता काहेतें समन्वयाध्यायमें सर्व जगत्का कारण ब्रह्म कहा है इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

सामीप्यात्तुतद्व्यपदेशः ॥ ९ ॥

इस सूत्रके सामीप्यात् १ तु २ तद्व्यपदेशः ३ यह तीन पद हैं ॥ तु शब्द शंकाकी निवृत्तिके अर्थ है परब्रह्मके समीप होनेतें अपर कार्यके विषे ब्रह्म शब्दका प्रयोग है ॥ ९ ॥

कार्यब्रह्मकी प्राप्तिमें अनावृत्तिका श्रवण है सो समीचीन नहीं काहेतें परब्रह्मसें अन्यत्र अनावृत्तिका संभव नहीं इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

कार्यात्ययेतदध्यक्षेणसहातः परमभिधानात् ॥ १० ॥

इस सूत्रके कार्यात्यये १ तदध्यक्षेण २ सह ३ अतः ४ परम् ५ अभिधानात् ६ यह छेह पद हैं ॥ जब कार्यब्रह्मलोकका प्रलय प्राप्त होता है तब कार्यब्रह्मलोकमें सम्यक् ज्ञानको प्राप्त होके हिरण्यगर्भके साथ

इस कार्यब्रह्मलोकसैं परे विष्णुके शुद्ध पदकों प्राप्त होते हैं ऐसैं क्रममुक्तिमें अनावृत्तिका अभिधान है ॥ १० ॥

स्मृतेश्च ॥ ११ ॥

इस सूत्रके स्मृतेः १ च २ यह दो पद हैं ॥ इस अर्थकों स्मृतिभी कहती है कि ॥ ब्रह्मणासहते सर्वे संप्राप्ते प्रतिसञ्चरे ॥ परस्यान्तेकृतात्मानः प्रविशन्तिपरंपदम् ॥ अस्यार्थः । जब महाप्रलय प्राप्त होता है तब हिरण्यगर्भके अन्तमें ब्रह्मलोकनिवासी सम्यक् ज्ञानकों प्राप्त होके सर्व ब्रह्माके साथही परमपदकों प्राप्त होते हैं इति ॥ ११ ॥

परंजैमिनिर्मुख्यत्वात् ॥ १२ ॥

इस सूत्रके परं १ जैमिनिः २ मुख्यत्वात् ३ यह तीन पद हैं ॥ यह पूर्वपक्षसूत्र है परब्रह्मकों मुख्य होनेंतें अर्चिरादिमार्ग जानेवाले परब्रह्मकोंही प्राप्त होते हैं ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है ॥ १२ ॥

दर्शनाच्च ॥ १३ ॥

इस सूत्रके दर्शनात् १ च २ यह दो पद हैं ॥ कठवल्लीके विषै परब्रह्मके प्रकरणमें कहा है कि जो सुषुम्ना नाडीद्वारा उपरकों जाता है सो अमृतकों प्राप्त होता है इति सो अमृत परब्रह्मही है विनाशी कार्यब्रह्म अमृत नहीं है ॥ १३ ॥

नचकार्येप्रतिपत्त्यभिसन्धिः ॥ १४ ॥

इस सूत्रके न १ च २ कार्ये ३ प्रतिपत्त्यभिसंधिः ४ यह च्यार पद हैं ॥ प्रजापतिकी सभा औ वेश्मकों मै प्राप्त होओं ऐसा मरण कालमें उपासकके संकल्प होताहै सो संकल्प कार्यब्रह्मकी प्राप्तिका नहीं किंतु परब्रह्मका प्रकरण होनें तें परब्रह्मकी प्राप्तिका है यह जैमिनिका पूर्वपक्ष है औ सिद्धान्तपक्ष । कार्यंबादरिः । इत्यादि सूत्र करके पूर्व कहा है सो जानना ॥ १४ ॥

अप्रतीकालम्बनान्नयतीतिबादरायणउभ-
यथाऽदोषात्तत्क्रतुश्च ॥ १५ ॥

इस सूत्रके अप्रतीकालम्बनात् १ नयति २ इति ३ बादरायणः ४ उभयथा ५ अदोषात् ६ तत्क्रतुः ७ च ८ यह आठ पद हैं ॥ जो विकारकी उपासना करते हैं तिन सर्वकों अमानव पुरुष ब्रह्मलोकमें लेजाता है वा किसीकों लेजाता है तहां कहते हैं कि जो अप्रतीककी उपासना करता है तिसकों लेजाता है प्रतीककी उपासनावालेकों नहीं लेजाता ऐसें दोनों प्रकार माननेमें कोई दोष नहीं अप्रतीककी उपासनावालेका नाम ब्रह्मक्रतु है तिसीकों क्र ऐश्वर्य मिलता है ऐसें बादरायण आचार्य मानता है ब्रह्मकी उपासनाका नाम अप्रतीकउपासना है औ नाम वाक् मन इत्यादिकोंकी उपासनाका नाम प्रतीकउपासना है ॥ १५ ॥

विशेषंचदर्शयति ॥ १६ ॥

इस सूत्रके विशेषं १ च २ दर्शयति ३ यह तीन पद हैं ॥ नामादि प्रतीक उपासनाके विषै पूर्वपूर्वकी अपेक्षासें उत्तर उत्तरका फल विशेष है काहेतें श्रुति कहती है कि नामसें वाक् श्रेष्ठ है वाक्से मन श्रेष्ठ है ऐसेंही इनकी उपासना औ उपासनाका फल जानना चाहिये औ ब्रह्म एक है तिसकी उपासना औ उपासनाका फलभी एक है ॥ १६ ॥

इति श्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदी-
पिकायां चतुर्थाध्यायस्य तृतीयःपादः ॥ ३ ॥

चतुर्थाध्याये चतुर्थः पादः ।

सम्पाद्याविर्भावःस्वेनशब्दात् ॥ १ ॥

इस सूत्रके सम्पाद्याविर्भावः १ स्वेन २ शब्दात् ३ यह तीन पद हैं ॥ श्रुति कहती है कि परब्रह्मकों जाननेवाला इस शरीरसें ऊठके

परज्योतिकों प्राप्त होके अपनें रूपकरके ब्रह्मभावकों प्राप्त होता है इति तहां संशय है कि स्वर्गादिकोंकी न्याईं आगंतुक विशेषरूप करके प्राप्त होता है वा आत्ममात्र करके प्राप्त होता है तहां कहते हैं कि । स्वेनरूपेणाभिनिष्पद्यते । इस श्रुतिके विषे स्वशब्दका प्रयोग होनेंतें केवल आत्ममात्र करके ही प्राप्त होता है धर्मांतर करके नहीं ॥ १ ॥

मुक्तप्रतिज्ञानात् ॥ २ ॥

इस सूत्रका मुक्तप्रतिज्ञानात् १ यह एकही समस्त पद है॥ जागरितमें देहके आन्ध्यादि धर्म करके युक्त रहता है औ स्वप्नमें पुत्रादिशोकसें रुदन करतेकी न्याईं रहता है औ सुषुप्तिमें विनष्टकी न्याईं रहता है औ मोक्षमें सर्व बन्धसें विनिर्मुक्त शुद्धस्वरूप करके स्थित रहता है इतनी जागरितादि अवस्थात्रयसें मोक्षमें विशेषता है काहेतें । स्वेनरूपेणाभिनिष्पद्यतेसउत्तमः पुरुषः ॥ इत्यादि श्रुतिसें मुक्तात्माका प्रतिज्ञान होता है जो अपने स्वरूपकरके ब्रह्मभावकों प्राप्त होता है सो उत्तम पुरुष है इति श्रुत्यर्थः ॥ २ ॥

आत्माप्रकरणात् ॥ ३ ॥

इस सूत्रके आत्मा १ प्रकरणात् २ यह दो पद हैं ॥ ज्योतिश्शब्दकों कार्यरूप भौतिक ज्योतिके विषे रूढ होनेंतें ज्योतिकों प्राप्त होके ब्रह्मभावकों प्राप्त नहीं होसकता ऐसें पूर्वपक्षी कहता है सो ठीक नहीं काहेतें आत्माका प्रकरण होनेंतें ज्योतिश्शब्दसें इहां आत्माकाही ग्रहण है ॥ ३ ॥

अविभागेनदृष्टत्वात् ॥ ४ ॥

इस सूत्रके अविभागेन १ दृष्टत्वात् २ यह दो पद हैं ॥ जो परब्रह्मकों प्राप्त होता है सो परब्रह्मसें पृथक् स्थित रहता है वा अविभाग करके स्थित रहता है तहां कहते हैं कि अविभाग करके स्थित रहता है

काहेतैं तत्त्वमसि अहं ब्रह्मास्मि इत्यादि महावाक्य अविभाग करकेही आत्माकों दिखाते हैं ॥ ४ ॥

ब्राह्मेणजैमिनिरुपन्यासादिभ्यः ॥ ५ ॥

इस सूत्रके ब्राह्मेण १ जैमिनिः २ उपन्यासादिभ्यः ३ यह तीन पद हैं ॥ यह आत्मा पापरहित है सत्यकाम है सत्यसंकल्प है इत्यादि उपन्यास होनेतैं अपहतपाप्मत्व सत्यकामत्व सत्यसंकल्पत्व सर्वज्ञत्व इत्यादि ब्राह्मरूप करके ब्रह्मभावकों प्राप्त होता है ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है ॥ ५ ॥

चितितन्मात्रेणतदात्मकत्वादित्यौडुलोमिः ॥ ६ ॥

इस सूत्रके चिति १ तन्मात्रेण २ तदात्मकत्वात् ३ इति ४ औडुलोमिः ५ यह पांच पद हैं ॥ यद्यपि अपहतपाप्मत्व सत्यकामत्वादि धर्मोंका भेद करके निर्देश किया है तथापि यह धर्म अत्यन्त असत् है पाप्मत्वादिकोंकी निवृत्ति मात्र चैतन्यही आत्माका स्वरूप है तिस स्वरूप करके ही ब्रह्मभावकों प्राप्त होता है ऐसैं औडुलोमि आचार्य मानता है ॥ ६ ॥

एवमप्युपन्यासात्पूर्वभावादविरोधंबादरायणः ॥ ७ ॥

इस सूत्रके एवम् १ अपि २ उपन्यासात् ३ पूर्वभावात्४ अविरोधं ५ बादरायणः६ यह छेह पद हैं॥ऐसैं पारमार्थिक चैतन्यमात्र स्वरूपका अंगीकार भी है परंतु व्यवहारकी अपेक्षासैं पूर्वउपन्यासादिकों करके प्राप्तभये ब्राह्मऐश्वर्यका विरोध नहीं ऐसैं बादरायण आचार्य मानता है७॥

संकल्पादेवतुतच्छ्रुतेः ॥ ८ ॥

इस सूत्रके संकल्पात् १ एव २ तु ३ तच्छ्रुतेः ४ यह च्यार पद हैं ॥ ऐसैं परविद्याका फल कहा अब अपरविद्याका फल कहते हैं हार्द विद्याके विषे श्रवण होता है कि जब उपासक पितृलोककी कामना

करता है तब इसके संकल्पसैं हीं पितर उठते हैं इति तहां संशय है कि केवल संकल्पही पित्रादिकोंके समुत्थानका हेतु है वा निमित्तान्तर करके सहित हेतु है तहां कहते हैं कि केवल संकल्पही हेतु है काहेतें । संकल्पादेवास्यपितरः समुत्तिष्ठन्ति । यह श्रुति केवल संकल्पसैंही पित्रादिकोंका समुत्थान कहती है ॥ ८ ॥

अतएवचानन्याधिपतिः ॥ ९ ॥

इस सूत्रके अतः १ एव २ च ३ अनन्याधिपतिः ४ यह च्यार पद हैं ॥ अवन्ध्यसंकलपवाला होनेतें विद्वान् अनन्याधिपति होता है अर्थात् इसका अन्य कोई अधिपति नहीं होता है ॥ ९ ॥

अभावंबादरिराहह्येवम् ॥ १० ॥

इस सूत्रके अभावं १ बादरिः २ आह ३ हि ४ एवं ५ यह पांच पद हैं ॥ विद्वान्के संकलपसैं ही पित्रादिकोंका समुत्थान होता है इस कहनेसैं संकलपका साधन मन सिद्धभया परंतु ऐश्वर्यप्राप्तिके अनंतर विद्वान्के शरीर इन्द्रिय होते हैं वा नहीं तहां कहते हैं कि नहीं होते हैं ऐसैं बादरिआचार्य मानता है काहेतें श्रुति कहती है कि जो ब्रह्मलोकमें जाता है सो मन करकेही सर्व कामोंकों देखता है और मानता है॥१०॥

भावंजैमिनिर्विकल्पामननात् ॥ ११ ॥

इस सूत्रके भावं १ जैमिनिः २ विकल्पामननात् ३ यह तीन पद हैं ॥ जैसैं मुक्तके मन रहता है तैसैं शरीर इन्द्रियभी रहते हैं ऐसैं जैमिनि आचार्य मानता है काहेतैं ॥ सएकधाभवतित्रिधाभवति ॥ इत्यादि शास्त्र सो मुक्त एक प्रकारका होता है औ तीन प्रकारका होता है ऐसैं अनेक प्रकारका विकलप कहता है औ शरीरभेदके विना अनेकप्रकारता बनें नहीं ॥ ११ ॥

द्वादशाहवदुभयविधंबादरायणोऽतः ॥ १२ ॥

इस सूत्रके द्वादशाहवत् १ उभयविधं २ बादरायणः ३ अतः ४ यह च्यार पद हैं ॥ जैसैं उभयलिङ्ग श्रुतिका दर्शन होनेंतें द्वादशाह सत्र होता है औ अहीन होता है तैसैं इहांबी उभयलिङ्ग श्रुतिका दर्शन होनेंतैं उभयविधही श्रेष्ठ है ऐसैं बादरायण आचार्य मानता है जब सशरीरताका संकल्प करता है तब सशरीर होता है औ जब अशरीरताका संकल्प करता है तब अशरीर होता है ॥ १२ ॥

तन्वभावेसन्ध्यवदुपपद्यते ॥ १३ ॥

इस सूत्रके तन्वभावे १ सन्ध्यवत् २ उपपद्यते ३ यह तीन पद हैं ॥ जब अशरीर होता है तब जैसैं स्वप्नस्थानमें शरीर इन्द्रिय विषयके न होनेंतैंभी ज्ञानमात्रसैं पित्रादिकोंकी कामनावाला होता है तैसैं मोक्षमेंभी जानलेना ॥ १३ ॥

भावेजाग्रद्वत् ॥ १४ ॥

इस सूत्रके भावे १ जाग्रद्वत् २ यह दो पद हैं ॥ जब सशरीर होता है तब जैसैं जाग्रत्में विद्यमान पित्रादिकोंकी कामनावाला होता है तैसैं मोक्षमेंभी होता है ॥ १४ ॥

प्रदीपवदावेशस्तथाहिदर्शयति ॥ १५ ॥

इस सूत्रके प्रदीपवत् १ आवेशः २ तथा ३ हि ४ दर्शयति ५ यह पांच पद हैं ॥ जो यह कहा कि जैमिनिके मतमें मुक्तपुरुषके एक प्रकारका औ अनेक प्रकारका शरीर होता है तहां संशय है कि अनेक प्रकारके शरीर दारुयंत्रकी न्याई निरात्मक होते हैं वा सात्मक होते हैं तहां कहते हैं कि सात्मक होते हैं काहेतें जैसैं एक प्रदीप अनेक वर्त्तिके संयोगसैं अनेक प्रदीपभावकों प्राप्त होता है तैसैं एक विद्वान् अपनें

ऐश्वर्यके योगसें अनेक शरीरभावकों प्राप्त होता है ऐसैंहीं श्रुति कहती है ॥ सएकधा भवति त्रिधाभवति पञ्चधासप्तधानवधा इति ॥ १५ ॥

मुक्तपुरुषके अनेक शरीर प्रवेशादि रूप ऐश्वर्य नहीं हो सकता काहेतें ॥ नतुतद्द्वितीयमस्ति । इत्यादि श्रुति विशेष विज्ञानका अभाव कहती है इस शंकाका समाधान कहते हैं ॥

स्वाप्ययसंपत्त्योरन्यतरापेक्षमाविष्कृतंहि ॥ १६ ॥

इस सूत्रके स्वाप्ययसंपत्त्योः १ अन्यतरापेक्षम् २ आविष्कृतं ३ हि ४ यह च्यार पद हैं ॥ कहीं सुषुप्ति अवस्थाकी अपेक्षासैं औ कहीं कैवल्य मुक्तिकी अपेक्षासैं विशेष विज्ञानका अभाव कहा है क्रममुक्तिकी अपेक्षासैं नहीं ॥ १६ ॥

जगद्व्यापारवर्ज्जंप्रकरणादसन्निहितत्वाच्च ॥ १७ ॥

इस सूत्रके जगद्व्यापारवर्ज्जं १ प्रकरणात् २ असन्निहितत्वात् ३ च ४ यह च्यार पद हैं ॥ जो सगुणब्रह्मकी उपासनासैं मन करके सहित ईश्वरभावकों प्राप्त होते हैं तिनका ऐश्वर्य स्वतंत्र होता है वा परतंत्र होता है तहां कहते हैं कि जगत्की उत्पत्ति स्थिति प्रलयरूप व्यापारकों वर्जके अन्य सर्व अणिमादि ऐश्वर्य स्वतंत्र होता है औ जगत्का उत्पत्त्यादि व्यापार नित्यसिद्ध ईश्वरके अधीन है काहेतें उत्पत्त्यादि प्रकरण ईश्वरका है औ ईश्वर अन्य पुरुषोंके असन्निहित है ईश्वरकों जानके ही अन्य पुरुष अणिमादि ऐश्वर्यकों प्राप्त होता है १७॥

प्रत्यक्षोपदेशादितिचेन्नाधिकारिकमण्डलस्थोक्तेः १८॥

इस सूत्रके प्रत्यक्षोपदेशात् १ इति २ चेत् ३ न ४ आधिकारिकमण्डलस्थोक्तेः ५ यह पांच पद हैं॥प्राप्नोति स्वाराज्यम्॥इत्यादि प्रत्यक्ष उपदेश होनेतें विद्वान्का ऐश्वर्य स्वतंत्र होता है यह कहना ठीक नहीं

काहेतैं जो सवितृमण्डलादि विशेष स्थानके विषै आधिकारिक परमेश्वर स्थित है तिसके अधीन स्वाराज्यकी प्राप्ति कही है ॥ १८ ॥

विकारावर्त्तिचतथाहिस्थितिमाह ॥ १९ ॥

इस सूत्रके विकारावर्त्ति १ च २ तथा ३ हि ४ स्थितिम् ५ आह ६ यह छेह पद हैं॥ सवितृमण्डलमें स्थित जो नित्यमुक्त परमेश्वर है तिसका रूप केवल विकारवर्त्ति नहीं है किंतु निर्विकार है काहेतैं ॥ पादोऽस्य सर्वाभूतानित्रिपादस्यामृतंदिवि ॥ यह श्रुति परमेश्वरके सविकार औ निर्विकार इन दोनों रूपोंके स्थितिकों कहती है औ इस श्रुतिका अर्थ पूर्व कर आये हैं ॥ १९ ॥

दर्शयतश्चैवंप्रत्यक्षानुमाने ॥ २० ॥

इस सूत्रकें दर्शयतः १ च २ एवं ३ प्रत्यक्षानुमाने ४ यह चार पद हैं ॥ ऐसैंहीं परमज्योति परमात्माके रूपको श्रुति स्मृति कहती हैं ॥ नतत्रसूर्योभातिनचन्द्रतारकंनेमाविद्युतोभान्ति कुतोयमग्निः ॥ यह श्रुति है औ । नतद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ॥ यह गीता स्मृति है तिस परमात्मस्वरूपके विषै सूर्य चन्द्रमा तारा औ यह बिजली इनमें कोई भी नहीं प्रकाशता है तो अलपतेजवाला अग्नि कैसें प्रकाशै इति श्रुत्यर्थः । औ यही अर्थ स्मृतिका जानना ॥ २० ॥

भोगमात्रसाम्यलिंगाच्च ॥ २१ ॥

इस सूत्रके भोगमात्रसाम्यलिङ्गात् १ च २ यह दो पद हैं॥ जो उपासक ब्रह्मलोकमें जाता है तिसका ऐश्वर्य स्वतंत्र नहीं है काहेतैं तिसका भोगमात्रही अनादिसिद्ध ईश्वरके भोगके समान है ऐसें श्रवण होता है ॥ २१ ॥

जो उपासकका ऐश्वर्य स्वतंत्र नहीं है तो ऐश्वर्यकों अन्तवाला होनेतैं उपासककी आवृत्ति होनी चाहिये इस शंकाका समाधान कहते हैं भगवान् सूत्रकार ॥

अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात् ॥ २२ ॥

इस सूत्रके अनावृत्तिः १ शब्दात् २ अनावृत्तिः ३ शब्दात् ४ यह चार पद हैं ॥ श्रुति कहती है कि जो नाडीरश्मिके संबंधद्वारा देवयानमार्ग करके ब्रह्मलोककों जाता है तिसकी आवृत्ति नहीं होती है किंतु ब्रह्मलोकके भोग भोगके ब्रह्माके साथही मुक्त होता है इति इहां अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात् यह सूत्रका अभ्यास है सो इस शास्त्रकी परिसमाप्तिकों द्योतन करता है ॥ २२ ॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्ययमुनानाथपूज्यपादशिष्यश्रीमन्मौक्तिकनाथयोगिविरचितायां ब्रह्मसूत्रसारार्थप्रदीपिकायां चतुर्थाध्यायस्य चतुर्थःपादः ॥ ४ ॥

इति चतुर्थोऽध्यायः ४.



पुस्तकमिलनेकापता–खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापखाना, खेतवाडी–बंबई.

अवश्यद्रष्टव्य.

अस्माकं मुद्रणालये वेद-वेदान्त-धर्मशास्त्र-प्रयोग-योग सांख्य-ज्योतिष-पुराणेतिहास--वैद्य-मंत्र-स्तोत्र-कोश-काव्य-चम्पू-नाटकालंकार-संगीत-नीति-कथाग्रंथाः बहवः स्त्रीणां चोपयुक्ता ग्रंथाः, बृहज्ज्योतिषार्णवनामा बहुविधविचित्रचित्रितो ऽयमपूर्वग्रंथः संस्कृतभाषया, हिन्दीमार्वाड्यन्यतरभाषाग्रन्थास्तत्तच्छास्त्राद्यर्थानुवादकाः, चित्राणि, पुस्तकमुद्रणोपयोगिन्यो यावत्यस्सामग्र्यः, स्वस्वलौकिकव्यवहारोपयोगिचित्रचित्रितालिखितपत्रवत्पुस्तकानि च; मुद्रयित्वा प्रकाशन्ते सुलभेन मूल्येन विक्रयाय । येषां यत्राभिरुचिस्तत्तत्पुस्तकाद्युपलब्धये एवं नव्यतया स्वस्वपुस्तकानि सुमुद्रयिषुभिः सुलभयोग्यसौल्येन सीसकाक्षरैः स्वच्छोत्तमोत्तमपत्रेषु मुद्रिततत्पुस्तकानां स्वस्वसमयानुसारेणोपलब्धये च पत्रिकाद्वारातैः प्रेरणीयोऽस्मि । अधिकमस्मदीयसूचीपुस्तकानां भिन्नभिन्नविषयाणां प्रापणेन "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" पत्रिकाप्रापणद्वारा च ज्ञेयमितिशम् ।

KHEMRAJ SHRIKRISHNADAS,
"SHRI VENKATESHWAR" STEAM PRESS
BOMBAY.
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालयाध्यक्ष–मुम्बई.